उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MAHI-102
रीडर - एक

हिन्दी काव्य - I

(आदिकाव्य, भक्तिकाव्य, रीतिकाव्य)
एम.एच.डी.-1 से संबंधित काव्य संकलन

संकलन एवं संपादन
डॉ. सत्यकाम
सहयोग
डॉ0 अखिलेश दुबे

मानविकी विद्यापीठ
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मैदान गढ़ी, नई दिल्ली - 110 068

NMDC-067

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. ओम अवस्थी
गुरू नानक देव
विश्वविद्यालय, अमृतसर

प्रो. गोपाल राय
सी-3, कावेरी इग्नी आवासीय
परिसर मैदानगढ़ी, नई दिल्ली

प्रो. नामवर सिंह
32-ए, शिवालिक अपार्टमेंट
अलकनंदा, नई दिल्ली

प्रो. नित्यानंद तिवारी
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली

प्रो. निर्मला जैन
ए-21/71, कुतुब एन्क्लेव,
फेज-1, गुड़गाँव, हरियाणा

प्रो. प्रेम शंकर
बी-16, सागर विश्वविद्यालय
परिसर सागर

प्रो. मुजीब रिज़वी
220, ज़ाकिर नगर, नई दिल्ली

प्रो. मैनेजर पाण्डेय
जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. रामस्वरूप चतुर्वेदी
3, बैंक रोड, इलाहाबाद

प्रो. लल्लन राय
3, प्रीत विला, समर हिल
शिमला

प्रो. शिवकुमार मिश्र
एफ-17, मानसरोवर पार्क कालोनी
पंचायती हॉस्पिटल मार्ग
वल्लभ विद्यानगर, गुजरात

स्व. शिव प्रसाद सिंह

प्रो. सूरजभान सिंह
आई-27, नारायणा विहार
नई दिल्ली

संकाय सदस्य
प्रो. वी.रा. जगन्नाथन
डॉ. जवरीमल्ल पारख
डॉ. रीता रानी पालीवाल
डॉ. सत्यकाम
डॉ. राकेश वत्स
डॉ. शत्रुघ्न कुमार
डॉ. नीलम फारूकी
श्रीमती स्मिता चतुर्वेदी
डॉ. विनल खांडेकर

अक्टूबर, 2003 (पुनः मुद्रण)

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2000

ISBN- 81-7605-930-7

सर्वाधिकार सुरक्षित । इस सामग्री के किसी भी अंश को इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अनुमति से पुनः मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित, 2024.

मुद्रक : के. सी. प्रिन्टिंग एण्ड एलाइड वर्क्स, पंचवटी, मथुरा – 281003.

NHDC-067

भूमिका

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के एम.ए. हिन्दी कार्यक्रम के पहले पाठ्यक्रम हिंदी काव्य-1 के विद्यार्थियों के लिए तैयार की गई है। इसमें आदिकालीन, भक्तिकालीन और रीतिकालीन प्रमुख कवियों की प्रतिनिधि रचनाओं को संकलित किया गया है।

यह संकलन दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। हिंदी काव्य-1 का उद्देश्य आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल में लिखी गई प्रमुख कविताओं का अध्ययन करना है। यह पाठ्यपुस्तक इसी दृष्टि से तैयार की गई है। इसमें कविताओं को संकलित मात्र नहीं कर दिया गया है बल्कि कविताओं को पढ़ाने और समझाने का प्रयत्न किया गया है। इस संकलन को तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थी शिक्षक से दूर बैठा है। उसे कविता पढ़ानी है। इसलिए इस पुस्तक को तैयार करते समय स्वाध्याय अध्ययन पद्धति को केंद्र में रखा गया है।

प्रत्येक कवि की प्रतिनिधि रचना का अध्ययन करनें के लिए इस पाठ्यपुस्तक में कवि परिचय, पाठ का सार और कविता को समझने के संकेत दिए गए हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर फुटनोट में कठिन शब्दों के अर्थ दिए गए हैं। आदिकालीन, भक्तिकालीन और रीतिकालीन हिंदी भाषा को समझने में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए पाद टिप्पणियां दी गई हैं। यदि पाद टिप्पणी से भी अर्थ न निकले तो प्रत्येक पाठ के आरंभ में दिए गए संकेत को पढ़ें। इससे कविता का अर्थ स्पष्ट हो जायेगा।

इस पाठ्यपुस्तक में आदिकाल से पृथ्वीराज रासो के 'कनवज्ज समय' और विद्यापति पदावली को शामिल किया गया है। ये दोनों ही रचनाएँ आदिकालीन हिंदी साहित्य की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं। पूर्व मध्यकाल या भक्तिकालीन हिंदी साहित्य के प्रमुख कवियों - कबीर, जायसी, तुलसी, सूर और मीरा - की रचनाओं का आप अध्ययन करेंगे। रीतिकालीन हिंदी साहित्य के अंतर्गत बिहारी, घनानंद और पद्माकर की चुनी हुई कविताओं को इस पाठ्यपुस्तक में अध्ययन के लिए संग्रहीत किया गया है। इस पाठ्यपुस्तक को पढ़कर आपको आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल में लिखी हिंदी कविताओं के स्वरूप, प्रकृति, विषय, भाषा और शिल्प को समझने में मदद मिलेगी।

पठित अंश की व्याख्या

सत्रीय कार्यों और सत्रांत परीक्षा में पृथ्वीराज रासो से उद्धृत 'कनवज्ज समय' और विद्यापति पदावली के संग्रहीत अंशों की व्याख्या नहीं पूछी जाएगी। भक्तिकालीन कवि कबीर, जायसी, तुलसी, सूर और मीरा तथा रीतिकालीन कवि बिहारी, घनानंद और पद्‌माकर की कविताओं की व्याख्या पूछी जाएगी।

आप स्नातकोत्तर स्तर के विद्यार्थी हैं। इसलिए हम आपको व्याख्या करना अलग से नहीं बता रहे हैं। हम यह मानकर चल रहे हैं कि आप उद्धृत अंशों की व्याख्या स्वयं कर सकेंगे। फिर भी हम यह बता देना चाहते हैं कि व्याख्या में निम्नलिखित पक्षों का उल्लेख अवश्य होना चाहिए।

संदर्भ – इसके अंतर्गत कवि का नाम, परिचय, कविता की पृष्ठभूमि आदि का जिक्र होना चाहिए। अगर उद्धृत पंक्तियों का संबंध किसी घटना से है तो उसका उल्लेख आवश्यक है। उदाहरण स्वरूप आपको यह बताना चाहिए कि परशुराम-लक्ष्मण-संवाद, नागमती वियोग खंड, सिंहलद्वीप खंड से पंक्तियाँ उद्धृत हैं। संवाद किनके बीच चल रहा है, कौन पात्र अपनी संवेदना प्रकट कर रहा है आदि तथ्यों का उल्लेख संदर्भ के अंतर्गत होना चाहिए। मुक्तक पदों जैसे बिहारी, घनानंद, पदमाकर की कविताओं की व्याख्या में भी संदर्भ का महत्व है। जैसे इनमें यह बताना उपयोगी होगा कि कवि ने नायिका की किस मनःस्थिति का चित्रण किया है।

व्याख्या – भक्तिकालीन और रीतिकालीन काव्य की भाषा का प्रयोग आज हम नहीं करते। अतः इनमें प्रयुक्त शब्दों को समझने में कठिनाई होती है। भक्तिकालीन कवि जहाँ पारिभाषिक शब्दावली का इस्तेमाल करते हैं वहीं रीतिकालीन कवि काव्य-रूढ़ियों का प्रयोग करते हैं। इसलिए इन पुरानी कविताओं की व्याख्या करने से पहले इनका अर्थ स्पष्ट करना आवश्यक होता है। इससे यह पता चलता है कि आप कविता का अर्थ समझते हैं। कविता का सामान्य अर्थ बताकर उसमें छिपी लक्षणा, व्यंजना और गूढ़ार्थ को स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है।

अंत में उद्धृत अंश की भाषागत विशेषताओं पर भी टिप्पणी की जानी चाहिए। आपको यह भी बताना चाहिए कि कविता किसी छंद में लिखी गई है, किन अलंकारों का प्रयोग किया गया है – आदि। व्याख्या अभ्यास की माँग करती है। आपने स्नातक स्तर पर मध्यकालीन और रीतिकालीन कविताओं की व्याख्या की होगी। स्नातकोत्तर स्तर पर व्याख्या करते समय आप कविता के गूढ़ार्थ पर विशेष ध्यान दें। इसमें आपकी कविता की विश्लेषण क्षमता की भी जाँच होगी। कविता के बारे में आप अपना मत भी प्रकट कर सकते हैं। ध्यान दें – केवल कविता का भावार्थ लिखना ही व्याख्या नहीं है।

NMDC-067

आपकी सुविधा के लिए पाठ के साथ-साथ पाद टिप्पणियाँ दी गई हैं। इसके अलावा प्रत्येक कविता के पहले बतौर भूमिका कविता का सार भी प्रस्तुत किया गया है।

व्याख्येय अंश

कबीर

पद सं. - 1,2,3,4,5,6,9,10,14,15,17,21,22,23,24,25

जायसी, पदमावत

नखशिख खंड पद सं0 1 से 10; सिंहलद्वीप खंड पद सं0 - 1 से 5;

नागमती वियोग खंड पद सं0 - 1 से 5

तुलसीदास

परशुराम लक्ष्मण संवाद - पद सं. - 1 से 10; कवितावली 1,2,3,4,9;

विनय पत्रिका 1,2,4,8,9

सूरदास

विनय के पद पद सं0 1,2,8,12,15 ; वात्सल्य - 1,5,6,9,11,13,16,17,20

भ्रमरगीत - पद सं0 1,3,5,6,7,10,12,16,23,26

मीराबाई

पद सं0 6,7,8,10,12,13,14,16

बिहारी

पद सं01,6,10,11,19,20,24,27,29,33,35,38,43,44,56

घनानंद

पद सं02,3,4,7,11,17,19,25

पद्माकर

पद सं0 1,2,10,12,13,24,25

NMDC-067

इन कविताओं को समझने में यदि आपको दिक्कत हो तो आप निम्नलिखित पुस्तकों की मदद ले सकते हैं:

1. जायसी ग्रंथावली, संपादक-रामचंद्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
2. कबीर, हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन
3. रामचरित मानस, कवितावली, विनय पत्रिका, गीता प्रेस, गोरखपुर
4. सूरदास, रामचंद्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
5. मीरा, मीरापदावली, विश्वनाथ त्रिपाठी
6. बिहारी-रत्नाकर, श्री जगन्नाथ दास रत्नाकर, ग्रंथकार प्रकाशन, वाराणसी
7. घनानंद कवित्त, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, संजय बुक सटर, वाराणसी
8. पद्माकर ग्रंथावली, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
9. आदिकालीन हिंदी शब्दकोश, सं०-भोलानाथ तिवारी, रिसाल सिंह, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

अनुक्रम

	पृष्ठ संख्या
चन्दबरदाई	9
कनवज्ज समय (पृथ्वीराज रासो)	
विद्यापति	21
विद्यापति पदावली	
कबीर	32
कबीर वाणी	
मलिक मुहम्मद जायसी	44
पदमावत :	
नखशिख खंड	
सिंहलद्वीप खंड	
नागमती वियोग खंड	
गोस्वामी तुलसीदास	66
रामचरितमानस : परशुराम-लक्ष्मण संवाद	
कवितावली : उत्तरकाण्ड	
विनयपत्रिका	
सूरदास	91
विनय के पद	
वात्सल्य	
भ्रमरगीत	
मीराबाई	122
मीरा के पद	
बिहारी	131
बिहारी के दोहे	
घनानंद	142
घनानंद कवित्त	
पद्माकर	154
पद्माकर का काव्य	

NMDC-067

चन्दबरदाई

चन्दबरदाई को पृथ्वीराज रासो का रचयिता माना जाता है। उन्होंने 14वीं शताब्दी के पूर्व पृथ्वीराज चौहान पर काव्य रचा था। पृथ्वीराज रासो में दिए गए विवरण के अनुसार चन्दबरदाई और पृथ्वीराज का जन्म एक ही दिन हुआ था और उनकी मृत्यु भी एक ही दिन हुई थी। रासो में इस बात का उल्लेख मिलता है कि गजनी में पृथ्वीराज चौहान और कवि चन्द एक दूसरे को कटार मारकर मर गए थे। हालांकि इतिहास में कहीं भी इस घटना का उल्लेख नहीं मिलता। पृथ्वीराज रासो में इस प्रकार के उल्लेख से यह तो पता चलता है कि पृथ्वीराज से चन्द का बहुत घनिष्ठ संबंध था और सभी महत्वपूर्ण अवसरों पर राजा उसे अपने साथ रखता था।

पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो एक महत्वपूर्ण साहित्यिक कृति है। इसमें पृथ्वीराज चौहान की शौर्य-गाथा वर्णित है। भारत में सातवीं-आठवीं शताब्दी से ही ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर कविता लिखने की प्रथा चल पड़ी थी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं कि "परन्तु भारतीय कवियों ने ऐतिहासिक नाम भर लिया, शैली उनकी वही पुरानी रही जिसमें काव्य-निर्माण की ओर अधिक ध्यान था, विवरण संग्रह की ओर कम, कल्पना विकास का अधिक मान था, तथ्यनिरूपण का कम, संभावनाओं की ओर अधिक रूचि थी, घटना की ओर कम-- ।" इसलिए इन ग्रंथों में इतिहास से अधिक कल्पना का योगदान है। पृथ्वीराज रासो भी इसका अपवाद नहीं है। चंदबरदाई ने पृथ्वीराज रासो की रचना शुक और शुकी के संवाद के रूप में की है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार "काशी नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो में ढाई हजार पृष्ठ हैं जो 69 सर्गों मे विभक्त है। सबसे बड़ा समय कनवज्ज युद्ध है जो संभवत: रासो का मूल कथानक है।" इस पाठ्यपुस्तक में हम 'कनवज्ज समय' के कुछ अंशों का अध्ययन करने जा रहे हैं।

कनवज्ज समय का सार

'कनवज्ज समय' पृथ्वीराज रासो महाकाव्य का एक महत्वपूर्ण खंड है। इस खंड में रासोकार ने उत्तर भारत के महत्वपूर्ण शासक जयचंद की पुत्री संयोगिता के विवाह के आयोजन का वर्णन किया है। विवाह स्वयंवर पर आधारित था। जयचंद और पृथ्वीराज में पुरानी शत्रुता थी। इसीलिए वह स्वयंवर में सभी राजाओं को आमंत्रित करता है, लेकिन पृथ्वीराज को नीचा दिखाने के लिए उनकी प्रतिमा बनवाकर दरवाजे पर लगवा देता है। संयोगिता ने पृथ्वीराज की वीरता के बारे में सुन रखा था और वह उन पर मुग्ध थी। वह जयमाल किसी अन्य आमंत्रित राजा के गले में न डालकर दरवाजे पर स्थापित

पृथ्वीराज की प्रतिमा को पहना देती है। जयचंद को जब इस घटना की जानकारी मिलती है तो वह क्रोध में आकर अपनी पुत्री को दासियों के साथ गंगा के किनारे के महल में निर्वासित कर देता है। पृथ्वीराज को स्वयंवर की घटना के बारे में सूचना थी। उसे संयोगिता के प्रति आकर्षण हुआ और वह जयचंद द्वारा किए गए अपने अपमान का बदला लेने तथा संयोगिता को प्राप्त करने के लिए अपने कवि मित्र चन्द बरदाई के साथ कन्नौज जाने की तैयारी करता है। पृथ्वीराज अपने साथ अपनी विशाल सेना भी ले जाता है। उसकी सेना में बहुत सारे सामंत, बड़े-बड़े राजपूत योद्धा शामिल थे। उसकी सेना इतनी विशाल थी कि उसके चलने से आकाश तक धूल से ढंक गया था। सेना की विशालता के कारण ही पृथ्वीराज को 'दल-पंगुर' की उपाधि मिली थी। (देखिए पद संख्या - 1,2,3)।

पृथ्वीराज अपनी सेना के साथ कन्नौज की तरफ बढ़ता है। मार्ग में शुभ शकुन होते हैं (देखिए पद सं. 4) गंगा और यमुना जैसा पवित्र नदियां भी मिलती हैं। कवि ने इन नदियों का विस्तृत वर्णन किया है। (पद संख्या 6-12) प्रात: काल कन्नौज नगर दिखाई पड़ता है। कवि ने कन्नौज के वैभव का सुंदर चित्र उपस्थित किया है। वह कहता है कि, कन्नौज में बहुमूल्य रत्नों व धातुओं की ढेरों दुकाने हैं जहाँ मोती, माणिक्य आदि प्रचुरता से उपलब्ध हैं। (देखिए पद संख्या-14,15) नगर वैभव के वर्णन के बाद चन्दबरदाई पृथ्वीराज के साथ जयचंद के दरवाजे पर पहुँचता है। वहां उसे कोतवाल मिलता है और वह उन दोनों को जयचंद के दरबार में पहुँचाता है। दरबार में जयचंद को अपना परिचय देता है, और दिल्ली से आने की बात कहता है। जयचंद को चन्दबरदाई ने आशीर्वाद भी दिया। इसके बाद जयचंद और चन्दबरदाई के बीच लंबा वार्तालाप चलता है। चन्दबरदाई पृथ्वीराज की प्रशंसा जयचंद को सुनाता है। जयचंद समझ जाता है कि, यह कवि पृथ्वीराज का मित्र चन्दबरदाई है और वह उसे सम्मान के साथ अपने पास बैठाता है। उससे पृथ्वीराज के बारे में जानने की कोशिश करता है। वह उससे पूछता है कि शाकंभरी नरेश पृथ्वीराज कैसा शूर है उसकी सेना कितनी बड़ी है? उसने कितने युद्ध जीते हैं। चन्दबरदाई विस्तार से उसे सब कुछ बता देता है। पृथ्वीराज की उम्र छत्तीस वर्ष बताता है (देखिए पद संख्या- 17,18,19,20,21,22,23,24)।

इस बीच जयचंद के दरबार मे एक नाटकीय घटना घटती है। पृथ्वीराज की एक दासी जयचंद के यहाँ रहने लगी थी। उसके केश खुले रहते थे, लेकिन पृथ्वीराज को देखते ही उसने अपना सिर ढक लिया। इस घटना से जयच्चंद शंकित हुआ कि हो न हो यह व्यक्ति पृथ्वीराज ही हो। किसी ने राय दी कि हो सकता है, दासी ने चंद को देखकर सिर ढंका हो, क्योंकि चन्दबरदाई पृथ्वीराज का अभिन्न है। चंद और पृथ्वीराज को अच्छे आवास में ठहराया जाता है। पृथ्वीराज का भेद अधिक समय तक गोपनीय नहीं रह पाता। उसे पहचान लिया जाता है। और कन्नौज में उपस्थित जानकर जयचंद आक्रमण करने की आज्ञा दे देता हैं।

NMDC-067

पृथ्वीराज और संयोगिता का पारस्परिक मिलन इसी युद्ध की पृष्ठभूमि में होता है। पृथ्वीराज अपने सामंतों से युद्ध क्षेत्र में जाने के लिए कहकर स्वयं नगर देखने निकल पड़ता है। इसी क्रम में वह गंगा के किनारे आता है। यहाँ वह मछलियों को मोती चुगाता है (दिखिए पद संख्या-25,26) संयोगिता अपनी दासियों के साथ गंगा के किनारे स्थित महल में ही थी। उसकी एक दासी झरोखे से पृथ्वीराज को देखती है और संयोगिता को बताती है। पृथ्वीराज को देखकर वह व्याकुल हो जाती है। यहाँ कवि ने संयोगिता की सखियों या दासियों द्वारा पृथ्वीराज के विशिष्ट रूप सौंदर्य का वर्णन भी किया है। कोई दासी कहती है कि यह मनुष्य है याकि कोई देवता है या कामहर (शिव) जो कि गंगा के किनारे रहता है। इसी तरह सभी अपना अपना मत रखती हैं। अंत में इस निष्कर्ष पर आती हैं कि यह तो पृथ्वीराज है। यह सुनकर संयोगिता के शरीर में स्वेद, कंपन व स्वर भंग जैसे लक्षण प्रकट होते हैं जिनसे उसका पृथ्वीराज के प्रति अनुराग अभिव्यक्त होता है। उसे डर भी लगता है कि पृथ्वीराज उसे हृदय से स्वीकार नहीं करेगा तो क्या होगा? क्या वह उसका आजीवन साथ निभाएग? ऐसे स्त्री-सुलभ सवाल उसके मन में उठते हैं। पृथ्वीराज उसे विश्वास दिलाता है और उसकी बाँह पकड़ कर अपने साथ, घोड़े पर बिठा लेता है (दिखिए पद संख्या-27,28,29,30,32,33,34)। इसके बाद जयचंद और पृथ्वीराज की सेनाओं में जमकर युद्ध होता है। युद्ध वर्णन रासो ग्रंथों का प्रमुख आकर्षण रहा है। चन्दबरदाई ने भी पूर्ण मनोयोग से युद्ध का चित्र खींचा है। युद्ध की विकरालता और उसकी प्रचंडता को उभारने में कवि को अच्छी सफलता मिली है। युद्ध वर्णन के लिए कवि ने बहुत सारे छंद रचे हैं। अंत में पृथ्वीराज, संयोगिता को लेकर दिल्ली पहुँचते है। इसके बाद कवि ने पृथ्वीराज और संयोगिता के केलि-विलास का वर्णन किया है। (दिखिए पद संख्या - 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50)

कनवज्ज समय

अथ राजा प्रिथीराज-प्रयाणारमाभ्यते

कन्नौज के लिए पृथ्वीराज चौहान का ससैन्य प्रस्थान

दूहा

ग्यारह सइ इक्कावनइ चैत तीज रविवार।
कनवज दिख्खण कारणइ चालिउ सिंभरिवार[1] ।।1।।
सत सुभट ले संमुहो[2] पंगुराय[3] ग्रिह[4] साज।
कै जानइ कवि चंद अरु कै जानै प्रिथिराज ।।2।।

कवित्त

कनवजहे जयचंद चल्यो दिल्लेसुर दिख्यन।
चंद वरदिया साथ बहुत सामंत सूर घन।।
चाहुवान राठोंर जाति पुंडीर गुहिल्लय।
बड गुज्जर पांवर चलै जांगरां सु हल्लय।।
कूरंभ[5] सहित भूपति चल्यो उडिय रेणु किन्हो नभो।
इक इक्कू लख वीर आंगमइ लिये साथ रजपूत सो ।।3।।

दूहा

राज सगुन[6] साम्हो हुवो ध्रुव नरसिंघ दहार।
म्रिग[7] दक्खिण खिणि[8] खिणि खुरति[9] चरहि न संभरवारि। ।।4।।
सुरति[10] साय[11] सारस सवद[12] उदय सवदला[13] भानु।
परनि भज्ज[14] प्रतिहार[15] ज्यूँ करहि त कज्ज प्रवान[16]। ।।5।।

पाद टिप्पणी

1. शकंभरी नरेश/पृथ्वीराज 2. सम्मुख 3. पृथ्वीराज 4. गृह (सेना के अर्थ में) 5. पृथ्वीराज का सरदार 6. शकुन 7. हिरन 8. क्षण 9. खुर 10. ध्यान, स्मरण 11. साथ 12. शब्द 13. चारो ओर 14. भागना 15. सेवक 16. प्रमाण

NMDC-067

काव्य

बंभे[17] कंड कमंडले कलिमले कांतिहर: क: कवि:।
तं तुष्टां त्रैलोक्य तुंग[18] गहनी तुं गीयसे सांमवी[19]।।
अर्ध विष्णु अगामिनि[20] अविज्ञले अस्टष्ट ज्वालाहवी[21]।
जंजाले जग मार पार करनी दरसाइ सा जाहन्वी[22]। ।।6।।

गंगा नदी का वर्णन

त्रोटक

न्रिप थिक्कति[23] गंगजि अंग सिता[24]।
मुनि मंजन नीर जि अंग हिता।।
तट मंडल जा भमरे भमरं[25]।
भव संगति जे अमरे अमरं। ।।7।।

गुन गंधव[26] ग्रंधव नीति सुनी।
दिवि[27] भूमि पयालह[28] दिव्व[29] धुनी।।
तल ताल तमालह साल वटी।
विचि अंब गंभीर[30] जंभीर[31] वटी। ।।8।।

सेना की विशालता का वर्णन

कल केलि[32] स जंबु[33] स निंबवरा[34]।
गत पाप स आपस मे सियरा[35]।।
सुभ वाय[36] तरंग सुरंग[37] धरे।
उर हार तु मुत्तिय[38] जामु[39] हरै। ।।9।।

सुर ईस सु दीस सु सादरनं।
मिलि अंभसु[40] रंभसु[41] सागरनं।।
जसु[42] दंसन[43] जंबुयदीप[44] हलं[45]।
किस मंगन[46] जाथइ पाप मलं। ।।10।।

गंगा की महिमा

---

17. *ब्रह्मा* 18. *शिखर* 19. *गंगा* 20. *गंगा* 21. *गंगा* 22. *गंगा* 23. *देखना* 24. *सफेद, धवल* 25. *भौरा* 26. *गंधर्व* 27. *दिशा* 28. *पाताल* 29. *दिव्य* 30. *गंभीर* 31. *नीबू* 32. *क्रीडा* 33. *जामुन* 34. *नींबू* 35. *शीतल* 36. *वायु* 37. *सुंदर रंग* 38. *मुक्ति* 39. *कष्ट* 40. *पानी* 41. *वेग* 42. *यश* 43. *दर्शन* 44. *जंबूद्वीप* 45. *प्रवेश* 46. *माँगना*

NMDC-067

हर गंगे हर गंगे हर गंगे। — गंगा की उपासना
तमि तरल तरंगे अघ[47] क्रितभंगे[48] क्रितचंगे[49]।।
हर सिर परसंगे[50] जटन विलंगे[51] अरधंगे[52]।
गिरि तुंग तरंगे विहरित[53] दंगे[54] जल गंगे। ।। 11 ।।

गन गंध्रव छंदे जग जस चंदे मुख चंदे।
मति उच गति मंदे वरसत नंदे गत वंदे।
वपु अप विलसंदे जमभ्रित जंदे कह गंदे। ।। 12 ।।

दूहा

हय[55] गय[56] दल सुंदर सुहर जे वरनह बहुवार।
यह चरित्त कब लगि गिनै चलउ संदेह दुवार[57]। ।। 13 ।। — सेना का वर्णन

छन्द जाति

दिख्खियं जाइ संदेह सोहं। — पृथ्वीराज चौहान
अर्क[58] सा कोटि संपुन्न[59] दोहं[60]।। — और उसके शिविर
मंडपै जासु सोवन्न[61] गेहं। — का वर्णन
मुत्तियं[62] छित्त[63] दीसै न छेहं[64]। ।। 14 ।।

स्रोन[65] सत एक महि महिख[66] रत्ती[67]।
प्रात पूजंत नर नेम[68] अत्ती[69]।।
पंड[70] भारत्थ[71] विहु[72] वार साजी।
दिख्ख चहुवान कलिका[73] गाजी। ।। 15 ।।

---

47. *पाप* 48. *नाश करने वाली* 49. *स्वस्थ करने वाली* 50. *विराजमान* 51. *लिपटी हुई* 52. *अर्धांग* 53. *बृहद्* 54. *चकित करने वाली* 55. *घोड़ा* 56. *हाथी* 57. *दरवाजा* 58. 59. *संपन्न* 60. *दोनो* 61. *सोने का हार* 62. *मोती* 63. *छत्र* 64. *छेद* 65. *श्रवण, सुन* 66. *राजा* 67. *अनुरक्त* 68. *श्रद्धा* 69. *अति* 70. *पांडव* 71. *भारत* 72. *वैभव* 73. *कलिकाएँ*

NMDC-17

तैनु आकास साभो[74] विराजैं
होइ जयपत्त[75] प्रिथिराज राजं।।
दच्छिनै अंग करि नमस्कारं।
मध्य ता नयर[76] कीजइ विचारं। ।। 16 ।।

मुडिल्ल

चंदबरदाई का जयचंद के दरबार में आगमन

पुच्छन चन्द गयो दरबारह।
हेजम[77] जह रघुबंस-कुमारह।।
जिहि पर सिद्धि सदा वरु पायो।
सो कविराज दिल्ली हुंति आयो। ।। 17 ।।

दूहा

सुनित हेत हेजम उठित दिखत चंद बरदाइ।
न्रिप अग्गे गुदरन-गयो[78] जिह पंगुर न्रिप आहि। ।। 18 ।।

वस्तु

तब सु हेजम तवसु हेजम जंति करि जोरि।
सीसु नाइ दस वार सेन छत्तपति।।
सकल बंध संधन नयन चकित चित्त दिसि दिस गख्रो।
तव सु कियो परनाम तिहि वरु करि तिहि प्रतिहार।
जिहि प्रसन्न सरसइ[78] कहहि सु कवि चंद दरबार। ।। 19 ।।

दूहा

सुनि न्रिपति रिपु कै सबद तामस[80] नयन सुरत्त[81]।
दरि दल्दि मंगल मुखह को मेट्ट विधि पत्त। ।। 20 ।।

आदरु किउ न्रिप तास को कह्यो चंद कवि आउ।
दिल्लीपति जिहि विधि रहइ सु वत कहे समुझाउ। ।। 21 ।।

---

74. सभा 75. जय प्रतिष्ठा 76. नगर 77. सेनापति, 78. विनम्र होकर 79. सरस्वती 80. त्रिगुण में से एक तमोगुण (काला) 81. स्मृति, याद

NMDC-067

कितकु सूर संभरधनी कितकु देस दल बध।
कितोकु रन हथ अग्गलउ पुच्छइ राउ सुचंद। ।।22।।

सूर जिसो गयनह उवै दल बल मरना आसि।
जब लगि अरि न्रिप वज्जवै तब लगि देह पंचास[82]। ।।23।।

कवितु

लच्छन सहित बत्तीस बरस छत्तीस मास छह।
इन दुज्जन संग्रहे राहु जिम चंद सूर गह।।
उव छुट्टे महि दान दुजन छुट्टे ति दंड वहि।
इक्क गहहि गिरि कंद इक्क अनुसरहिं चरन गहि।।
चहुंवान चतुर चहुं दिसहि बलि हिंदुवानं सब हत्थ जिहि।
इम जंपइ चंदु वरद्दिया प्रिथीराज अनुहार इहि। ।।24।।

दूहा

करिग देव दक्खिन नयर गंग तरंग अकुल्ल[83]। कन्नौज का नगर वर्णन
जल छंडहि अच्छहि करइ मीन चरित्तनु भुल्ल। ।।25।।

अडिल्ल

भूल्यो पुहवि[84] नरिंद[85] त जुद्ध विनुद्ध सह।
मुक्के मीननु मुत्ति लहंतु जु लच्छि दह।।
होइ तुछ तमोर[86] सरंत जु कंठ लह।
पंक प्रवेसह[87] संत झरंत जु गंग मह। ।।26।।

दूहा

भुल्यो रंग सु मीन न्रिप पंगु चढयो हय पुट्ठि।
सुनि सुंदरि वर वज्जने चढ़ी अवासह[88] उट्ठि। ।।27।।

दिक्खति सुंदरि दल बलनि चमकि चढंति अवास। संयोगिता द्वारा पृथ्वीराज चौहान का दर्शन और उनप मुग्ध होना
नर कि देव किंधु कामहर गंग हसंत निवास। ।।28।।

82. पचास *(संख्या)* 83. *आकुल* 84. *पृथ्वी*, 85. *राजा*, 86. *पान, तांबूल*, 87. *प्रवेश करके*, 88. *आवास पर*

NMDC-067

इक्क कहै दनु देव है इक कह इंनुफनिंद।
इक्क कहें असि कोटि नर इहु प्रिथिराज नरिंद। ।।29।।

सुनि वर सुंदर उभय तन स्वदे कंप सुरभंग।
मनु कमलिनि कल सम हरिअ भ्रित करने तन रंग। ।।30।।

गुरुजन गुरु वंदिए नहि सुंदरि।
राजपुत्ति पुच्छे कहुँ सुंदरि।।
अम्महि पुच्छन दूत पठावहि।
गुन अच्छइ पच्छे करु आवाहि। ।।31।।

अडिल्ल

पंगुराइ सा पुत्ति सु मुत्तिय धार भरि।
जौ हिय जो प्रिथिराज न पूछहि तोहि फिरि।।
जरु मनि लच्छिन सवनि तव्व विचारु करि।
है व्रतु मोहि नृप जीव लेउ संजीववरि। ।।32।।

सुंदरि आइस धाइ विचारि न बोलइय।
जो जल गंग हिलोर प्रतीत प्रसंगु लिय।।
कमल ति कोमल हस्त केलि कुल अंजुलिय।
मनो दान दुज अंध समप्पति अंजुलिय। ।।33।।

दूहा

वरि चल्लयो ढिल्लिय न्रिपति सुत जैचंद कुमारि।
गंठि छोरि दिच्छन फिरिग प्रान करिग मनुहारि[89]। ।।34।।

गाथा

पयाने[90] पंगुपुत्रीय जयति जोगिनी पुरह।
सरव विधि निसेधाइ तंबूलस्य समादाय। ।।35।।

---

89. *मनाना, खुशामद करना, विनय करना,* 90. *प्रयाण करना,*

छंद त्रोटक भ्रमरावली जाति

सलिता[91] जन सत्त समुद्द लियं।
दुइ राइ महाभर[92] यं मिलियं।।
करकादि निसा मकरादि[93] दिनं।
वर वध्धति सेन दुवाल मनं। ।।36।।

दुहु राइ रखत्ति तिरत्त उठे।
विहरे जनु पावस अंभ[94] उठे।।
निसि अद्ध विधत्त निसान धुरे।
दरिया दिव जानि पहार नुरे। ।।37।।

सहनाइ[95] नफेरि[96] कलाहलियं[97]।
रस वीरह वीर चली मिलियं।।
घननं कित घंटनि घंट घुरं।
कल कोतिग देव पयालपुरं[98]। ।।38।।

लगि अंबर बंबर डंबरियं।
बिसरी दिसि अद्धति धुंधरियं।।

समसेर[99] दुसेर[100] सभाहि लिसे।
दमके दल मज्झि तरायन से। ।।39।।

चमके ‹चतरंग[101] सनाह घनं।
प्रतिबिंबित मित्ति मऊख[102] वनं।।
दरसे दल वद्दल झल्लरियं।
जिनके मुख मुच्छ ति मुंछरियं। ।।40।।

---

91. नदी, 92. महाभट, महान् योद्धा, 93. बारह राशियों में से एक राशि 94. आकाश, 95. शहनाई 96. एक प्रकार का वाद्य-यंत्र, 97. कोलाहल, 98. पाताललोक, 99. तलवार, 100. दूसरा, 101. कवच, नस्तर, 102. सूर्य की किरण, मयूख,

NMDC-067

ग्रप जोइ फवज्जि[103] निबट्टि लियं।
ग्रह माहिरि कवच करा उदियं[104]।।
भुज दच्छिन अब्बुअ राउ रच्यो।
सेरि छत्र समेत जु आनि सच्यो। ।। 41 ।।

मुडिल्ल

ढेल्ली पति ढिल्लीय संपत्ताउ।
फेरि पहु रंग राउ ग्रहजत्ताउ।।
जेम राजन संजोगि सुरत्ताउ[105]।
सुह दुह कहन चंद मनु रत्ताउ। ।। 42 ।।

दूहा

दिव मंडन तारक सयल सर मंडन कमलानु।
जस मंडन नर भर सयल महि मंडन महिलानु।। ।। 43 ।।

महिलहि[106] मंडन न्रिपति ग्रिह कनक कंति ललनानि।
तिहि उप्परि संजोगिं नग धरि रख्यो वलि वानि।। ।। 44 ।।

राजन तिन सह प्रिय प्रमद तन कामिनि गिनि भोग।
सरइ[107] नि खलु लग्गत पलिति न्रिप नयनन ति संजोग। ।। 45 ।।

सुभ हरम्य[108] मंडिम न्रिपति दिपति दीप दिव लोक।
सुकल[109] मुक्ख अम्रितु झरहि करहि जु मनहि असोक। ।। 46 ।।

छंद

अमर धूम मुख गोउख उन्नत मेघ जनु।
मीर मराल निरत्त हिरन्नहि मतु धनु।।
सारंग सारंग रंग पदुक्कहि पंखि रजि।
विज्जुलिका कलसंति झपक्कहि जासु मिसि।। ।। 47 ।।

---

103. फौज, 104. उगना, 105. अत्यधिक प्रसन्नता, 106. महल, 107. शरद ऋतु, 108. हरम, रनिवास, 109. सारा, समग्र,

दादुर सादुर[110] सोर जु नूपुर नारि घन
मिलि सुरमध्धि मधु व्रत माधुर मंजु मन।।
सालक पंच पचीस प्रजंक त दून तस।
तहं तहं अथि सुर चीन्ह प्रवीण ति दासि दस। ।।48।।

कै जुव यूथजि वाद प्रमादहि मंद गति।
के चल अंचल वायु निरुप्पहि सद्द रति।।
के वर भांखि पराक्रिति[111] संक्रिति देव सुर।
के गुन ग्यान सुजान विराजहि राज वर। ।।49।।

इह विधि विलसि विलास असार ति सार किय।
दइ सुख जोग संजोगि प्रिथी प्रिथिराज जिय।।
अहनिसि[112] सुध्धि न जानहि मानिनि प्रौढ रति।
गुरु बंधव भृत लोइ भई विपरीत गति। ।।50।।

---

110. *चीता, बाघ,* 111. *प्रकृति,* 112. *रात-दिन।*

NMDC-067

विद्यापति

विद्यापति चौदहवीं शताब्दी के एक प्रतिष्ठित रचनाकार हैं। उनके जन्म समय के बारे में निश्चित सूचना का अभाव है। हालांकि उन्होंने अपनी रचनाओं में अपने आश्रयदाताओं का उल्लेख अवश्य किया है, लेकिन स्वयं के विषय में मौन रहे हैं। उनका जन्म वर्तमान मधुबनी जिला (बिहार प्रांत) के 'बिसफी' नामक गाँव में हुआ था। उनका वंश मिथिला का प्रसिद्ध वंश था। उन्हें पाण्डित्य और शास्त्र-ज्ञान की परंपरा सहज ही प्राप्त थी।

विद्यापति की बाल्यावस्था के बारे में भी कोई विशेष जानकारी नहीं है। ख्यातिलब्ध विद्वान् श्री हरि मिश्र उनके गुरू थे। राजा कीर्ति सिंह के राज्याभिषेक के बाद इन्हें राजकीय संरक्षण मिला। 'कीर्तिलता' उन्हीं के निर्देश पर लिखी गई थी। कीर्तिसिंह के बाद राजा शिवसिंह ने उन्हें संरक्षण दिया। ये कवि के बचपन के दोस्त थे। इनके शासन के चार वर्ष कवि के लिए सर्वाधिव सुखद थे। राजा शिवसिंह ने ही इन्हें 'अभिनव जयदेव' की उपाधि दी थी। विद्यापति ने कई गीतों में अपने संरक्षणदाता और बालसखा महाराजा शिवसिंह और उनकी पत्नी महारानी लखिमा देवी की प्रशंसा की है - **"राजा सिबसिंह रूप-नराएन लखिमा देह रमानें।"** उनके कई गीतों की अंतिम पंक्ति यही है।

राजा शिवसिंह की मृत्यु के बाद के कुछ वर्ष कवि के लिए कठिन थे। राजा पद्मसिंह (शिवसिंह के अनुज) को गद्दी मिलने के साथ ही पुन: उन्हें ओइनवार-वंशीय राजाओं का आश्रय प्राप्त हुआ। परवर्ती शासकों (मिथिला के) के समय में भी यह क्रम सतत् बना रहा।

विद्यापति के जन्म समय के अनिश्चय की तरह ही उनकी मृत्यु का समय भी प्रामाणिक तौर पर ज्ञात नहीं है। जनश्रुतियों से ज्ञात होता है कि, आधुनिक बेगूसराय जिला (बिहार) के मउबाफिदपुर (विद्यापतिनगर) के पास गंगा तट पर कवि ने प्राण त्याग किया था। उनकी मृत्यु के संबंध में निम्नलिखित पद प्रचलित है:-

"विद्यापतिक आयु अवसान, कातिक धवल त्रयोदसिजानी"

मिथिला की 'पंजी' से कवि के पारिवारिक जीवन के संबंध में थोड़ी सूचना प्राप्त होती है। उनके दो विवाह हुए थे। पहली पत्नी से नरपति और हरपति नाम के दो पुत्र हुए थे और दूसरी पत्नी से एक पुत्र वाचस्पति ठाकुर व एक कन्या हुई थी।

विद्यापति बहुपठित थे और उनकी संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और मैथिली भाषाओं पर असाधारण अधिकार था। उन्होंने संस्कृत, अवहट्ठ और मैथिली में समान अधिकार से रचनाएं की हैं। ग्रंथ संख्या की दृष्टि स सर्वाधिक रचनाएं संस्कृत की हैं। दूसरे स्थान पर अवहट्ठ की कृतियाँ हैं। मैथिली में उन्होंने स्फुट गीतों की रचना की है। वस्तुत: उनकी लोक-ख्याति का आधार उनके मैथिली के गीत ही हैं। इन्हीं गीतों के कारण कवि ने भौगोलिक सीमाओं का अतिक्रमण किया है।

उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार है:- विद्यापति ने संस्कृत के साथ-साथ मैथिली और अवहट्ठ में भी रचना की।

संस्कृत रचनाएं - भू-परिक्रमा, पुरूष परीक्षा, लिखनावली, शैव सर्वस्व सार, शैवसर्वस्वसार प्रमाणभूत संग्रह, गंगा वाक्यावली, दानवाक्यावली, विभागसार, दुर्गाभक्ति तरंगिणी, वायापत्तलक, वर्सकृत्य, मणिमंजरी, व्यादीभक्ति तंरगिणी, द्वैतनिर्णय, गोरक्षविजय।

अवहट्ठ की रचनाएं - कीर्तिकला, कीर्तिपताका।

मैथिली - विद्यापति पदावली

विद्यापति के मैथिली गीतों की कुल संख्या एक हजार के ऊपर ही होगी। ये सारे गीत दीर्घाविधि में लिखे गये हैं।'प्रस्तुत संकलन में कवि के भक्ति और शृंगार के बीस पद दिए गये हैं। आरंभ के दस पद भक्तिपरक हैं। क्रम से पहला पद भैरवी (महाकाली) की प्रार्थना है। इसमें भैरवी अपने रौद्र रूप में चित्रित हैं। पद का अंत कवि ने माता की कृपाकांक्षा के साथ किया है। पद संख्या दो में भगवान शिव जो त्रिपुरारि हैं, के अर्धनारीश्वर स्वरूप को लोकमान्यतानुसार उपस्थित किया गया है। शिव नटराज कहे जाते हैं। तीसरा पद नटराज शिव को समर्पित है। शिव जन-मानस में एकदम भाले-भाले, योगी के रूप में स्वीकृत हैं। पद संख्या चार में विद्यापति ने 'शिव' के इसी रूप को साकार किया है। पद संख्या पांच, छह और सात शिव-पार्वती के विवाह के प्रकरणों से संबद्ध हैं। पार्वती की माता मैना शिव के बौड़म स्वरूप से डरी हुई हैं। वे अपनी पुत्री के भविष्य को लेकर चिंतित हैं। उन्हें ऐसा लगता है कि, पार्वती, शिव के साथ सुखी नहीं रह पायेंगी। उनकी चिंता एक सामान्य मां की सहज चिंता है। ऐसे में विद्यापति अपने पदों के द्वारा उन्हें शिव के त्रिभुवनेश स्वरूप से परिचय करते हुए आश्वस्त करते हैं। पद संख्या आठ गंगा के प्रति एक भक्त की स्तुति है। कवि गंगा से कहता है कि, हे माँ, तुम्हारे तट पर मुझे बड़ा सुख मिला है। तुम्हें छोड़ते हुए कष्ट हो रहा है। हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ कि, आपके पुन: दर्शन हों। मैंने अपने पैरों से आपका स्पर्श किया है, इस अराध्य को क्षमा करें। अंतकाल में मुझे विस्मृत न करें। पद संख्या नौ और दस श्रीकृष्ण की स्तृति हैं। दसवां पद अत्यंत मार्मिक है। इसमें कवि अपने व्यतीत जीवन की निस्सारता को समझते हुए अपनी मुक्ति के प्रति सर्वथा निराश प्रतीत होता है और उसे एकमात्र आशा श्रीकृष्ण के रूप में दिखाई पड़ती है।

विद्यापति के भक्तिपरक गीतों (पदों) को पढ़कर कहीं से भी यह अनुभव नहीं होता है कि, ये कवि के अंतर से प्रसूत नहीं हैं। इन पदों से वे भक्त कवियों की समृद्ध परंपरा की हीं एक मजबूत कड़ी लगते हैं।

शेष दस पद शृंगार की विभिन्न दशाओं की अत्यंत स्वाभाविक अभिव्यक्तियाँ हैं। राधा, कृष्ण इनके आधार हैं। इनमें क्रम से पहला पद (पद सं० 11) कृष्ण के कंदब वृक्ष के नीचे मुरली वादन के साथ शुरू होता है। वे मिलन-स्थल के पास राधा की प्रतीक्षा कर रहे है। वे अत्यंत उद्विग्न हैं। पद संख्या 12 में कवि ने वय: संधि का चित्र उपस्थित किया है। नायिका शैशव और यौवन के संधि-स्थल पर पहुँच गई है। इस अवस्था में उसमें नए-नए शारीरिक परिवर्तन हो रहे हैं और वह उन सबके प्रति अत्यंत सजग है। वह अपने शरीर में होने वाले परिवर्तनों को चोरी-छिपे देखती है और खुश होती है। पद संख्या 13 में कवि ने नवयौवन को लक्ष्य किया है। पद संख्या 14 में कवि ने नायिका की सुंदरता का वर्णन किया है। नायिका स्वर्णलता सी सुंदर है। उसकी चाल हाथी की तरह मतवाली है। वह इतनी सुंदर है कि, उसे प्राप्त करने वाला एक ही साथ चारों पुरूषार्थों को प्राप्त कर लेगा। पद संख्या 15 में कवि ने नायिका के अंगों की तुलना करते हुए क्रमश: उन सबको हीन बताया है। पद संख्या 16 में विद्यापति ने प्रेम के देवता 'कामदेव' के प्रभाव की चर्चा की है। कामदेव ने नायिका के हृदय पर अपने पांचों बाणों से प्रहार किया है। पद संख्या 17 में कृष्ण की वियोगदशा का अद्भुत चित्र उपस्थित किया गया है। पद संख्या 18 में नायिका राधा की विरह दशा का वर्णन है। पद संख्या 19 में नायक व नायिका का प्रेम प्रसंग चित्रित है। नायिका कृष्ण से छेड़छाड़ न करने, आँचल छोड़ने की विनती करती है। वह कृष्ण को अपयश का डर भी दिखाती है। विद्यापति नायिका को आश्वस्त करते हैं और कहते हैं कि, हे गुणवंती नारी कृष्ण के साथ कैसा डर? तुम तो निपट गँवारों जैसा व्यवहार कर रही हो। पद संख्या 20 में कवि ने सरस वसंत ऋतु के समय, नायिका के मुख और नेत्रों की सुंदरता वर्णित की है। कवि को नायिका के मुख के सामने चंद्रमा कुछ कमजोर सा लगता है। उसके नेत्रों के सामने कमल बेजान लगते हैं।

संकलित पदों को पढ़कर आप विद्यापति के साहित्य के बारे में एक दृष्टि प्राप्त करेगें और उम्मीद है कि, इनके अतिरिक्त भी विद्यापति के साहित्य से परिचय की स्वाभाविक इच्छा का अनुभव करेंगे।

विद्यापति पदावली

[1]

जय जय भैरवि[1] अपर-भयाउनि[2] पसुपति-भामिनि[3] माया।
सहज सुमति[4] बर[5] दिनकर गोसाउनि[6] अनुगति गति तुअ पाया।।
बासर-रैनि[7] सबासन[8] सोभित चरन, चन्दमनि[9] चूड़ा ।
कतओक[10] दैत्य मारि मुँह मेलल,[11] कतन[12] उगिलि[13] करु कूड़ा।।
सामर[14] बरन, नयन अनुरंजित, जलद-जोग[15] फुल कोका[16]।
कट कट[17] बिकट ओठ-पुट पाँड़रि[18] लिधुर-फेन[19] उठ फोका[20]।।
घन घन घनन घुघुर[21] कत बाजए, हन हन कर तुअ काता।
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक, पुत्र बिसरू[22] जनि माता।।

महाकाली की प्रार्थना

[2]

जय-जय संकर जय त्रिपुरारि। जय अध पुरूष[23] जयति अध नारि[24]।।
आध धवल[25] तनु आधा गोरा। आध सहज कुच आध कटोरा।।
आध हड़माल[26] आध गजमोति[27]। आध चानन[28] सोह आध विभूति[29]।।
आध चेतन मति आधा भोरा। आध पटोर[30] आधं मुँजडोरा[31]।।
आध जोग आध भोग बिलासा। आध पिधान[32] आध दिग-बासा[33]।।
आध चान[34] आध सिंदूर सोभा। आध बिरूप[35] आध जग लोभा।।
भने[36] कबिरतन विधाता जाने। दुइ कए बाँटल[37] एक परान [38]।।

शिव की उपासना

[3]

आजु नाथ एक ब्रत महा सुख लागत हे।।
तोहें सिव धरु नट बेष कि डमरू बजाबह[39] हे।।
तोहें गौरी कहैछह[40] नाचए हमे कोना नाचब[41] हे।।
चारि सोच मोहि होए कोन बिधि बाँचब[42] हे।।

---

1. भैरवि (भैरवी) 2. राक्षसों के लिए भंयकर, 3. पशुपति (शिव) की पत्नी, 4. सद्‌बुद्धि, 5. वरदान, 6. गोस्वामिनी (मिथिला में कुलदेवी के लिए प्रयुक्त पद), 7. दिन-रात, 8. शवासन, 9. चंद्रमणि, 10. कितने ही, 11. डाल लिया, 12. कितनों 13. उगल दिया 14. श्याम-काला, 15. बादलों में 16. कमल के फूल, 17. कट-कट (भंयकर ध्वनि), 18. एक लाल फूल, 19. रुधिर-फेन, 20. बुलबुला, 21. घुँघरूओं, 22. भूलो (नहीं), 23. शिव, 24. शिव 25. सुंदर 26. मुण्डमाल (हड्डियों की माला), 27. मोतियों की माला, 28. चंदन 29. भभूत, 30. रेशम 31. मूंज की डोरी 32. वस्त्र, 33. दिग्-वस्त्र-(दिगंबर), 34. चंद्रमा, 35. बेढ़ंगा रूप, 36. कहते हैं, 37. बाँटा है, दिया है, 38. प्राण 39. बजाएँ, 40. कहती हो, 41. नाचूँ, 42. बचूँगा (मुक्त होऊँगा),

अमिअ चुबिअ 43 भुमि खसत 44 बघम्बर 45 जागत हे।।
होएत बघम्बर बाघ बसहा 46 धारि खाएत हे।।
सिरसँ 47 ससरत 48 साँप पुहुमि 49 लोटाएत हे।।
कातिक पोसल 50 मजर 51 सेहो धारि खाएत हे।।
जटास 52 छिलकत गग 53 भूमि भरि पाटत हे।।
होएत सहस मुखि धार समेटलो न जाएत हे।।

[4]

आगे माइ जोगिआ मोर जगत सुखदायक दुख कररहु 54 नहि देल।
दुख ककरहु नहि देल महादेव दुख ककरहु नहि देल।।
एहि जोगिआ के भाँग 55 भुलोओलक 56 धतुर 57 खोआए 58 धन लेल।
आगे माइ कातिक 59 गनपति 60 दुइ जन बालक जग भरि के नहि जान।
तनिका अभरन किछुओ न थिकइन 61 रति एक सोन 62 नहि कान।।
आगे माइ, सोना रूपा 63 अनका 64 सुत अभरन 65 आपन रुद्रक 66 माल।
अपना सुत लए किछुओ न जुरइनि 67 अनका लए जजाल।।
आगे गाइ, छनमे हेरथि 68 कोटि धन बकसथि 69 ताहि देबा नहि थोर।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि 70 थिकाह दिगम्बर भोर।।

[5]

शिव-पार्वती विवाह प्रसंग

एहि बिधि चलला विआहए[71] मोर बाउर[72] जोगी।
टपर-टपर[73] कए बसहा[74] आएल खटर-खटर[75] रुँडमाल 76 ।।
भकर[77] भकर सिब भाँग भकोसथि[78] डमरू लेल कर लाए।
ऐपन[79] मेटल[80] पुरहर[81] फोड़ल[82] फेंकल[83] चौमुख दीप।।
धिआ[84] लए मनाइनि मंडप बइसलि[85] गाबह[86] जनु सखि गीत।
भनइ विद्यापति सुनु ए मनाइलि ई थिका त्रिभुवन ईस।।

---

43. टपककर गिरेगी, 44. फैल जाएगी, 45. मृत बाघ का चर्म (चमड़ा), 46. बैल, 47. सिर से, 48. सरककर, 49. पृथ्वी, धरती, 50. पालतू (पाले हुए), 51. मोर, 52. जटा से, 53. गंगाधार (गंगा), 54. किसी को भी, 55. भाँग (मादक पदार्थ), 56. भुलाना 57. धतूरा (एक प्रकार की वनस्पति, जिसके बीज मादकता उत्पन्न करते हैं), 58. खिलाकर, 59. कार्तिकेय (शिव-पार्वती के पुत्र), 60. गणेश (शिव-पार्वती के दूसरे पुत्र, 61. दिखाई देना 62. सोना, 63. चाँदी, 64. दूसरों को, 65. आभूषण, 66. रूद्राक्ष, 67. जुट पाता है, 68. देखेंगे, 69. दे देंगे, 70. मैना (गौरी की माँ), 71. विवाह के लिए, 72. बावला, 73. ध्वनि, 74. बैल 75. ध्वनि 76. मुण्डों की माला, 77. शीघ्रता से (अत्यधिक जल्दी के लिए प्रयुक्त है), 78. खाते हैं, 79. अल्पना 80. मिटाया, 81. मंगल-घट 82. तोड़ दिया, 83. फेंका, 84. बेटी, 85. बैठती हैं (बैठी है), 86. गाओ,

[6]

बेरि-बेरि[87] अरे सिब हमे तोहि कहलहुँ किरिषि[88] करिअ मन लाए।
रहिअ निसंक[89] भीख मँगइते सब गुन गौरब[90] दुर जाए।।
निरधन जन बोलि सब उपहासए[91] नहि आदर अनुकम्पा।
तोहे सिव आक[92] धातुर फुल पाओल हरि पाओल फुल चम्पा।।
खटँग[93] काटि हर[94] हर[95] जे बनाबिअ तिरसुल तोड़ि करु फार[96]।
बसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ पाटिअ सुरसरि धार।।
भन विद्यापति सुनहु महेसर इ लगि कएलि तुअ सेबा।
एतए ज होएत से बरु होअओ ओतए बिसरि जनि देवा।।

[7]

नाहि करब बर हर निरमोहिआ।
तित्त भरि तन बसन[98] न तन्हिका[99] बाघ छाल काँख[100] तर रहिआ।।
बन-बन फिरथि[101] मसान[102] जगाबथि[103] घर आँगन ओ बनौलनि[104] कहिआ।।
सासु ससुर नहि ननदि जेठौनी जाए बैसति धिआ ककरा ठहिआ।।
बूढ़[105] बड़द[106] ढकढोल[107] गोल एक सम्पत्ति भाँगक झोरिआ[108]।।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि सिव सन जंग के कहिया।।

[8]

बड़ा सुख सार पाओल तुअ तीरे। छाड़इते निकट नयन बह नीरे।।
कर जोरि बिनमओ[109] बिमल[110] तरंगे। पुन[111] दरसन होअ पुनमति[112] गंगे।।
एक अपराध छेमब[113] मोर जानि। परसल[114] माए पाए तुम पानि।। गंगा स्तुति
कि करब जप-तप जोग धेआने। जनम कृतारथ[115] एकहि सनाने[116]।।
भनहि विद्यापति समदओं[117] तोहि। अन्तकाल जनु बिसरह[118] मोहि।।

---

87. बार-बार, 88. कृषि, 89. नि:शंक, 90. गौरव, 91. उपहास करते हैं, 92. अर्क (मदार), 93. लट्ठे, 94. हल 95. शिव 96. फाल (हल का फाल), 97. थोड़ा 98. वस्त्र; 99. थोड़ा सा 100. काँख, 101. फिरते हैं (घूमते हैं), 102. श्मशान, 103. जगाते हैं 104. बनाया, 105. वृद्ध, 106. बैल, 107. बेढ़ंगा, 108. झोली, 109. बिनती करता हूँ, 110. निर्मल, स्वच्छ, 111. फिर से, 112. पुण्यवती, पुण्य प्रदायिनी, 113. क्षमा करें, 114. स्पर्श किया है, 115. कृतार्थ, 116. स्नान से, 117. सुनाना 118. भूलें (नहीं),

NMDC-067

[9]

माधव कत तोर करब बड़ाई।
उपमा तोहर कहब ककरा हम कहितहुँ[119] अधिक लजाई[120]।।
जओं सिरिखंड[121] सौरभ[122] अति दुरलभ तओं पुनि काठ[123] कठोरे[124]।
जओं जगदीस निसाकर तओं पुनि एकहि पच्छ[125] उजोरे[126] ।। श्रीकृष्ण स्तुति
मनिक[127] समान आन नहि दोसर[128] तनिकर पाथर नामे।
कनक कदलि[129] छोटि लज्जित भय रह की कठु ठामहि[130] ठामे।।
तोहर सरिस एक तोहीं माधव मन होइछ अनुमाने।
सज्जन जन सओं नेह उचित थिक कवि विद्यापति भानें।।

[10]

तातल[131] सैकत[132] बारि-बिन्दू-सम सुत-मित-रमनि-समाज[133]।
तोहि बिसारि मन ताहि समरपल[134] आब होएब कोन काज ।।
माधव, हम परिनाम[135] निरासा।
तोहें जगतारन दीन दयामय अतए तोहर बिसबासा।।
आध जनम हम नींद गमाओल[136] जरा सिसु कत दिन गेला[137]।
निधुबन[138] रमनि-रभस[139] रंग मातल[140] तोहि भजब कोन बेला।।
कत चतुरानन मरि मरि जाएत न तुअ आदि सबसाना[141]।
तोहि जनमि पुनु तोहि समाएत सागर लहरि अमाना।।
भनइ विद्यापति सेष समन भय तुअ बिनु गति नहि आरा[142]।
तोहें अनाथक[143] नाथ कहाओसि तारन भार तोहारा।।

[11]

नन्दक[144] नन्दन कदम्बक तरु-तर धिरे-धिरे[145] मुरलि बजाव।
समय संकेत-निकेतन[146] बइसल बेरि-बेरि[147] बोलि पठाव।। कृष्ण का मुरली वादन
सामरि,[148] तोहरा लागि अनुखन[149] विकल मुरारि।
जमुनाक तिर उपवन उदवेगल[150] फिरि-फिरि ततहि निहारि।।

---

119. *कहते हुए भी*, 120. *लज्जा होती है*, 121. *श्रीखण्ड, चंदन*, 122. *सुगंध*, 123. *काष्ठ, लकड़ी*, 124. *कठोर*, 125. *पक्ष (15 दिनों को एक पक्ष होता है। एक माह में दो पक्ष होते हैं कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष,)* 126. *उजाला, प्रकाश*, 127. *मणि के*, 128. *दूसरा*, 129. *केला (स्वर्ण कदली)*, 130. स्थान, टमककर *(रह जाती है)*, 131. *तप्त, गर्म*, 132. *बालू के ढ़ेर पर*, 133. *पुत्र-मित्र और रमणियों का समाज*, 134. *समर्पित किया*, 135. *परिणाम, फल* 136. *गँवाया (व्यतीत किया)*, 137. *चले गए, बीत गये*, 138. *आमोद-प्रमोद में*, 139. *रमणियों के रस (रंग)*, 140. *मतवाला*, 141. *अंत*, 142. *और कोई*, 143. *अनाथों के*, 144. *नंद के (पुत्र, श्री कृष्ण)*, 145. *धीरे-धीरे*, 146. *मिलन-स्थल*, 147. *बार-बार*, 148. *सामरि राधा (साँवली काली)*, 149 *प्रत्येक क्षण*, 150. *उद्विग्न हुए*

NMDC-067

गोरस[151] बेचये[152] अबइत जाइत जनि-जनि पुछ बनमारि[153] ।
तोहे मतिमान,[154] सुमति मधूसूदन वचन सुनह किछु मोरा।।
भनइ विद्यापति सुन बरजौवति[155] बन्दह नन्द-किसोरा।।

[12]

सैसव[156] जीवन दुहु मिलि गेल। स्रवनक[157] पथ दुहु लोचन लेल।।
वचनक चातुरि लहु-लहु[158] हास[159]। धरनिये चाँद कएल परगास[160]।।
मुकुर[161] हाथ लए करए सिंगार। सखि पूछए कइसे सुरत-बिहार[162]।।
निरजन[163] उरज हेरत कत बेरि। बिहुंसए[164] अपन पयोधर[165] हेरि।।
पंहिले बदरि[166] सम पुन नवरंग[167]। दिन-दिन अनंग[168] अगोरल[169] अंग।।
माधव पेखल[170] अपरूब[171] बाला। सैसव जीवन दुहु एक भेला।।
विद्यापति कह तोहें अगेआनि[172] । दुहु एक जोग एह के कह सयानी।।

वयः संधि का चित्रण

[13]

कि आरे! नव जीवन अभिरामा।
जत देखल तत कहुए न पारिअ[173] छओ[174] अनुपम एक ढ़ामा[175]।।
दुहरिन। इन्दु[176] अरबिन्द[177] करिनि[178] हेम[179] पिक[180] बूझल अनुमानी।।
नयन बदन परिमल गति तन रूचि अओ अति सुललित बानी।।
कुच जुग उपर चिकुर[181] फुजि[182] पसरल ता अरुझाएल हारा।।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल[183] चाँद बिहिन सब तारा।।
लोल कपोल ललित मनि-कुंडल अधर बिम्ब अध जाई।।
भौंह भमर, नासापुट सुन्दर से देखि कीर[184] लजाई।।
भनई विद्यापति से बर नागरि आन न पावए[185] कोई।।
कंसदलन नारायन सुन्दर तसु रंगिनि पए कोई।।

नव यौवन का चित्रण

---

151. *दूध, दही;* 152. *बेचकर,* 153. *वनमाली, कृष्ण,* 154. *बुद्धिमती,* 155. *श्रेष्ठ युवती,* 156. *शैशव,* 157. *कान का,* 158. *कुछ-कुछ,* 159. *हँसती हैं,* 160. *प्रकाश,* 161. *दर्पण, आईना,* 162. *रति-लीला,* 163. *निर्जन, जन-शून्य* 164. *हँसती हैं,* 165. *स्तन,* 166. *बेर (फल),* 167. *नारंगी,* 168. *कामदेव,* 169. *रखवाली की, सुरक्षा की,* 170. *देखा,* 171. *अपूर्व,* 172. *अज्ञानी,* 173. *पा रहा हूँ,* 174. *छह* 175. *स्थान,* 176. *चंद्रमा,* 177. *कमल,* 178. *हथिनी,* 179. *हिम, बर्फ (श्वेत वर्ण),* 180. *कोयल,* 181. *केशराशि (सिर के बाल),* 182. *खुलकर,* 183. *उगे हुए हैं (निकले हुए हैं),* 184. *तोता,* 185. *पा सकता है,*

[14]

जाइत देखिलि पथ नागरि सजनि गे आगरि सुबुधि सेयानि।
कनक-लता सनि सुन्दरि सजनि गे विहि निरमाओलि आनि।।
हस्ति-गमन जकाँ[186] चलइत सजनि गे देखइत राजकुमारि।
जनिकर एहनि सोहागिनि सजनि गे पाओल पदारथ[187] चारि।। नायिका का रूप वर्णन
नील बसन तन घेरल सजनि गे सिर लेल चिकुर सँमारि।
तापर भमरा पिबए रस सजनि गे बइसल पाँखि पसारि।।
केहरि[188] सम कटि गुन अंछि सजनि गे लोचन अम्बुज धारि।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे गुन पाओल अवधारि[189] ।।

[15]

कबरी-भय[190] चामरि[191] गिरि-कन्दर मुख-भय चाँद अकासे।
हरिनि नयन-भय, सर-भय[192] कोकिल गति-भय गज बनबासे।।
सुन्दरि, किए मोहि सँभासि[193] न जासि।
तुअ डर इह सब दूरहि पड़ाएल[194] तोहें पुन काहि डरासि।।
कुच-भय कमल-कोरक[195] जल मुदि रहु घट परवेस हुतासे[196]।
दाड़िम-सिरिफल[197] गगन बास करु सम्भु गरल कर ग्रासे।।
भुज-भय पंक मृनाल[198] नुकाएल[199] कर-भय किसलय[200] काँपे।
कवि सेखर भन कत कत ऐसन कहब मदन[201] परत पे[202] ।।

[16]

मनमथ[203] तोहि की कहब अनेक।
दिठि[204] अपराध परान पए पीड़सि[205] से तुअ कओन बिबेक? कामदेव का प्रभाव
दाहिन[206] नयन पिसुन[207] गन बारल परिजन वामहि[208] आध।
आध नयन-कोने जें हरि पेखल तें भेल एत परमाद[209] ।।
पुर-बाहर[210] पथ करैत गतागत[211] नहिं हेरए कान[212]।
तोहर कुसुम-सर कतहु न संचर हमरे हृदय पाँचो बान[213]।।

---

186. *जैसा,* 187. *पदार्थ (यहाँ पुरूषार्थ के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है),* 188. सिंह, 189. *आधार,* 190. *केशराशि के डर से (बातों के डर से),* 191. *गाय,* 192. *वाणी के भय से,* 193. *संभाषण (बातचीत करती हो),* 194. *भाग गए,* 195. *कमल की कलियाँ,* 196. *घड़ा अपनी बनावट को तिरस्कृत होते देख* आग में प्रविष्ट हुआ, 197. *अनार और बेल,* 198 *कमल नाल,* 199. *धँस गया,* 200. *नवपल्लव,* 201. *कामदेव,* 202. *प्रताप से,* 203, *कामदेव,* 204. *आँख,* 205. *पीड़ित करते हो,* 206. *दक्षिण, दाहिना,* 207. *दुष्टों ने* 208. *बायीं,* 209. *प्रमाद, अपराध* 210. *बस्ती के बाहर* 211. *आना जाना,* 212. *कन्हैया, कृष्ण* 213. *पंच बान* (कामदेव के बाण)

[17]

सुन सुन ए सखि कहए न होए। राहि राहि[214] कए तन मन खोए।।
कहइत नाम पेम[215] होअ भोर[216]। पुलक कम्प तनु ढारहि नोर[217]।।
गद-गद[218] भाखि कहए बर-कान[219]। राहि दरस बिन निकस परान।।
जब नहि हेरब तकर से मुख। तब जिउ-भार धरव कोन सुख।।
तुहु बिनु आन इथे नहि कोइ। बिसरए चाह बिसरि नहि होइ।।
भनइ विद्यापति नाहि बिसाद[220]। पूरब[221] तोहर सबहि मन साध[222]।।

कृष्ण की वियोग दशा

[18]

लोटए धरनि, उठाए धरि सोई।
खने खन [223] साँस खने रोई।।
खने खन मुरछइ [224] कंठ परान।
इथि पर की गति दैव [225] से जान।।
हे हरि पेखलिहुँ [226] से बर नारि।
न जिउति बिनु कर-परसे तोहारि।।
केओ केओ जपए [227] बेद दिठि जानि।
केओ नव ग्रह पुज जोतिअ [228] आनि।।
केओ केओं कर धरि धातु विचार।
बिरह-बिखिन [229] कोई लखए [230] न पार।।

राधा का विरह वर्णन

[19]

कुंज भवन सँए [231] निकसलि [232] रे रोकल [233] गिरिधारी।
एकहि नगर बहु माधब हे जनि करु बटमारी [234]।।
छाड़ कान्ह मोर आँचर [235] रे फाटत नब सारी [236]।
अपजस [237] होएत जगत-भरि हे जनि करिअ उधारी [238]।।
संगक सखि गुआइलि [239] रे हम एकसरि [240] नारी।
दामिनि [241] आए तुलाएलि [242] हे एक राति अँधारी।।
भनहि विद्यापति गाओल रे सुनु गुनमति [243] नारी।
हरिक संग किछु डर नहि हे तोंहे परम गमारी [244]।।

नायक-नायिका प्रेम-प्रसंग
वसंत ऋतु में नायिका का सौंदर्य वर्णन

---

214. राधा-राधा, 215. प्रेम 216. विभोर 217. आँसू 218. मग्न, 219. बारे में, 220. विषाद, 221. पूरा करूंगा, 222. इच्छा, 223. क्षण-क्षण, 224. मूर्च्छित होती हैं, 225. ईश्वर, 226. देखना 227. जपता है (जप करता है), 228. ज्योतिषी 229. विरह-विघ्न (विरह जनित कष्ट), 230. दिखाई पड़ना, लक्षित होना, 231. से, 232. निकलते ही, 233. रोका (रोक लिया), 234. छीना-झपटी, 235. आँचल, 236. साड़ी, 237. अपयश (बदनामी), 238. निर्वस्त्र, 239. आगे बढ़ जाना 240. अकेली, 241. बिजली, 242. चमकना, 243. गुणवती, 244. गँवार,

NMDC-067

सरस बसंत समय भल [245] पाओल दछिन पबन बहु धीरे।
सपनहुँ रूप वचन एक भाखिए मुख सओं दुरि करु चीरे।।
तोहर बदन सम चान होअथि नहि जइओं जातन बिहि देला।
कए बेरि काटि [246] बनाओल नव कए तइओ तुलित [247] नहि भेला।।
लोचन-तूल कमल नहिं भए सक से जग के नहि जाने।
से फेरि जाए नुकाएल जल भए पंकज निज अपमाने।।
भनइ विद्यापति सुनु बर जौवित [248] ई सभ लछमी समाने।
राजा सिबसिंह रूपनराएन लखिमा देह [249] रमाने [250]।।

---

245. भला, सुंदर, 246. काटकर, 247. तुल्य, बराबरी का, 248. (श्रेष्ठ) युवती। 249. रानी लखिमा देवी 250. प्रसन्न रहें।

NMDC-067

कबीर

कबीर मध्यकालीन हिन्दी कवियों में विशिष्ट पहचान के कवि हैं। हिन्दी साहित्येतिहास में इन्हें भक्ति की निर्गुण शाखा में सम्मिलित किया गया है। इनके जन्म के संबंध में निम्नलिखित दोहा प्रचलित है-

चौदह सौ पचपन साल गए, चंद्रवार एक ठाट ठए।
जठे सुरी बरसात को, पूरनमासी तिथि प्रकट माता।।

अर्थात संवत् 1455 (सन् 1398 ई.) में कबीर का जन्म हुआ था। इनके जन्म, माँ-बाप, पालन-पोषण आदि व्यक्तिगत विवरण निर्विवाद नहीं हैं। परंतु उनके साहित्य के साक्ष्य से यह अवश्य कहा जा सकता है कि उन्हें जीवन-संघर्ष विरासत में मिला था। इन्हें दीर्घायु मिली थी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल इनका मृत्यु-काल संवत् 1575 (सन् 1518 ई.) मानते हैं। इस आधार पर इनकी आयु एक सौ बीस वर्ष निश्चित होती है।

कबीर ने अपने युग व समाज को गहराई से देखा व अनुभव किया था। वे महापुरुष थे। उन्होंने समाज की तमाम सामाजिक-धार्मिक बुराइयों पर बेबाक तौर पर अपनी बात रखी थी। ऐसा करते हुए उन्होंने राजसत्ता की भी परवाह नहीं की और न ही धर्म-गुरुओं की। यही वज़ह है कि, कबीर की कीर्ति को मनुष्यता के इतिहास में एक खास जगह हासिल है। उनकी प्रासंगिकता आज भी पूर्ववत् बनी हुई है।

रचनाएं

कबीर की रचनाएं 'बीजक' नाम से उनके शिष्यों द्वारा संकलित की गई हैं। बीजक के तीन भाग हैं - साखी, सबद और रमैनी।

कबीर 'आखिन देखी' कहने के विश्वासी हैं और जो कहना चाहते हैं उसे बहुत स्पष्ट शब्दों में कहते हैं। बिना लाग-लपेट के। इसलिए उनकी रचनाओं को काव्यशास्त्रीय कसौटी पर न कसकर उसमें निहित मूलाधार की दृष्टि से कसा जाना चाहिए। ऐसा करते हुए ही कबीर जैसे एक बड़े व्यक्ति और कवि के साथ न्याय किया जा सकता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर के संबंध में अत्यंत मार्मिक टिप्पणी की है: -

NMDC-067

हिन्दी साहित्य के हजार वर्षों के इतिहास में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। महिमा में यह व्यक्तित्व केवल एक ही प्रतिद्वन्द्वी जानता है : तुलसीदास। परंतु तुलसीदास और कबीर के व्यक्तित्व में बड़ा अंतर था। यद्यपि दोनों ही भक्त थे, परंतु दोनों स्वभाव, संस्कार और दृष्टिकोण में एकदम भिन्न थे। मस्ती, फक्कड़ाना स्वभाव और सब कुछ को झाड़ फटकार कर चल देने वाले तेज ने कबीर को हिन्दी साहित्य का अद्वितीय व्यक्ति बना दिया है।

प्रस्तुत संकलन में आपको कबीर के साहित्य के प्रमुख स्वरों से परिचित कराने की कोशिश की गई है। इनको पढ़कर निश्चित रूप से आप कबीर की रचनात्मकता का अनुभव कर पायेंगे। पद संख्या 1 में कबीर ने 'परम सत्य' की प्राप्ति के लिए जिज्ञासा' को महत्वपूर्ण माना है। अर्थात् उस परमसत्ता को जानने के दूसरे उपाय व्यर्थ हैं, सबसे जरूरी बात है, 'परमतत्व-जिज्ञासा'। दूसरे पद में कबीर ने स्पष्ट किया है कि साधक परमसत्ता से साक्षात्कार तभी कर पायेगा जबकि वह सजग नही होगा। इसीलिए उन्होंने 'जाग' पर विशेष बल दिया है। तीसरा पद कबीर की दृष्टि को सामने रखता है। वे बड़ी-बड़ी बातों और साधनों की तुलना में 'सहज' को बड़ा साबित करते हैं। सहज और स्वाभाविक बने रहते हुए भी परमसत्ता का अनुभव किया जा सकता है। पद संख्या चार में कबीर स्पष्ट तौर पर स्वीकार करते हैं कि, ब्रह्म सर्वत्र व्याप्त है और उसे हर कहीं अनुभव किया जा सकता है। उसके लिए घर को छोड़कर कहीं अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं है। पद संख्या पाँच में उन्होंने तीर्थ आदि की व्यर्थता रेखांकित करते हुए 'आत्मज्ञान' की उपलब्धि को आवश्यक माना है। पद संख्या छह में कबीर ने स्पष्ट किया है कि, योगी या साधु की वेश-भूषा अपना लेने भर से किसी को मुक्ति नहीं मिल सकती है। मुक्ति के लिए सत्य का ज्ञान आवश्यक है। पद संख्या सात में कबीर ने बाह्याचारों के प्रति अपना विरोध प्रकट किया है। बाह्याचार चाहे किसी भी धर्म से संबंधित हों, कबीर उन सबके विरोधी हैं। इन्हें वे भटकाव के रूप में देखते हैं। साथ ही उन्होंने परमात्मा के सर्वव्यापी स्वरूप की ओर भी संकेत किया है। पद संख्या आठ में कबीर ने आत्मतत्व को अत्यंत मूल्यवान बताया है। पद संख्या नौ में उन्होंने मदिरा निर्माण के रूपक की योजना करके 'ब्रह्म साधना' की चर्चा की है। पद संख्या दस में कवि ने माया (सांसारिक प्रपंच) के सर्वग्रासी स्वरूप को उपस्थित किया गया है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी उसके असर से मुक्त नहीं है। कबीर अपने समाज को अंधविश्वासों से मुक्त करना चाहते थे। पद संख्या ग्यारह में उनकी यही कोशिश सामने आती है। काशी मुक्तिदायिनी नगरी है। यहाँ प्राण त्यागने से निश्चित रूप से मोक्ष मिलता है। यह बात हिन्दू मानस में कहीं बहुत गहरे जमी हुई है। यही कारण है कि, उन्होंने लोगों को सावधान करते हुए काशी और मगहर का अंतर मिटा दिया हैं। कबीर जटिल धर्म-साधना पद्धतियों की तुलना में अपने सहज मार्ग को सामने रखते हैं और परमतत्व तक पहुँचने के लिए इसे ही एकमात्र उपयुक्त उपाय मानते हैं (पद संख्या 12)। कबीर स्वानुभूत सत्य को महत्व देते हैं। इसीलिए वे वेद-शास्त्रों की ज्ञान-परंपरा का विरोध करते हैं। उनके लिए वही सत्य काम्य है जो 'आँखिन

देखी' हो (पद संख्या 13)। कर्मकाण्डीय क्रिया-कलापों का कोई अर्थ नहीं है और न ही इनके द्वारा धर्म व ईश्वर का वास्तविक सत्य को जाना जा सकता है। इसीलिए कबीर ने इनका विरोध किया (पद संख्या 14)। हिंदू समाज में वर्ण और जाति की श्रेष्ठता का भाव इतना प्रभावी रहा है कि, मनुष्यता पर ही ख़तरा उठ खड़ा हुआ। मुसलमानों में भी सामाजिक बुराइयाँ हैं। कबीर इन सब खामियों से परिचित थे। वे इन सब सामाजिक कुरीतियों के विरोध में खड़े होते हैं (पद संख्या 15)। पद संख्या 16 में कबीर ने एक भक्त की अपने प्रिय अर्थात परमात्मा से वियुक्त होने की स्थिति में उपजने वाले तीव्र विरह की मार्मिक अभिव्यंजना की है। निर्गुण भक्ति काव्य परंपरा में गुरु को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। पद संख्या 17 में कबीर ने गुरु-महिमा का गान किया है। पद संख्या 18 में परमात्मा से मिलन की तीव्र उत्कंठा व्यंजित हुई है। पद संख्या 19 में 'जीवन सत्य' की ओर संकेत किया है। पद संख्या 20 में सांसारिक वस्तुओं की नश्वरता की अभिव्यक्ति है। धन, यौवन क्षणिक हैं, चिरंतन सत्य नहीं हैं। इसलिए इन क्षणभंगुर वस्तुओं का गर्व नहीं करने की बात की गई है। पद संख्या 21 में जीवात्मा के परमात्मा से मिलन की स्थिति की सुंदर व्यंजना की गई है। पद संख्या 22 में जीवन और मृत्यु के अवश्यंभावी चक्र की चर्चा है। इस पद में कबीर ने सांसारिक-वस्तुओं के प्रति मोह या आसक्ति से बचने की भूमिका तैयार की है। पद संख्या 23 में एक बार फिर से कबीर ने गुरु की महत्ता का प्रतिपादन किया है। साथ ही उन्होंने जाति-पांति और कुल के अनौचित्य को भी प्रकट किया है। पद संख्या 24 कबीर के दर्शन से परिचित कराता है। उनके अनुसार जीवात्मा परमात्मा का ही एक अंश है और वह उसी में विलीन हो जाता है। यही चरम् सत्य है। इस तरह वे अद्वैत के दर्शन की स्थापना करते हैं। कबीर ने संसार की नश्वरता को अपने कई पदों में अभिव्यक्त किया है। परंतु उन्हें दुःख है कि, मनुष्य बहुत सामान्य तरह के लोभ-लाभ में उलझा हुआ है, उसे सत्य की ख़बर ही नहीं है। अर्थात इस क्षणभंगुर संसार की वास्तविकताओं से अनजान मनुष्य भौतिक समस्याओं से उलझा हुआ है।

कबीर-वाणी

[1]

मोकों[1] कहाँ ढूढ़े बन्दे,[2] मैं तो तेरे पास में।
ना मैं देवल[3] ना मैं मसजिद, ना काबे[4] कैलास में।
ना तो कौने क्रिया-कर्म में, नहीं योग बैराग में।
खोजी होय तो तुरतै मिलिहों, पल भर की तालास में।
कहैं कबीर सुनो भई साधो, सब स्वाँसों की स्वाँस में।।

परम तत्व की जिज्ञासा

[2]

जाग पियारी[5] अब का सोवै।
रैन गई दिन काहे को खोवै।।
जिन जागा तिन मानिक[6] पाया।
तैं बौरी[7] सब सोय गँवाया।।
पिये तेरे चतुर तू मूरख नारी।
कबहुं न पिय की सेज सँवारी।।
तैं बौरी बौरापन कीन्ही।
भर-जोवन[8] पिय अपन न चीन्ही[9]।।
जागे देख पिय सेज न तेरे।
ताहि छाँड़ि उठि गये सवेरे।।
कहैं कबीर सोई धुन जागै।
शब्द-बान[10] उर-अन्तर[11] लागै।।

परमसत्ता से साक्षात्कार

[3]

सन्तो, सहज समाधि[12] भली।
साँईते मिलन भयो जा दिनतें सुरत[13] न अन्त चली।।
आँख न मूँदूँ कान न रूँधूँ,[14] काया कष्ट न धारूँ[15]।
खुले नैन मैं हँस हँस देखूँ, सुन्दर रूप निहारूँ।।
कहूँ सो नाम सुनूँ सो सुमिरन,[16] जो कुछ करूँ सो पूजा।

परमसत्ता का अनुभव

---

1. मुझे *(ईश्वर या परमात्मा के संदर्भ में प्रयुक्त है)*, 2. मनुष्य 3. देवालय *(मंदिर)*, 4. मुसलमानों का एक-तीर्थ, 5. प्रिय *(जीवात्मा के लिए संबोधन)*, 6. माणिक्य *(मूल्यवान रत्न)*, 7. बावली, 8. यौवनावस्था, 9. पहचानना, 10. परमात्मा रूपी शब्द-बाण 11. हृदय में, 12. समाधि *(योग की-अंतिम अवस्था)*, 13. स्मरण, ध्यान, 14. बंद करना, 15. धारण करना *(सहना)*, 16. स्मरण,

गिरह-उद्यान[17] एकसम देखूँ, भाव मिटाऊँ दूजा।।
जहँ जहँ जाऊँ सोई परिकरमा,[18] जो कुछ करूँ सो सेवा।
जब सोऊँ तब करूँ दण्डवत, पूजूँ और न देवा।।
शब्द निरन्तर मनुआ[19] राता,[20] मलिन बचन का त्यागी।
ऊठत-बैठत कबहुँ न बिसरै, ऐसी तारी[21] लागी।।
कहैं कबीर यह उनमुनि[22] रहनी, सो परगट कर गाई।
सुख-सुख के इक परे परम सुख, तेहि में रहा समाई।।

[4]

अवधू[23], भूले को घर लावै।
सो जन हमको भावै[24]।।
घर में जोग[25] भोग घर ही में, घर तज[26] बन नहिं जावै।
घर में जुक्तु [27] मुक्त घर ही में, जो गुरू अलख[28] लखावै[29]।
सहज[30] सुन्न[31] में रहै समाना, सहज समाधि लगावै।
उन्मुनि रहै ब्रह्म को चीन्है, परम तत्व[32] को ध्याव [33]।
सुरत-निरत[34] सों मेला करके, अनहद नाद[35] बजावै।
घर में बसत वस्तु भी घर है, घर ही वस्तु मिलावै।।
कहैं कबीरा सुनो हो साधू, ज्यों का त्यों ठहरावै।।

'ब्रह्म' की व्याप्ति

[5]

पानी बिच[36] मीन पियासी।
मोंहिं सुन सुन आवै हाँसी[37]।।
घर में वस्तु नजर नहिं आवत।
बन बन फिरत उदासी।।
आतमज्ञान[38] बिना जग झूँठा।
क्या मथुरा क्या कासी।

आत्मज्ञान

---

17. घर रूपी *बगीचा*, 18. *परिक्रमा*, 19. मन, 20. रत *(लगा हुआ)*, 21. *क्रम, निरंतरता*, 22. समाधि, 23. अवधूत 24. *पसन्द है या अच्छा लगता है*, 25. *योग*, 26. *त्याग कर* 27. *युक्त, जुड़ा हुआ*, 28. *अलक्ष्य (ब्रह्म या परमात्मा)*, 29. *दिखाये*, 30. *आसानी से*, 31. *शून्य*, 32. *ब्रह्म या परमात्मा*, 33. *ध्यान लगाये*, 34. *सुरत-निरत, पारिभाषिक पद हैं। सुरत, अंतर्मुखी वृत्ति है। आचार्य क्षिति मोहन सेन ने इसका अर्थ प्रेम और निरत का वैराग्य किया है। निरति, बाहरी प्रवृत्ति है।*, 35. *आवाज, (ध्वनि)*, 36. *बीच में (अंदर)*, 37. *हँसी*, 38. *आत्मज्ञान*,

[6]

मन ना रँगाये[39] रँगाये जोगी कपरा।
आसन मारि मंदिर में बैठे
ब्रह्म-छाँड़ि पूजन लागे पथरा[40] ।।
कनवा[41] फड़ाय[42] जटवा[43] बढ़ौले[44]
दाढ़ी बढ़ाय जोगी होई गैले बकरा।
जंगल जाय जोगी धुनिया[44] रमौले[45]
काम[46] जराय[47] जोगी होय गैले हिजरा[48] ।।
मथवा[49] मुँड़ाय[50] जोगी कपड़ा रंगीले,
गीता बाँच के होय गैले लबरा[51] ।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो,
जम दरवाजा बाँधल जैबे पकड़ा।।

धार्मिक पाखंड

[7]

ना जानै तेरा साहब कैसा है।
मुल्ला होकर बाँग[52] जो देवे,
क्या तेरा साहब बहरा है।
कीड़ी[53] के पग नेवर[54] बाजे
सो भी साहब सुनता है।
माला फेरी तिलक लगाया,
लंबी जटा बढ़ाता है।
अन्तर तेरे कुफर-कटारी,[55]
यों नहिं साहब मिलता है।।

बाह्याचारों का विरोध

---

39. रंगाना, 40. पत्थर, 41. कान, 42. फड़वाकर (छिदवाकर), 43. जटा, 44. बढ़ाया, 44. धूनी, 45. रमाया 46. काम, वासना, 47. जलाकर, 48. नपुंसक, 49. सिर, 50. मुण्डन करवाकर, 51. झूठा, 52. आवाज लगाना (वह ऊंचा शब्द या मंत्रोच्चारण जो समाज का समय बताने के लिए मौलवी मस्जिद में करता है), 53. चींटी, 54. घुँघरू, 55. छेक-छल

NMDC-067

[8]

तोर हीरा[56] हिराइल[57] वा किचडे[58] में।
कोई ढूँढ़े पूरब कोई ढूँढ़े पच्छिम
कोई ढूँढ़े पानी-पथरे में। — आत्मतत्व
दास कबीर ये हीरा को परखैं[59]
बाँध लिहलै[60] जीयरा[61] के अँचरे[62] में।

[9]

अवधू मेरा मन मतिवारा[63]।
उन्मुनि चढ़ा गगन-रस पीवै,[64] त्रिभुवन भया उजियारा।
गुड़[65] करि ज्ञान ध्यान करि महुंवा,[66] भव-भाठी[67] करि भारा[68]।
सुषमन-नारी[69] सहज समानीं, पीवै[70] पीवनहारा। — ब्रह्म साधना
दोई पुड़[71] जोड़ि चिगाई,[72] भाठी[73] चुआ महारस[74] भारी।
काम-क्रोध-दुइ किया पलीता,[75] छूटि गई संसारी।
सुनि मंडल[76] में मँदला[77] बाजै, तहँ मेरा मन नाचै।
गुरुप्रसाद अमृत फल पाया, सहजि सुषमनां काछै[78]।
पूरा मिल्या तबै सुख उपज्यो तप की तपनि बुझानी।
कहै कबीर भवबंधन छूटै, जोतिहि[79] जोति समानी।

[10]

माया महा ठगिनि[80] हम जानी।
तिरगुन[81] फाँसि[82] लिये कर डोलै, बोलै मधुरी बानी।।
केशव के कमला [83] होइ बैठी, सिव के भवन भवानी[84]।
पंडा[85] के मूरत[86] होय बैठी, राजा के घर रानी।
काहू के हीरा होइ बैठी, काहू के कौड़ी कानी ।। — माया
भक्तन के भक्तिन होइ बैठी, ब्रह्मा के ब्रह्मानी।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, यह सब अकथ[87] कहानी।।

---

56. *बहूमूल्य रत्न (पद में आत्म तत्व के लिए आया है।)*, 57. *खो गया है*, 58. *कीचड़* 59. *परखना, जानना*, 60. *लिया*, 61. *हृदय*, 62: *आँचल*, 63. *मतवाला*, 64. *शून्य चक्र में प्राप्य आनन्द*, 65. *गुड़*, 66. महुवा, 67. *संसार रूपी भट्ठी*, 68. *महारस*, 69. *सुष्मना-नाड़ी*, 70. *पीता है*, 71. *पुट*, 72. *जलाना* 73. *भट्ठी*, 74. *आनन्द*, 75. *पलीता (बत्ती)* 76. *चक्र*, 77. *मादल, मृदंग*, 78. *प्राप्त करना*, 79. *ज्योति में*, 80. *स्त्री ठग* 81. *त्रिगुण (सत्व, रज, तम)*, 82. *फंसाकर*, 83. *लक्ष्मी*, 84. *शिवा (पार्वती)* 85. *पुजारी*, 86. *मूर्ति*, 87. *जो कहा न जा सके (अकथ्य)*

[11]

लोका[88] मति के भोरा[89] रे।
जो कासी तन तजै कबीरा,
तौ रामहिं कहा निहोरा[90] रे।
तब हम वैसे अब हम ऐसे,
इहै जनम का लाहा[91] रे।
राम-भगति-परि जाकौ हित हित
ताकौ अचिरज[92] काहा[93] रे।
गुरु-परसाद साध की संगतिं;
जन जीतें जाइ जुलाहा रे।
कहै कबीर सुनहू रे सन्तो,
भ्रंमि परै जिनि कोई रे।
जस कासी तस मगहर[94] ऊसर[95],
हिरदै राम सति[96] होई रे।

भक्ति का सहज मार्ग

[12]

जाति न पूछो साध की, पूछ लीजिए ज्ञान।
मोल[97] करो तलवार का पड़ा रहन दो म्यान।।
हस्ती[98] चढ़िए ज्ञान को, सहज दुलीचा[99] डारि।।
स्वान-रूप संसार है, भूँकन[100] दे झक[101] मारि।।

ज्ञान का महत्व

[13]

मेरा-तेरा मनुआँ कैसे इक होई रे।
मैं कहता हौं आँखिन देखी, तू कहता कागद[102] की देखी।
मैं कहता सुरझानहारी,[103] तू राख्यौ उरझाई[104] रे।
मैं कहता तू जागत रहियो, तू रहता है सोई रे।
मैं कहता निर्मोही[105] रहियो, तू जाता है मोही रे।
जुगन[106] जगन[107] समुझावत हारा, कही न मानत कोई रे।
तू तो रंडी[108] फिरै बिहंडी,[109] सब धन डारे खोई रे।
सतगुरु धारा निर्मल बाहै, बामैं[110] काया[111] धोई रे।
कहत कबीर सुनो भाइ साधो, तब ही वैसा होई रे।

स्वानुभूत सत्य

---

88. *लोग,* 89. *भ्रमित,* 90. *अहसान (कृपा)* 91. *लाभ* 92. *आश्चर्य* 93. *कैसा* 94. *मगध* 95. *बंजर जमीन जिस पर कोई उपज नहीं होती?)* 96. *विलीन होना,* 97. *मूल्य,* 98. *हाथी,* 99. *कालीन, गलीचा,* 100. *भौंकना,* 101. *लाचारी,* 102. *काग़ज की (यहां कबीर शास्त्र ज्ञान की ओर संकेत कर रहे हैं),* 103. *सुलझाने वाला,* 104. *उलझाकर,* 105. *मोह-मुक्त* 106. *युग* 107. *संसार* 108. *वेश्या,* 109. *स्वच्छंद* 110. *उनमें,* 111. *शरीर*

NMDC-067

[14]

साधो, देखा जग बौराना[112]।
साँची कही तौ मारन[113] धावै झूँठे जग पतियाना [114]।
हिन्दू कहत है राम हमारा मुसलमान रहमाना।
आपस में दोऊ लड़े मरतु हैं मरम[115] कोई नहिं जाना।
बहुत मिले मोहिं नेमी धर्मी प्रात करैं असनाना।
आतम-छोडि पषानै[116] पूजैं तिनका थोथा[117] ज्ञाना।
आसन मारि डिंभ[118] धरि बैठे मन में बहुत गुमाना [119]।
पीपर-पाथर पूजन लागे तीरथ-बर्न भुलाना।
माला पहिरे टोपी पहिरे छाप-तिलक अनुमाना।
साखी[120] सब्दै[121] गावत भूले आतम खबर न जाना।
घर-घर मंत्र जो देन फिरत हैं माया के अभिमाना।
गुरुवा सहित सिष्य सब बूड़े[122] अंतकाल पछिताना[123]।
बहुतक[124] देखें पीर-औलिया पढ़ै किताब-कुराना।
करै मुरीद[125] कबर[126] बतलावै उनहूँ खुदा न जाना।

कर्मकाण्ड का विरोध

[15]

अरे इन दोहुन[127] राह न पाई।
हिंदू अपनी करे बड़ाई गागर छुवन न देई।
वेस्या के पाइन-तर[128] सोवै यह देखो हिंदुआई।
मुसलमान के पीर-औलिया मुर्गी मुर्गा खाई।
खाला[129] केरी बेटी ब्याहैं घरहि में करै सगाई।
बाहर से इक मुर्दा लाये धोय-धाय चढ़वाई।
सब सखियाँ मिलि जेंवन बैठीं घर-भर करै बड़ाई।
हिंदुन की हिंदुवाई देखी तुरकन की तुरकाई।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो कौन राह है जाई।

सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार

---

112. *पागल होना, मतवाला होना,* 113. *मारने के लिए,* 114. *विश्वास करना,* 115. *मर्म (रहस्य)* 116. *पत्थर (पत्थर निर्मित मूर्तियों के लिए प्रयुक्त शब्द),* 117. *सारहीन,* 118. *दम्भ* 119. *घमण्ड, अहंकार,* 120. *साखी, पद* 121. *सबद, पद,* 122. *डूब गये,* 123. *पश्चाताप किया,* 124. *बहुत से,* 125. *शिष्य,* 126. *मजार,* 127. *दोनों ने (हिंदू और मुसलमान),* 128. *पाँवों के नीचे,* 129. *मौसी (माँ की बहन)*

NMDC-067

[16]

आइ न सकीं तुज्झपै[130] सकूँ न तुज्झ बूलाइ।
जियरा[131] यौंही लेहुगे,[132] विरह तपाइ[133] तपाइ। ।।1।।
यहु तन जालौं[134] मसि[135] करूँ ज्यूँ धूवाँ जाइ सरग्गि[136]।
मति[137] वै राम दया करै, बरसि बुझावै अग्गि[138] । ।।2।। परमात्मा से वियोग
यहु तन जालौं मसि करौं, लिखौं राम का नाँउँ।
लेखणि करूँ करंक[139] की, लिखि लिखि राम पठाउँ[140] । ।।3।।
इस तन का दीवा करौं, बाती मेलूँ जीव।
लोही[141] सींचीं तेल ज्यूँ, कब मुख देखौं पीव। ।।4।।

[17]

नैहर[142] मैं दाग लगाय आय चुनरी[143]।
ऊ रँगरेजवा[144] के मरम न जानै,
नहिं मिलै धोबिया कौन करै उजरी[145]।
तन कै कूँडी[146] ज्ञान कै सौंदन[147]
साबुन महँग बिचाय[148] या नगरी।
पहिरि-ओढ़िके चली ससुररिया,
गौंवाँ[149] के लोग कहैं बड़ी फुहरी[150]।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो,
बिन सतगुरु कबहूँ नहिं सुधरी।

सतगुरु की महिमा

[18]

इब[151] न रहूँ माटी के घर मैं,
इब मैं जाइ रहूँ मिलि हरि मैं।।
छिनहर[152] घर अरु झिरहर[153] टाटी,[154]
घन गरजन कंपै मेरी छाती।।
दसवैं दवारि लागि गई तारी,[155]
दूरि गवन[156] आवन भयौ भारी।।
चहुँ दिसि बैठे चारि पहरिया,[157]

परमात्मा से मिलन की तीव्र उत्कंठा

---

130. तुम्हारे पास, 131. प्राण, 132. लोगे, 133. तपाकर, 134. जलाकर, 135: स्याही, 136. स्वर्ग, 137. नहीं (मत) 138. आग, 139. अस्थि 140. प्रेषित करूं, भेजूं, 141. रक्त, 142. माँ का घर (मायका), 143. एक विशेष प्रकार की साड़ी, 144. रँगसाज; 145. सफेद, उज्जवल, 146. कुंडा (एक प्रकार का पात्र, जिसमें धोबी गंदे कपड़े भिगोता है), 147. कपड़ा साफ करने के काम में आने वाला, 148. बिकता है, 149. गाँव, 150. फूहड़ (असभ्य), 151. अब 152. क्षीण (जर्जर) 153. झिर्री वाली (छेदों वाली) 154. एक सामान्य सा दरवाजा, 155. क्रम (सिलसिला), 156. गमन (जाना), 157. पहरेदार (रखवाले),

NMDC-067

जागत मूसि[158] गये मोर नगरिया।।

कहै कबीर सुनहु रे लोई,

भाँनड़[159] घड़ण[160] सँवारण[161] सोई।।

[19]

खेल ले नैहरवा दिन चार।

पहिली पठौनी[162] तीन जन आये, नौवा[163] बाम्हन बारि[164]।

बाबुलजी मैं पैयाँ तोरी लागौं, अबकी गवन दे टारि[165]।।

धरि बहियाँ डोलिया बैठारिन, कोउ न लागै गोहार[166]।।

दुसरी पठौनी आपै आये, लेके डोलिया कहार।

ले डोलिया जाइ बन में उतारिन, कोई नहीं संगी हमार।

कहैं, कबीर सुनो भाई साधो, इक घर हैं दस द्वार।।

जीवन सत्य

[20]

तोको पीव मिलेंगे घूँघट के पट खोल रे।

घट-घट में वही साईं[167] रमता,[168] कटुक बचन मत बोल रे।

धन-जोबन[169] को गरब[170] न कीजै, झूठा पँचरंग[171] चोल[172] रे।

सुन्न महल में दियना[173] बार ले, आसा सों मत डोल रे।

जोग जुगत सो रंगमहल में, पिय पाई अनमोल रे।

कहैं कबीर आनंद भयो है, बाजत अनहद ढोल रे।

नश्वरता

[21]

लाली[174] मेरे लाल की जित देखों तिंत लाल।

लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल। ।।1।।

जिन पावन भुइँ बहु फिरे, घूमें देस बिदेस।

पिया मिलन जब होइया आँगन[175] भया बिदेस। ।।2।।

जीवात्मा-का परमात्मा से मिलन

---

158. *चुरा ले गये*, 159. *तोड़ना* 160. *गढ़ना*, 161. *सँवारेगा*, 162. *बार*, 163. *नाऊ*, 164 *बारी (जाति विशेष जो पानी भरने व पिलाने का काम करती थी)*, 165. *टालना*, 166. *पुकारना, बुलाना*, 167. *परमात्मा (स्वमी)*, 168. *रमण करता (वास करता है)*, 169. *यौवन रूपी धन*, 170. *गर्व*, 171. *पाँच रंग का (शरीर पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश, इन पाँच तत्वों से निर्मित माना गया है। कबीर इन्हीं को पंचरंग कहते हैं)*, 172, *शरीर, काया, चोला*, 173. *दीप*, 174. *लालित्य, तेज (परमात्मा की प्रतीत)*, 175. *घर*

[22]

चलती चक्की[176] देखि के, दिया कबीरा रोय।
दुइ पट[177] भीतर आय के, साबित[178] गया न कोय। ॥1॥ जीवन और मृत्यु
भाई बीर बटाउआ,[179] भरि-भरि नैन न रोय।
जाका था सो ले लिया, दीन्हा था दिन दोय। ॥2॥

[23]

पीछे लागा जाइ था, लोक[180] वेद[181] के साथि।
आगे थैं सतगुरु मिल्या, दीपक दीया हाथि। ॥1॥ गुरु की महिमा
दीपक दीया तेल भरि, बाती दई अघट्ट[182]।
पूरा किया बिसाहुणां,[183] बहुरि न आवौं हट्ट[184] ॥2॥
कबीर गुरु गरवा[185] मिल्या, रलि[186] गया आटे लूँण[187]।
जाति-पाँति-कुल सब मिटै, नाँव धरौगे कौंण[188]। ॥3॥

[24]

हेरत[189] हेरत हे सखी, रह्या[190] कबीर हिराइ।
बूँद समानी समँद[191] में, सो कत हेरी जाइ। ॥1॥
हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ। जीवात्मा-परमात्मा का संबंध
समँद समाना बूँद में, सो कत हेर्‌या जाइ। ॥2॥

[25]

यह जग अंधा मैं केहि समझावों।
इक-दुई हों उन्हें समुझावों सब ही भुलाना पेट के धंधा।
पानी के घोड़ा पवन असवरता[192] ढरिक[193] परै जस ओस[194] के बुंदा।
गहरी नदिया अगम बहै धरवा खेवनहारा[195] पड़िगा[196] फंदा[197]। अज्ञान
घर की वस्तु निकट नहिं आवत दियना बारि के ढूँढ़त अंधा।
लागी आग सकल बग जरिगा बिनु गुरुग्यान भटकिया[198] बंदा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो इक दिन जाय लँगोटी[199] झार[200] बंदा।

---

176. *वह यंत्र, जिससे आंटा पीसते हैं (यहां कबीर आवागमन, जन्म और मृत्यु के अनवरत चक्र के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं,* 177. पाट *(जन्म और मृत्यु रूपी दो पाट),* 178. *सुरक्षित, निर्दोष,* 179. *स्वजन,* 180. *संसार,* 181. *शास्त्र-वेद,* 182. *न खत्म होने वाली,* 183. *खरीदना* 184. *हाट, बाजार,* 185. *गले से,* 186. *मिल गया,* 187. *नमक,* 188. *कौन,* 189. *खोजते हुए* 190. *रहा,* 191. *समुद्र,* 192. *सवार (सवारी करने वाला),* 193. *ढलक पड़ना, गिर पड़ना,* 194. *ओस,* 195. *पार लगाने वाला (मार्ग दिखाने वाला),* 196. *पड़ गया,* 197. *जाल,* 198. *भटकना, भ्रमित होना,* 199. *लँगोट (विशेष प्रकार का वस्त्र, जिसे कमर से नीचे पहनते हैं। यह अधोवस्त्र है।),* 200. *झाड़कर (सब कुछ छोड़कर)।*

NMDC-067

मलिक मुहम्मद जायसी

जायसी निर्गुण काव्यधारा की प्रेमाश्रयी शाखा के श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। इनका जन्म उत्तर प्रदेश के 'जायस' नामक स्थान पर हुआ था। अपने जन्म के संबंध में उन्होंने 'आखिरी कलाम' में लिखा है कि

"मा अवतार मोर नव सदी। तीस बरस ऊपर कवि बदी''।

इन पंक्तियों को आधार माना जाए तो इनका जन्म समय 900 हिजरी (सन् 1492 के लगभग) निश्चित होता है। दूसरी पंक्ति का अर्थ है जन्म से तीस वर्ष बाद जायसी अच्छी कविता करने लगे थे।

रचनाएं

1. पद्मावत 2. अखरावट, 3. अखिरी कलाम। दो अन्य पुस्तकें हैं- चित्ररेखा और कहरानामा। आजकल 'कन्हावत' को भी उनका ग्रंथ बताया जा रहा है।

जायसी की साहित्यिक ख्याति का आधार 'पद्मावत' ही है। यह एक उत्कृष्ट प्रेमाख्यानक काव्य है। इसमें जायसी की काव्य-प्रतिभा के स्पष्ट दर्शन होते हैं। उन्होंने ठेठ अवधी भाषा में लोकप्रचलित कथानक को आधार बनाकर इसकी रचना की है। 'पद्मावत' की रचना फारसी की 'मसनवी शैली' पर आधारित है। इसमें कुल अट्ठावन खण्ड हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने काजी नसरूद्दीन हुसैन जायसी के हवाले से बताया है कि, जायसी की मृत्यु 4 रजब 949 हिजरी (सन् 1542 ई0) को हुई थी। उनकी मृत्यु अमेठी में हुई थी। वहीं उनकी कब्र है।

जायसी मुहम्मद निजामुद्दीन औलिया की शिष्य परंपरा में थे।

प्रस्तुत संकलन में 'पद्मावत' के तीन खण्ड के अंश रखे गये हैं और तीनों ही विशिष्ट हैं। प्रथम खण्ड नखशिख खंड है; इसमें जायसी ने काव्य की नायिका पद्मावती के रूप का क्रमवार वर्णन किया है। हालांकि इस तरह का रूप वर्णन साहित्य में सर्वथा नया नहीं है, किंतु इसमें जायसी का कवि कौशल नवीनता की उत्पत्ति करने में समर्थ हुआ है। सबसे पहले कवि ने शृंगार वर्णन करते हुए सिर और केश की चर्चा की है। सबकी बराबरी के लिए प्रसिद्ध उपमानों की योजना करते हुए नायिका के केशों व सिर को श्रेष्ठ बताया है। पद संख्या 2 में कवि ने नायिका की माँग की सुंदरता का वर्णन किया है। पद संख्या 3 में नायिका के सुंदर ललाट का वर्णन है। पद संख्या 4 में कवि ने नायिका के भौहों का अनुपम सौंदर्य उपस्थित किया है। पद संख्या 5 में जायसी ने पद्मावती के बाँके नेत्रों की सुंदरता का बखान किया है। पद संख्या 6 में कवि ने नायिका की बरौनियों की सुंदरता का वर्णन किया है। पद संख्या 7 में कवि ने नायिका की नाक की सुंदरता को केंद्र में रखा है। पद संख्या 8 में नायिका के अमृतरस भरे अधरों का उल्लेख है।

पद संख्या 9 में नायिका के दांतों की सुंदरता कवि की चर्चा का आधार बनी है। पद संख्या 10 में जायसी ने नायिका की वाणी के माधुर्य को सर्वोपरि साबित किया है। पद संख्या 11 में कवि ने नायिका के सुंदर कपोलों का वर्णन किया है। पद संख्या 12 में नायिका के कानों की सुंदरता बताई गई है। पद संख्या 13 में नायिका की ग्रीवा (गला) का सौंदर्य व्यक्त हुआ है। पद संख्या 14 में नायिका की भुजाओं (हाथों) का सौंदर्य वर्णित है। पद संख्या 15 में कवि ने पद्मावती के कुचों (स्तनों) की सुंदरता का वर्णन किया है। पद संख्या 16 में कवि ने नायिका के पेट की सुंदरता का चित्र खींचते हुए उसकी रोमावली और नाभि की भी सुंदरता का वर्णन किया है। इसी तरह पद संख्या 17 में नायिका की पीठ की सुंदरता बताई गई है। पद संख्या 18 में नायिका के कमर की सुंदरता के चित्र है। पद संख्या 19 में जायसी ने नायिका के नाभिकुंड का सौंदर्य उद्घाटित किया है और बीसवें या अंतिम पद में कवि ने नायिका के नितंबों, जांघों की सुंदरता की चर्चा की है। नखशिखखंड का अंत करते हुए जायसी ने कहा है कि, उन्हें श्रृंगार वर्णन करना नहीं आता है और ऊपर से उन्हें नायिका के सौंदर्य की तुलना लायक संसार में कुछ बराबरी का उपलब्ध भी नहीं था। इस तरह जायसी पद्मावती के अप्रतिम रूप सौंदर्य के -चित्र पाठक के सामने उपस्थित करने में सफल हुए हैं।

संकलन का दूसरा अंश 'सिंहलद्वीप खंड' शीर्षक से है। इस खंड में राजा रत्नसेन के हीरामन तोता के साथ पदमावती की खोज में सिंहलद्वीप आने की कथा समायोजित की गई है।

संकलन का तीसरा और अंतिम अंश 'नागमती वियोग खंड' है। 'नागमती' पद्मावत महाकाव्य के नायक राजा रत्नसेन की पत्नी है। उसका पति (रत्नसेन) पद्मावती की खोज में सिंहलद्वीप गया हुआ है। इसलिए वह अपने पति से वियुक्त है। जायसी ने नागमती की इसी वियोग दशा का मार्मिक वर्णन किया है। वस्तुत: नागमती महारानी है, लेकिन जायसी ने उसके वियोग को एक सामान्य भारतीय स्त्री के वियोग के रूप में ही उपस्थित किया है। इसे पढ़कर आपको भी यह अनुभव नहीं होगा कि, आप किसी रानी के वियोग से परिचित हो रहे हैं। सबसे पहले नागमती हीरामन तोता को कोसती है उसे काल तक कहती है (पद संख्या 1)। अपने प्रिय के वियोग में नागमती बावली हो गई है और उसके प्राण निकलना ही चाहते हैं (पद संख्या 2)। नागमती का विरह तब और भी बढ़ जाता है, जब वह देखती है कि, सबके प्रिय वापस आ रहे हैं और उसके प्रिय की कोई सूचना ही नहीं है। वह अपने पट्टमहीयसी होने को कोसने लगती है। जायसी ने नागमती के विरह को महीनों अषाढ़, सावन, भादों आदि के क्रम से व साथ ही विभिन्न ऋतुओं की पृष्ठभूमि में रखते हुए चित्रित किया है। इससे उन्होंने नागमती के विरह की तीव्रता को व्यक्त करने में सफलता पाई है। प्रकृति के साथ रखते हुए नागमती के विरह की मार्मिक व्यंजना संभव हुई है। इस तरह जायसी ने बारह महीनों में नागमती के विरह की दशाओं के मर्मस्पर्शी चित्र खींचे हैं। बारह महीने विरह में गुजरने के बाद भी नागमती अपने प्रिय के संयोग से दूर है। वह सब तरह से कोशिश करके हार जाती है, लेकिन उसे उसका प्रिय नहीं मिलता है। उसका वियोग इतना कारुणिक है कि, प्रकृति भी उसके दुख से अप्रभावित नहीं रहती है। प्रकृति भी उसके दुख में उसके साथ है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने पद्मावत के इस अंश को अद्वितीय कहा है।

नखशिख खंड

का सिंगार[1] ओहि बरनौं, राजा। ओहिक सिंगार ओहि पै छाजा[2]।।
प्रथम सीस कस्तूरी केसा। बलि बासुकि का और नरेसा।।
भौंर केस वह मालति रानी। बिसहर[3] लुरे[4] लेहिं अरघानी[5]।।
बेनी छोरि झार जौं बारा। सरग[6] पतार[7] होइ अंधियारा।।
कोंवर कुटिल केस नग कारे। लहरन्हि भरे भुअंग[8] बेसारे।।
बेधे जनौं मलयगिरि बासा। सोस चढ़े लोटहिं चहुं पासा।।
घुंधरवार[9] अलकैं विषभरी। सँकरे[10] पेम चहैं गिउ परी।।

केश तथा सिर का वर्णन

अस फंदवार[11] केस वै, परा सीस गिउ फांद।
अस्टी कुरी नाग[12] सब, अरूझ[13] केस के बांद। ।।1।।

बरानों माँग सीस उपराहीं[14]। सेंदुर अबहिं चढ़ा जेहि नाहीं।।
बिनु सेंदूर अस जानहु दीआ। उजियर[15] पंथ रैनि महँ कीआ।।
कंचन रेख कसौटी कसी। जनु घन महँ दामिनी[16] परगसी[17]।।
सुरूज[18] किरिन जनु गगन बिसेखी। जमुना मांह सुरसती[19] देखी।।
खाँड़ै धार रूहिर[20] जनु भरा। करबत[21] लेइ बेनी[22] पर धरा।।
तेहि पर पूरि धरे जो मोती। जमुना माँझ[23] गंग कै सोती[24]।।
करबत तपा[25] लेहिं होइ चूरू। मकु सो रूहिर लेइ देइ सेंदूरू।।

माँग की सुंदरता

कनक दुवादस बानि होइ, सोहाग[26] वह माँग।
सेबा करहिं नखत[27] सब, उवै गगन जस गाँग। ।।2।।

---

1. *शृंगार (रूप सज्जा),* 2. *फबता है, शोभित होता है,* 3. *विषधर सांप* 4. *लुढ़कते हुए या लहराते हुए* 5. *मँहक,* 6. *स्वर्ग* 7. *पाताल,* 8. *भुजंग, सर्प* 9. *घुँघराली,* 10. *शृंखला, जंजीर,* 11. *फंदे में फँसाने वाली,* 12. *अष्टौकुरी नाग-अष्ट कुल नाग (वासुकि तक्षक, कुलक कर्कोटक पद्म, शंखचूड़, महापद्म, धनंजय नागों के हैं* 13. *उलझकर* 14. *ऊपर* 15. *उजाला* 16. *बिजली* 17. *प्रकट हुई है* 18. *सूर्य* 19. *सरस्वती* 20. *रक्त, रूधिर* 21. *आरा, करपत्र* 22. *दो अर्थ है* 1. *त्रिवेणी* 2. *वेणी* 23. *मध्य, बीच* 24. *स्रोत सोता* 25. *तपस्वी,* 26. *दो अर्थ है-* 1. *सौभाग्य* 2. *सोहाग,* 27. *नक्षत्र*

NMDC-067

कहौ। लिलार[28] दुइज[29] कै जोती[30]। दुइजहि जोति कहां जग ओती[31]।
सहस[32] किरिंन जो सुरूज दिपाई। देखिं लिलार सोउ छपि[33] जाई।।
का सरिवर तेहि देउ मयंकू[34]। चांद कलकी, वह निकलंकू[35]।। सुंदर ललाट
औ चांदहि पुनि राहु[36] गरासा[37]। वह बिनु राहु सदा परगासा।।
तेहिं लिलार पर तिलक बईठा। दुइज पाट जानहु ध्रुव दीठा।।
कनक पाट जनु बैठा राजा। सब सिंगार अत्र[38] लेइ साजा।।
ओहि आगे थिर रहा न कोऊ। दहु का कहै अस जुरै संजोऊ।।

खरग[39], धनुक[40], चक बान दुइ, जग मारन तिन्ह नावँ।
सुनि कै परा मुरूछि कै (राजा) मोकहँ हए[41] कुठाँव[42]। ।।3।।

भौंहि स्याम धनुक जनु ताना। जा सहुं[43] हेर मार[44] विष बाना।।
हनै[45] धुनै उन्ह भौंहनि चढ़े। केइ हतियार[46] काल अए गढ[47]?
उहै धनुक किरसुन[48] पर अहा। उहै धनुक राघो कर गहा।।
ओहि धनुक रावन संघारा[49]। ओहि धनुक कंसासुर मारा।। भौंहों का वर्णन
ओहि धनुक बेधा हुत[50] राहू। मारा ओहि सहस्त्राबाहू।।
उहै धनुक मैं तापहँ चीन्हा। धानुक[51] आप बेझ[52] जग कीन्हा।।
उन्ह भौंहनि सरि केउ न जीता। अछरी[53] छपीं छपीं गोपीता[54]।।

भौंह धनुक धनि धानुक दूसर सरि न कराइ।
गगन धनुक[55] जो ऊगै[56], लाजहि[57] सो छपि जाइ। ।।4।।

नैन बाँक, सरि पूज न कोऊ। मानसरोदक[58] उलथहिं[59] दोऊ।।
राते कँवल[60] करहिं अलि भवां[61]। घूमहिं माति चहहिं अपसवाँ[62]।। नेत्रों की सुंदरता
उठहिं तुरंग लेहिं नहिं बागा। चाहहिं उलथि गगन कहँ लागा।।
पवन झकोरहिं देइ हिलोरा। सरग लाइ भुई लाइ बहोरा[63]।।

---

28. *ललाट, माथा,* 29. *द्वितीया (द्वितीया के चंद्रमा का प्रकाश)* 30. *ज्योति प्रकाश,* 31. *उतनी,* 32. *सहस्त्र* 33. *छिप (जाएगा)* 34. *चंद्रमा* 35. *निष्कलंक (कलंक रहित)* 36. *राहु (नौ ग्रहों में से एक। ऐसी मान्यता है कि, चंद्रमा को राहु ग्रस लेता है)* 37. *ग्रस्त किया हुआ है,* 38. *अस्त्र* 39. *खड्ग,* 40. *धनुष* 41. *मारा,* 42. *बुरी जगह।* 43. *सामने,* 44. *मारा,* 45. *मारा जाता है,* 46. *अस्त्र* 47. *गढ़ा है, बनाया है, तैयार किया है,* 48. *कृष्ण,* 49. *संहार किया,* 50. *था,* 51. *धनुर्धर,* 52. *निशाना,* 53. *अप्सरा* 54. *गोपियां* 55. *गगन-धनुष से अभिप्राय इंद्रधनुष से है,* 56. *उगता है,* 57. *लज्जा से* 58. *मानसरोवर,* 59. *उछलते है,* 60. *कमल,* 61. *फेरा, चक्कर* 62. *उड़कर भागना चाहते हैं* 63. *ताना*

जग डोलै डोलत नैनाहाँ। उलटि अड़ार[64] जाहिं पल माहाँ।।
जबहिं फिराहिं गगन गहि बोरा। अस वै भौंर चक के जोरा[65]।।
समुद[66] हिलोर फिरहिं जनु झूले। खंजन लरहिं मिरिग[67] जनु भूले।।

सुभर[68] सरोवर नयन वै, मानिक[69] भरे तरंग।
आवत तीर फिरावही[70], काल भौंर तेहिं संग। ।।5।।

बरूनी का बरनौं इमि बनी। साधे बान जानु दुइ अनी[71]।।
जुरी[72] राम रावन कै सैना। बीच समुद्र भए दुइ नैना।।
वारहिं पार बनावरि[73] साधा। जा सहुं हेर लाग विष बाधा।। बरौनियों का सौंदर्य
उन्हे बानंन्ह अस को जो न मारा। बेधि रहा सगरौ[74] संसारा।।
गगन नखत जो जाहि न गने। वै सब बान ओही के हने।।
धरती बान बेधि सब राखी। साखी[75] ठाढ़ देहिं सब साखी[76]।।
रोवँ रोवँ मानुष तन ठाढ़े। सूतहि सूत बेध अस गाढ़े।।

बरूनि बान अस आपहं, बेधे रन[77] बन ढाँख।
सौजहिं तन सब रोवां पंखिहि तन सब पाँख[78]। ।।6।।

नासिक खरग देउं कह जोगू[79]। खरग खीन, वह बदन-संजोगू।।
नासिक[80] देखि लजानेउ[81] सूआ[82]। सूक आइ बेसरि होइ ऊआ।।
सुआ जो पिअर हिरामन लाजा। और भाव का बरनौं राधा।। नाक की सुंदरता
सुआ, सो नाक कठोर पँवारी[83]। वह कोंवर तिल पुहुप[84] सँवारी।।
पुहुप सुंगध करहिं एहि आसा[85]। मकु हिरकाइ[86] लेइ हम्ह पासा।।
अधर दसन[87] पर नासिक सोभा। दारिउँ बिंब देखि सुक लोभा।।
खंजन दुहूं दिसि केलि कराहीं। दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं।।

---

64. ऊँचा पहाड़ 65. बल से, जोर से, 66. समुद्र 67. मृग, हिरण, 68. सुंदर, अच्छी तरह भरा हुआ, 69. माणिक्य (बहुमूल्य रत्न) 70. चक्कर देते हैं 71. सेना, 72. जुटी है, 73. वाणावली, तीरों की पंक्ति 74. समग्र, संपूर्ण 75. वृक्ष 76. साक्ष्य, गवाही 77. रण, युद्ध 78. पंख, 79. योग्य 80. नाक, 81. लज्जित हुआ, 82. तोता, 83. लोहारों का एक उपकरण, जिससे लोहे में छेद करते हैं, 84. पुष्प, फूल 85. आशा, 86. पास सटा ले, 87. दांत,

NMDC-067

देखि अमिय[88] रस अधरन्ह, भएउ नासिका कीर[89]।
पौन[90] बास[91] पहुँचावै, अस रम छाँड़ न तीर। ।।7।।

अधर सुरंग अमी[92] रस भरे। बिंब सुरंग लाजि बन फरे।।
फूल दुपहरी जानौं राता। फूल झरहिं ज्यों ज्यों कह बाता।।
हीरा लेइ सो विद्रुम[93] धारा। बिहँसत[94] जगत होइ उजियारा।।
भए मंजीठ[95] पानन्ह रंग लागे। कुसुम रंग थिर[96] रहै न आगे।।
अस कै अधर अमी भरि राखे।अबहिं अछूत, न काहू चाखे[97]।।
मुख तँबोल रँग धारहिं रसा। केहि मुख जोग जो अमृत बसा।।
राता जगत देखि रँगराती। रूहिर भरे आछहि बिहँसाती।।

अधरों का सौंदर्य

अमी अधर अस राजा, सब जग आस करेइ।।
केहि कहै कवँल बिगासा, को मधुकर रस लेइ। ।।8।।

दसन चौक[98] बैठे जनु हीरा। औ बिच बिच रंग स्याम गंभीरा।।
जस भादौं निसि दामिनी दीसी। चमकि उठै तस बनी बतीसी[99]।।
वह सुजोति हीरा उपराहीं। हीरा जाति सो तेहि परछाहीं।।
जेहि दिन दसनजोति निरमई। बहुतै जाति जोति ओहि भई।।
रवि ससि नखत दिपहिं[100] ओहि जोती। रतन पदारथ मानिक मोती।।
जहँ जहँ बिहंसि सुभावहि हँसी। तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी।।
दामिनी दमकि न सरवारि पूजी। पुनि ओहि जोति और को दूजी।।

दाँतो की सुंदरता

हँसत दसन अस चमके, पाहन[101] उठे झरक्कि[102]।
दारिउँ सरि जो न कै सका, फाटेउ[103] हिया दरक्कि[104]। ।।9।।

---

88. *अमृत* 89. *तोता* 90. *वायु,* 91. *सुंगध,* 92. *अमृत* 93. *मूँगा* 94. *हँसते हुए,* 95. *बहुत गहरा मजीठ के रंग का लाल* 96. *स्थिर* 97. *चखा हुआ,* 98. *आगे के चार दांत (दसन चौक)* 99. *बत्तीस दांत* 100. *दीप्तिमान होते हैं(प्रकाशित होते हैं)* 101. *पत्थर हीरा,* 102. *झलक गए* 103. *फट गया* 104. *दरककर (दरार पड़कर)*

NMDC-067

रसना[105] कहीं जो कह रस बाता। अमृत बैन सुनत मन राता।।
हरै सो सुर चातक कोकिला। बिनु बसंत यह बैन न मिला।।
चातक कोकिल रहहिं जो नाहीं। सुनि वह बैन लाज छपि जाहीं।। वाणी माधुर्य
भरे प्रेमरस बोलै बोला। सुने सो माति घूमि कें डोला।।
चतुरवेद[106] मत सब ओहि पाहाँ। रिग, जजु, साम अथरबन माहाँ।।
एक एक बोल अरथ चौगुना। इंद्र मोह, बरम्हा[107] सिर घुना।।
अमर[108] भागवत[109] पिंगल[110] गीता[111]। अरथ बूझि पंडित[112] नहिं जीता।।

भासवती[113] औ ब्याकरन, पिंगल पढ़ै पुरान।
बेद भेद सौं बात कह, सुजनन्ह[114] लागै बान। ।। 10।।

पुनि बरनौं का सुरँग कपोला। एक नारँग दुइ किए अमोला।।
पुहुप पक रस अमृत साँधे[115]। केइ यह सुरंग खरौरा[116] बाँधे।।
तेहि कपोल बाएं तिल[117] परा। जेइ तिल देखि सो तिल तिल[118] जरा।।
जनु घुँघुची[119] ओहि तिल करमुही[120]। बिरह बान साधै सामुहीं।
अगिनि बान जानों तिल सूझा। एक कटाछ[121] लाख दस जूझा। सुंदर कपोल
सो तिल गाल मेटि नहिं गएऊ। अब वह गाल काल जग भएऊ।।
देखत नैन परी परिछाही। तेहि तें रात साम उपराहीं।।

सो तिल देखि कपोल पर, गगन रहा धुव गाड़ि।
खिनहिं[122] उठै खिन बूडै डोलै नहिं तिल छाँड़ि। ।। 11।।

स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे। कुंडल कनक रचे उजियारे।।
मनि कुंडल झलकैं अति लोने[123]। जनु कौंधा लौकहि[124] दुइ कोने।। कानों का सौंदर्य
दुहुँ दिसि चाँद सुरूज चमकाहीं। नखतन्ह[125] भरे निरखि नहिं जाहीं।।
तेहि पर खूंट[126] दीप दुइ बारे। दुइ धुव दुऔ खूंट[127] बैसारे।।

---

105. जीभ 106. चार वेद *(ऋग, यजु, साम और अथर्व)* 107. *ब्रह्मा,* 108. *अमरकोश (संस्कृत का एक कोश जिसे अमरसिंह ने लिखा है)* 109. *श्रीमद्भागवत* 110. *छंद शास्त्र* 111. *गीता* 112. *विद्वान* 113. *भास्वती नामक ज्योतिष का ग्रंथ* 114. *सुजानो या चतुरों को* 115. *सने, गूंथे* 116. *खांड के लड्डू, खँडौरा* 117. *तिल (शारीरिक चिन्ह)* 118. *थोड़ा-थोड़ा करके,* 119. *लाल रंग का फल* 120. *काले मुहँ वाली,* 121. *कटाक्ष (कटीले नैन),* 122. *क्षण में,* 123. *चमकीन, लावण्ययुक्त सुंदर,* 124. *चमकती है, दिखाई पड़ती है* 125. *नक्षत्र* 126. *कान का एक गहना,* 127. *कोने*

NMDC-067

पहिरे खुंभी[128] सिंघलदीपी[129]। जनौं भरी कचपचिया[130] सीपी।।
खिन खिन जबहि चीर सिर गहे। काँपति बीजु दुऔ दिनि रहै।।
डरपहिं देवलोक सिंघला। परे न बीजु टूटि एक कला।।

करहिं नखत सब सेवा स्रवन दीन्ह अस दोउ।
चांद सुरूज अस गोहने[131] और जगत का कोउ। ।12।।

बरनौं गीउ[132] कंबु[133] कै रीसी[134]। कंचन तार लागि जनु सीसी।।
कुंदे[135] फेरि जानु गिउ काढ़ी। हरी पुछार[136] ठगी जनु ठाढ़ी।।
जनु हिय काढ़ि परेवा ठाढा। तेहि तैं अधिक भाव गिउ बाढ़ा।।
चाक चढ़ाइ साँच[137] जनु कीन्हा। बाग तुरंग[138] जानु गहि लीन्हा।।
गए मयूर तमचूर[139] जो हारे। उहै पुकारहिं साँझ सकारे।।
पुनि तेहि ठाँव परी तिनि रेखा। घूंट जो पीक लोक सब देखा।।
धान ओहि गीउ दीन्ह बिधि भाऊ। दहुँ कासीं लेइ करै मेराऊ।।

गले का वर्णन

कंठसिरी मुकुतावली, सोहै अभरन[140] गीउ।
लागै कंठहार होइ, को तप साधा जीउ। ।13।।

कनक दंड दुइ भुँजा कलाई। जांनौं फेरि कुँदेरै भाई[141]।।
कदलि[142]-गाम[143] कै जानौ जोरी। औ राती ओहि कँवल हथोरी[144]।।
जानो रकत हथोरी बूड़ी। रवि परभात तात[145] वै जूड़ी।।
हिया काढ़ि जनु लीन्हेसि हाथा। रूहिर भरी अंगुरी तेहि साथा।।
औ पहिरे नग जरी अंगूठी। जग बिनु जीउ, जीऊ ओहि मूठी।।
बाहूँ कंगन, टाड़[146] सलोनी। डोलत बाँह भाव गति लोनी।
जानौ गति बेड़िन[147] देखराई। बाँह डोलाइ जीउ लेइ जाई।।

भुजाओं का सौंदर्य

---

128. *कान का एक आभूषण,* 129. *सिंहल द्वीप की,* 130. *कृतिका नक्षत्र जिसमें बहुत से तारे एक में गुथे दिखाई पड़ते हैं,* 131. *साथ में सेवा में* 132. *ग्रीवा, गला,* 133. *शंख* 134. *ईर्ष्या उत्पन्न करने वाली* 135. *खराद* 136. *मोर* 137. *साँचा,* 138. *घोड़ा* 139. *मुर्गा* 140. *आभूषण* 141. *फिराई हुई, खराद पर कसी हुई,* 142. *केला,* 143. *नरम कल्ला* 144. *हथेली,* 145. *गरम,* 146. *बाँह पर पहनने वाला एक गहना,* 147. *नाचने गाने वाली एक जाति*

भुज उपमा पौनार[148] नहिं, खीन[149] भएउ तेहि चिंत।।
ठाँवहि ठाँव बेध भा, ऊबि सांस लेइ नित्त[150]। ।।14।।

हिया थार, कुच कंचन लाडू। कनक कचोर[151] उठे जनु चारू।।
कुंदन बेल साजि जनु कूदे[152]। अमृत रतन मोन[153] दुइ मूदे।।
बेधे भौंर कंट केतकी। चाहहिं बेध कीन्ह कंचुकी।।
जीवन बान लेहि नहि बागा। चाहहिं हुलसि हिये हठ लागा।।
अगिनि बान दुइ जानौं साधे। जग बेधहिं जौ होहिं न बाँधे।।
उतंग जभीर होइ रखवारी। छुइ को सकै राजा कै बारी[154]।।
दारिउँ दाख[155] फरे अनचाखे। अस नारँग दहुं का कहँ राखे।।

स्तनों की सुंदरता

राजा बहुत मुए तपि, लाइ लाइ भुइं माथ।
काहू छुवै न पाए, गए मरोरत हाथ। ।।15।।

पेट परत जनु चंदन लावा। कुहँकुहँ केसर बरन[156] सुहावा[157]।।
खीर अहार न कर सुकुवाँरा। पान फूल के रहै अधारा।।
साम भुअंगिनि रोमावली। नाभी निकसि कँवल कहँ चली।।
आइ दुऔ नारंग विच भई। देखि मयूर ठमकि[158] रहि गई।।
मनहुँ चढ़ी भौरन्ह कै पांती। चंदन खाँभ बास कै माती।।
की कालिंदी बिरह सताई। चलि पयाग[159] अरइल[160] बिच आई।।
नाभि कुंड बिच बारानसी[161]। सौं ह को होइ, मीचु[162] तहै बसी।।

पेट की सुंदरता

सिर करवत, तन करसी[163] बहुत सीझ तेहि आस।
बहुत धूम[164] घुटि घुटि[165] मुए, उतर न देइ निरास। ।।16।।

बैरिनि पीठि लीन्हि वह पाछे। जनु फिरि चली अपछरा[166] काछे।।
मलयागिरि कै पीठि संवारी। बेनी नागिनि चढ़ी जो कारी[167]।।

---

148. कमल का डंठल 149. क्षीण, 150. सदा 151. कटोरे 152. खरादे हुए 153. मोना, डिब्बा, पिटारा 154. दो अर्थ हैं, 1. कन्या 2. बगीचा, 155. अंगूर द्राक्षा, 156. वर्ण, रंग 157. सुशोभित है 158. ठमककर (आश्चर्यमिश्रित भाव की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त हुआ है) 159. प्रयाग (पुराण प्रसिद्ध तीर्थ स्थल) 160. प्रयाग में वह स्थान जहाँ यमुना, गंगा से मिलती है, 161. वाराणसी, 162. मृत्यु 163. उपले या कंडे की आग जिसमें शरीर सिझाना बड़ा तप समझा जाता था, 164. धुआँ 165. घुटकर 166. अप्सरा 167. काली,

NMDC-067

लहरैं देति पीठि जनु चढ़ी। चीर ओहार केंचुली मढ़ी।
दहुँ का कहै अस बेनी कीन्हीं। चंदन बास भुअंगै लीन्हीं।।
किरसुन करा चढ़ा ओहि माथे। तब तौ छूट अब छुटै न नाथे।।
कारे कवंल गहे मुख देखा। ससि पाछे जनु राहु बिसेखा।।
को देखै पावै वह नागू। सो देखै जेहि के सिर भागू[168]।।

पीठ की सुंदरता

पन्नग[169] पंकज मुख गहे, खंजन तहाँ बईठ।
छत्र, सिंघासन, राज, धन, ताकहै होइ जो दीठ। ।।17।।

लंक[170] पुहुमि अस आहि न काहू। केहरि कहौं न ओहि सरि ताहू
बसा[171] लंक बरनै जग झीनी। तेहि तें अधिक लंक वह खीनी।।
परिहंस[172] पियर भए तेहि बसा। लिए डंक लोगन्ह कहँ डसा।।
मानहुँ नाल खंड दुइ भए। दुहुँ बिच लंक तार रहि गए।।
हिय के मुरे चलै वह तागा[173]। पैग देत कित सहि सक लागा।।
छुद्रघंटिका[174] मोहहिं राजा। इंद्र अखाड़[175] आइ जनु बाजा।।
मानहुँ बीन[176]। गहे कामिनी। गावहिं सबै राग रागिनी।।

कमर की सुंदरता

सिंघ[177] न जीता लंक सरि, हारि लीन्ह बनवासु[178]।
तेंहि रिस[179] मानुस रकत पिय, खाइ मारि कै माँसु। ।।18।।

नाभिकुंड सो मलय समीरू। समुद्र भँवर जस भँवै[180] गँभीरू।।
बहुतै भँवर बवंडर[181] भए। पहुँचि न सके सरग कहँ गए।।
चंदन माँझ कुरंगिनि[182] खोजू[183]। दहुँ को पाउ, को राजा भोजू।।
को ओहि लागि हिवंचल[184] सीझा। का कहै लिखी ऐस की रीझा।।
तीवइ[185] कंवल सुगंध सरीरू। समुद लहरि[186] सोहै तन चीरू।।
भूलहिं रतन पाट के झोंपा[187]। साजि मैन अस का पर कोपा।।
अबहिं सो अहै कँवल कै करी। न जनौ कौन भौंर कहँ धरी।।

नाभिकुंड

---

168. *भाग्य* 169. *सर्प, सांप* 170. *कमर* 171. *बर्रै,* 172. *ईर्ष्या, डाह,* 173. *धागा, सूत* 174. *घुंघरूदार, करधनी,* 175. *दरबार* 176. *वीणा, सितार की तरह का, किंतु उससे बड़ा, प्राचीन काल का एक बाजा,* 177. *सिंह शेर,* 178. *वनवास* 179. *क्रोध, खीझ,* 180. *घूमता है, चक्कर खाती है,* 181. *तेज चक्करदार हवा* 182. *हिरण* 183. *खोज, खुर का पड़ा हुआ निशान,* 184. *हिमाचल* 185. *स्त्री* 186. *समुद लहरि- लहरिया कपड़ा,* 187. *गुच्छा*

NMDC-067

बेधि रहा जग बासना[188] परिमल मेद सुगंध।
तेहि अरघानि भौंर सब लुबुधे[189] तजहिं न बंध। ।।19।।

बरनौं नितंब[190] लंक कै सोभा। औ गज गवन[191] देखि मन लोभा।।
जुरे जघ शोभा अति पाए। केरा[192] खंभ[193] फेरि जनु लाए।।
कवंल चरन अति रात बिसेखी। रहैं पाट पर पुहुमि न देखी।।
देवता हाथ हाथ पगु लेहीं। जहँ पगु धरै सीस तहँ देहीं।।
माथे भाग कोउ अस-पावा। चरन कंवल लेइ सीस चढ़ावा।।
चूरा चाँद सुरूज उजियारा। पायल[194] बीच करहिं झनकारा।।
अनवट बिछिया[195] नखत तराईं। पहुँचि सकै को पायँन ताईं।।

नितंबों और जांघों की सुंदरता

बरनि सिंगार न जानेउँ नखसिख जैस अभोग।
तस बग किछुइ न पाएउँ, उपमा देउ ओहि जोग। ।।20।।

188. *वासना (विषय वासना)*, 189. *लुब्ध हुए* 190. *नितंब* 191.. *गमन* 192. *केला*, 193. *खंभा*, *स्तंभ*
194. *पैजनी*, *पाँवों का गहना*, 195. *पैर की अंगुलियों में पहनने का गहना*,

NMDC-067

पूछा राजै कहु गुरू सूआ । न जनौं आजु कहाँ दहुँ ऊआ।।
पौन बास सीतल लेइ आवा। कया[2] दहत चंदनु जनु लावा।।
कबहुँ न ऐस जुड़ान[3] सरीरू। परा अगिनि महँ मलय समीरू[4]।।
निकसत आव किरिन रविरेखा। तिमिर[5] गए निरमल जग देखा।
उठै मेघ अस जानहुँ आगै। चमके बीजु गगन पर लागै।।
तेहि ऊपर जनु ससि परगासा। औ सो चंद कचपची गरासा।।
और नखत चहुँ दिसि उजियारे। ठावहिं ठावँ दीप थस बारे[6]।।

राजा रत्नसेन का सिंहलद्वीप पहुँचना और अपनी प्रसन्नता व्यक्त करना

और दखिन[7] दिसि[8] नीयरे[9] कंचन मेरु देखाव।
जनु बसंत ऋतु आवै, तैसि बाल जग आव। ।1।।

तूं राजा जस बिकरम आदी[10]। तू हरिचंद बैन[11] सतबादी[12]।।
गोपिचंद तुइ जीता जोगू। औ भरथरी[13] न पूज बियोग।।
गोरख सिद्धि[14] दीन्ह तोहि हाथू। तारी[15] गुरू मछंदरनाथू[16]।।
जीत पेम तुई भूमि अकासू। दीठि परा सिंघल कबिलासू।।
वह जो मेघ गढ़ लाग अकासा। बिजुरी कनय[17] कोट चहुँ पासा।।
तेहि पर ससि जो कचपचि भरा। राजमंदिर सोने नग जरा।।
और जो नखत देख चहुँ पासा। सब रानिन्ह कै आहिं अवासा[18]।।

तोते द्वारा राजा रत्नसेन की सत्यवादिता, शौर्य और सौंदर्य का वर्णन

गगन सरोवर, ससि कँवल, कुमुद तराइन्ह पास।
तू रवि ऊआ, भौंर होइ, पौन मिला लेइ बास। ।2।।

सो गढ़[19] देखु गगन तें ऊँचा। नैनन्ह देखा, कर न पहूँचा।।
बिजुरी चक फिर चहुं फरी। औ जमकात[20] फिरै जम-केरी।।
धाइ जो बाजा कै मन साधा। मारा चक्र भएउ दुइ आधा।।
चाँद सुरज औ नखत तराइ। तेहि डर अंतरिख[21] फिरहि सबाई।।
पौन जाइ तहँ पहुंचे चहा। मारा तैंस लाटि भुईं रहा।।

पद्मावती के किले का दर्शन। वहाँ न पहुँच पाने का दुख

---

1. *तोता,* 2. *काया, शरीर,* 3. *शीतल हुआ, तृप्त हुआ,* 4. *समीर,* वायु 5. *अंधकार,* 6. *जलाये हुए,* 7. *दक्षिण* 8. *दिशा* 9. *समीप, निकट,* नजदीक, 10. *आदि, बिल्कुल,* 11. *वचन* अथवा वैन्य *(विन का पुत्र पृथु),* 12. *सत्यवादी (राजा हरिश्चंद्र के लिए प्रयुक्त है),* 13. *राजा भतृहरि,* 14. *सिद्धि, शक्ति (विलक्षण)* 15. *उबारना* 16. *मत्स्येद्रंनाथ, गोरखनाथ के गुरु* 17. *कनक, सोना* 18. *आवास* 19. *दुर्ग,* 20. *एक प्रकार का खाँडा,* 21. *अंतरिक्ष,*

अगिनि उठी, जरि बुझी निआनो[22]। धुआं उठा, उठि बीच बिलाना[23]।।
पानि उठा उठि जाइ न छूआ। बहुरा रोइ, आइ भुइं चूआ।।

रावन चहा सौंह होइ, उतरि गए दस माथ।
संकर धरा लिलाट भुइँ, और को जोगीनाथ[24]। ।।3।।

तहाँ देखु पदमावति रामा। भौंर न जाइ, न पंखी[25] नामा।।
अब तोहि देउं सिद्धि एक जोगू। पहिले दरस[26] होइ, तब भोगू।।
कंचन मेरू देखाव सो जहाँ। महादेव कर मंडप तहाँ।
माघ मास, पाछिल[27] पछ[28] लागे। सिरी पंचमी होइहि आगे।।
उघरिहि महादेव कर बारू[29]। पूजिहि जाइ सकल[30] संसारू[31]।।
पदमावति पुनि पूजै आवा। होइहि एहि मिस[32] दीठि मेरावा[33]।।

उस महल में पक्षी भी नहीं जा सकता। इसलिए आप लोग महादेव के मंडप में आश्रय लें। पद्मावती यहां पूजा करने आएगी तब आप उनका दर्शन कर लेना।

तुम्ह गौनहु ओहि मंडप, हौं पदमावति पास।
पूजै आइ बसंत जब, तब पूजै मन आस। ।।4।।

राजै कहा दरस जौ पावौं। परबत[34] काह, गगन कहै धावौं[35]।।
जेहि परवत पर दरसन लहना। सिर सौं चढौं, पाँव का कहना।।
मोहूँ भावै ऊंचै ठाऊँ। ऊंचै लेउँ पिरीतम[36] नाँऊ[37]।।
पुरूषहि चाहिए ऊँच हियाऊ। दिन दिन ऊँचे राखै पाऊ।।
सदा ऊँच पै सेइय बारा। ऊचै सौं कीजिय बेवहारा[38]।।
ऊँचै चढैं, ऊँच खंड सूझा। ऊंचे पास ऊँच मति बूझा[39]।।
ऊँचे संग संगति नित कीजै। ऊँचे काज[40] जीउ[41] पुनि दीजैं।।

रत्नसेन की पद्मावती से मिलने की आतुरता

दिन दिन ऊँच होह सो, झेहि ऊंचे पर चाउ[42]।।
ऊँचे चढ़त जो खसि परै[43], ऊँच न छाड़िय काउ।। ।।5।।

---

22. *अंत में,* 23. *खो गया, लुप्त हो गया,* 24. *योगीश्वर,* 25. *पक्षी* 26. *दर्शन* 27. *पिछला* 28. *पक्ष (शुक्ल और कृष्ण)* 29. *द्वार,* 30. *संपूर्ण* 31. *संसार,* 32. *बहाने से* 33. *दृष्टि मिलने, परस्पर दर्शन (देखादेखी),* 34. *पहाड़* 35. *दौड़ूँ,* 36. *प्रियतम* 37. *नाम,* 38. *व्यवहार* 39. *समझता है,* 40. *काम,* 41. *जीवन, प्राण* 42. *चाव,* 43. *गिर पड़ना*

NMDC-067

हीरामनि देइ बचा कहानी[44]। चला जहाँ पदमावति रानी।।
राजा चला सँवरि सो लता[45]। परबत कहै जो चला परबत[46]।।
का परबत चढ़ि देखे राजा। ऊँच मँडप सोने सब साजा।।
अमृत सदाफर फरे अपूरी। औ तहँ लागि सजीवन मूरी।।
चौमुख मंडप चहू केबारा[47]। बैठे देवता चहूँ दुवारा[48]।।
भीतर मंडप चारि खँभ लागे। जिन्ह वै छुए पाप तिन्ह भागे।।
संख घंट घन बाजहिं सोई। औ बहु होम जाप तहै होई।।

हीरामन तोते का पद्मावती के पास पहुँचना

महादेव कर मंडप, जग मानुस तहँ आव।
जस हींछा[49] मन जेहि के, सो तैसै फल पाव[50]। ।।6।।

---

44. अपनी कहानी कहकर 45. पद्मलता रानी पद्मावती 46. तोता तोते का प्यार से पुकारने वाला नाम) 47. किवाड़, दरवाजा, 48. द्वार 49. इच्छा 50. पाता है।

NMDC-067

नागमती वियोग खंड

नागमती चितउर पथ हेरा[1]। पिउ[2] जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।
नागर[3] काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा[4]।।
सुआ काल होइ लेइगा[5] पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।
भएउ नरायन[6] बावँन करा[7]। राज करत राजा बलि छरा[8]।।
करन[9] पास लीन्हेउ कै छंदू[10]। बिप्र रूप धरि झिलमिल[11] इंदू।
मानत भोग गोपिचँद भोगी। लेइ अपसदा[12] जलंधर जोगी।।
लेइगा कृस्नहि[13] गरूड़ अलोपी।कठिन बिछोह[14], जियहि किमि गोपी

रत्नसेन की पत्नी नागमती की चिन्ता

सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह।
झुरि झुरि[15] पींजर[16] हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह। ।।1।।

पिउ बियोग अस बाउर[17] जीऊ। पपिहा[18] निति[19] बोले 'पिउ पीऊ'।
अधिक काम दाधे सो रामा। हरिलेइसुवा गएउ जिउ नामा।।
बिरह बान तस लाग न डोली। रकत पसीज[20] भीजि गइ चोली[21]।।
सूखा हिया[22] हार भा भारी[23]। हरे हरे[24] प्रान तजहि सब नारी।।
खन एक आव पेट महँ! साँसा। खनहिं जाइ पिउ, होइ निरासा।।
पवन डोलावहिं सीचहिं[25] चोला[26]। पहर[27] एक समुझहिं मुख बोला।।
प्रान पयान[28] होत को राखा? को सुनाव पीतम कै भाखा[29]?

प्रिय का वियोग

आजि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि।
हंस[30] जो रहा सरीर महँ, पाँख जरा[31], गा भागि। ।।2।।

पाट महादेइ![32] हिये न हारू। समुझि जीउ, चित चेतु सँभारू।।
भौंर कँवल सँग होइ मेरावा[33]। सँवरि नेह मालति पहँ आवा।।

---

1. पथ हेरा, रास्ता देखती है 2. प्रिय, 3. नायक, 4. हर लिया, चुरा लिया, हरण कर लिया, 5. ले गया, 6. नारायण (भगवान) 7. बावन करा, वामन रूप 8.. छला, छल किया, 9. दानवीर कर्ण, 10. धूर्तता, छलछंद, 11. चमक 12. चल दिया, 13. कृष्ण को, 14. वियोग, 15. सूख सूखकर 16. हड्डी का ढाँचा 17. बावला, पागल, 18. पपीहा पक्षी 19. नित्य, हमेशा 20. पसीजने से, 21. अंगिया 22. हृदय, दिल, 23. वजनी 24. धीरे-धीरे 25. सींचता है, 26. शरीर, 27. प्रहर(तीन घंटे का एक प्रहर होता है), 28. प्रयाण, (चलने को उद्यत है) 29. भाषा, बोली 30. हंस, पक्षी 2: जीव(जीवात्मा के लिए पारंपरिक प्रयोग), 31. जल गया, 32. पट्ट महादेवी, पटरानी, 33. मिलन,

रानी को सांत्वना

पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास[34], बाँधु मन थीती[35]।।
धरतिहि जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरषा ऋतु मेहा।।
पुनि बसंत ऋतु आव नवेली[36]। सो रस, सो मधुकर, सो बेली।।
जिनि[37] अस जीव करसि तू बारी। यह तरिवर पुनि उठिहि सवारी।।
दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोइ सरवर सोई हंसा।।

मिलहिं जो बिछुरै[37] साजन, अंकम[38] भेंटि अहंत।
तपनि मृगसिरा[39] जे सहैं, ते अद्रा[40] पलुहंत[41]। ।।3।।

वर्षा श्रतु का आगमन

चढ़ा असाढ़ गगन घन गाजा[42]। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।
धूम[43], साम, धौरे[44] घन धाए। सेत[45] धजा[46] बग-पांति[47] देखाए।।
खड़ग बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।।
ओनई[48] घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन[49] हौं घेरी।।
दादुर[50] मोर कोकिला, पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
पुष्प नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह[51], मंदिर को छावा?
अद्रा लाग लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदत देई?

जिन्ह घर कंता ते सुखी, तिन्हं गारौ[52] औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै[53], हम सुख भूला सर्ब। ।।4।।

उद्दीपन के रुप में सावन मास का वर्णन

सावन बरस मेह[54] अति पानी। भरनि परी[55], हौं बिरह झुरानी[56]।।
लाग पुनरबसु[57] पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहै कंत सरेखा[58]।।
रकत कै आँसु परहिं भुई टूटीं। रेंगि चलीं जस बीरबहूटी[59]।।
सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला। हरियरि[60] भूमि, कुसुंभी चोला।।
हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह झुलाइ देइ झकझोरा।।
बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर, भा फिरै भँभीरी[61]।।
जग जल बूढ़ जहाँ लगि ताकी। मोरि नाव खेवक[62] बिनु थाको[63]।।

---

34. टेकु पियास, प्यास, 35. स्थिरता, धैर्य 36. नई-नई 37. नहीं 38. बिछड़े, अलग हुए 39. गोद में, 40. एक नक्षत्र 41. आर्द्रा नामक नक्षत्र, 42. पनपते हैं, पल्लवित होते हैं, 43. गरजा 44. धूमले (धूमिल) रंग के, 45. धवल, सफेद 46. श्वेत 47. ध्वजा, 48. बगुलों की पंक्ति 49. झुकी 50. कामदेव 51. नाथ, स्वामी 52. गौरव, अभिमान, 53. बाहर है 54. मेघ 55. भरनि परी-खेतों में भरनी लगी 56. सूख गई 57. पुनर्वसु नामक नक्षत्र 58. चतुर 59. गहरे लाल रंग का एक छोटा रेंगने वाला कीड़ा (बरसाती) जिसका शरीर बहुत कोमल मखमली होता है, 60. हरे रंग की, हरीतिमा, हरियाली, 61. एक प्रकार का फतिंगा (कीड़ा) जो शाम के समय बरसात में आकाश में उड़ता दिखाई पड़ता है 62. खेने वाला(न.विक), 63. थक गई है, रूक गई है,

परबत समुद अगम बिच, बीहड़ वन[64] बनढाँख।
किमि कै भेंटौं कंत तुम्ह? ना मोहि पाँव न पाँख। ।।5।।

भा भादों दूभर[65] अति भारी। कैसे भरौं[66] रैनि अँधियारी।।
मंदिर[67] सून[68] पिउ अनतै[69] बसा। सेज[70] नागिनी[71] फिरि फिरि डसा[72]।। भादो का महीना
रहौं अकेलि[73] गहे एक पाटी[74]। नैन पसारि मरों हिय फाटी।
चमकि बीजु घन गरजि तरासा[75]। बिरह काल होइ जीउ गरासा।।
बरसै मघा झकोरि झकोरी[76]। मोर दुइ नैन चुवैं[77] जस ओरी[78]।।
धनि सूखै भरे भादौं माहा। अबहुं न आएन्हि सींचेन्हि नाहा।।
पुरबा[79] लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी।।

थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक।
धनि जोबन[80] अवगाह[81] महँ, दे बूड़त, पिउ! टैक। ।।6।।

लाग कुवार[82], नीर जग घटा। अबहूं आउ कंत तन[83] लटा[84]।।
तोहि देखे पिउ! पलुहै[85] कया! उतरा चीतु[86] बहुरि करु मया।। आश्विन मास
चित्रा[87] मित्र मीन कर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा।।
उआ अगस्त, हस्ति घन गाजा। तुरय[88] पलानि[89] चढ़े रन राजा।।
स्वाति बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।
सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खंजन देखाए।।
भा परगास, काँस बन[90] फूले। कंत न फिरे बिदेसहिं[91] भूले।।

बिरह हस्ति तन सालै, घाय[92] करै चित चूर।
बेगि[93] आइ, पिउ! बाजहु[94], गाजहु[95] होइ सदूर[96]।। ।।7।।

कातिक[97] सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी[98]।।
चौदह करा[99] चाँद परगासा। जनहुँ जरै सब धरति अकासा।। कार्तिक पूर्णिमा
तन मन सेज करै अगिदाहू[100]। सब कहुं चंद, भएउ मोहि राहू।।

---

64. बीहड़ वन-दुर्गम जंगल 65. कठिन 66. काटूँ, बिताऊँ 67. घर 68. सूना, 69. अन्यत्र 70. शय्या 71. नागिन, सर्पिणी 72. डंसना 73. एकाकी 74. चारपाई 75. डराता है, 76. झकझोरते हुए (तीव्रता बताने के लिए प्रयुक्त हुआ है), 77. चूते हैं 78. किनारा 79. पूर्वा नक्षत्र 80. यौवन 81. पार करने में 82. क्वार नामक माह, 83. शरीर 84. शिथिल हुआ 85. पनपती हैं 86. चित, ध्यान, 87. चित्रा नक्षत्र 88. घोड़ा 89. जीन कसकर 90. कांस वन 91. विदेश में ही, 92. घाव, 93. शीघ्र 94. लड़ो 95. गरजो 96. शार्दूल, सिंह 97. कार्तिक माह, 98. जल रही हूँ 99. कला (चंद्रमा की) 100. अग्निदाह,

NMDC-067

चहूँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाही कंत पियारा।।
अबहू निठुर[101] आउ एहि बारा। परब[102] देवारी होइ संसारा।।
सखि झूमक[103] गावै अँग मोरी। हौं झुरावं[104] बिछुरी मोरि जोरी।।
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहं बिरह, सवति दुख दूजा।।

सखि मानैं तिउहार[105] सब, गाइ देवारी[106] खेलि।
हौं का गावों कंत बिनु, रही छार[107] सिर मेलि।। 8।।

अगहन[108] दिवस घटा निसि बाढ़ी। दूभर रैनि, जाइ किमि गाढ़ी[109]?
अब यहिं बिरह दिवस भा राती। जरौं बिरह जस दीपक बाती।।
काँपे[110] हिया जनावै सीऊ[111]। तौ पै जाइ होई संग पीत।।
घर घर चीर रचे सब काहू। मोर रूप रंग लेइगा नालू।।
पलटि[112] न बहुरा[113] गा जो बिछोई। अबहूँ फिरै फिरै रंग सोई।।
बज्र अगिनि बिरहिनि हिय जारा। सुलुगि सुलुगि[114] दगधै[115] होई छारा।।
यह दुख दगध न जानै कंतू। जोबन जनम करे भंसमंतू।।

अगहन महीने में वर्षा का उद्दीपन के रुप में वर्णन

पिउ सौं कहेउ संदेसड़ा[116], हे भौंरा। हे कागा।।
सो धनि बिरहै जरि मुई, तेहि क धुवां हम्ह लाग।।9।।

पूस[117] जाड़ थर तन काँपा। सुरूज जाइ लंका[118] दिसि चांपा।।
बिरह बाढ़, दारून[119] भा सीऊ। कँपि कँपि मरौं, लेइ हरि जीऊ।।
कंत कहाँ लागौं ओहि हियरे। पंथ अपार, सूझ नहिं नियरे[120]।।
सौंर सपेती आवै जूड़ी[121]। जानहु सेज हिवंचल बूड़ी।।
चकई निसि बिछुरै दिन मिला। हौं दिन राति बिरह कोकिला।।
रैनि अकेलि साथ नहिं सखी। कैसे जियै बिछोही पखी[122]।।
बिरह सचान[123] भएउ तन जाड़ा। जियत खाइ औ मुए न छाँड़ा।।

पूस का महीना

---

101. *निष्ठुर* 102. *पर्व* 103. *मनोरा झूमक नाम का गीत* 104. *सूखती हूँ* 105. *त्योहार* 106. *दीपावली* 107. *धूल, राख,* 108. *अगहन नामक माह (मास)* 109. *व्यतीत किया जाए, कटे* 110. *काँपता है,* 111. *शीत,* 112. *पलटकर,* 113. *लौटा, वापस* 114. *धीरे-धीरे जलने के लिए सुलगना* 115. *दग्ध होता है, जलता है* 116. *संदेश, समाचार* 117. *पूस माह* 118. *दक्षिण* 119. *कठिन, भयंकर,* 120. *निकट* 121. *ताप, ज्वर* 122. *पक्षी (प्राण रूप पक्षी)* 123. *बाज*

रकत ढुरा मांसू गरा[124], हाड़ भएउ सब संख।
धनि सारस होइ ररि मुई[125], पीउ समेटहि[126] पंख। ।।10।।

लागेउ माघ[127] परै अब पाला[128]। बिरहा काल भएउ जड़काला[129]।।
पहल पहल तन रूई झाँपै। हहरि हहरि अधिकौ[130] हिय काँपै।।
आइ सूर होइ तपु, रे नाहा। तोहि बिनु जाड़ न छूटै माहा[131]।।
एहि माह उपजै रसमूलू। तू सो भौंर मोर जोबन फूलू।।
नैन चुवहिं जस महवट[132] नीरू। तोहि बिनु अंग लाग सर[133] चीरू[134]।।
टप टप बूंद परहिं अस ओला। बिरह पवन होइ मारै झोला[135]।।
केहि क सिंगार[136], को पहिरु पटोरा[137]। गीउ न हार, रही होइ डोरा[138]।।

माघ महीने की ठंडक और विरह की ताप

तुम बिनु काँपै धनि हिया, तन तिनउर[139] भा डोल।
तेहि पर बिरह जराइ कै, चहै उड़ावा झोल[140]। ।।11।।

फागुन[141] पवन झकोरा बहा। चौगुन[142] सीउ जाइ नहिं सहा[143]।।
तन जस पियर[144] पात[145] भा मोरा। तेहि पर बिरह देइ झकझोरा।।
तरिवर झरहिं, झरहिं बन ढाखा। भइ ओनंत[146] फूलि फरि साखा।।
करहिं बनसपति हिये हूलासू। मो कहँ भा जग दून उदासू।।
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी। मोहिं तन लाइ दीन्ह जस होरी।।
जौ पै पीउ जरत अस पावा। जरत मरत मोहिं रोष न आवा।।
राति दिवस बस यह जिउ मोरे। लगौं निहोर[147] कंत अब तोरे।।

फाल्गुन का महीना और विरह की व्यथा

यह तन जारौं छार कै, कहौं कि 'पवन! उड़ाव'।
मकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरै जहँ पाव। ।।12।।

---

124. गल गया 125. रटकर मर गई, 126. समेट लो, 127. माघ मास, 128. पाला (जाड़े में जैसे जैसे सर्दी का प्रकोप बढ़ता है तो ओस गिरने लगती है) 129. जाड़े के मौसम में , 130. ज्यादा, अधिक ही 131. माघ में 132. माघ की झड़ी, 133. तीर 134. घाव 135. झोला मारना - वात के प्रकोप से अंग का सुन्न हो जाना, 136. केहिक सिंगार-किसका शृंगार, कहाँ का शृंगार करना? 137. एक विशेष प्रकार का रेशमी वस्त्र (पटोला) 138. धागा 139. तिनके का समूह 140. राख, भस्म 141. फाल्गुन नामक माह 142. चार गुना 143. असहनीय 144. पीले, पीतवर्णी 145. पत्ते (की तरह), 146. झुकी हुई 147. लगौं निहोर-तुम्हारे काम आ जाए, यह शरीर तुम्हारे निहोरे लग जाए।

NMDC-067

चैत[148] बसंता होइ धमारी। मोहिं लेखे संसार उजारा[149]।।
पंचम[150] बिरह पंच सर[151] मारै। रकत रोइ सगरौं[152] बन ढारै।।
बूड़ि[153] उठे सब तरिवर पाता। भीजि मजीठ, टेसु बन राता।।
बौरे आम[154] फरै अब लागै। अबहुँ आउ घर, कंत सभागे।।
सहस भाव फूलीं बनसपती। मधुकर[155] घूमहिं सँवरि मालती।।
मोकहँ फूल भए सब काँटे। दिस्टि परत जस लागहिं चाँटे।।
फरि जोबन भए नारँग साखा। सुआ बिरह अब जाइ न राखा।।

वसंत में नागमनी की मनोदशा

घिरिनि परेवा[156] होइ पिउ! आउ बेगि परू टूटि।
नारि[157] पराए हाथ है, तोहि बिनु पाव न छूटि। ।। 13 ।।

भा बैसाख[158] तपनि[159] अति लागी। चोआ चीर चंदन भा आगी।।
सूरूज जरत हिवंचल ताका[160]। बिरह बजागि सौंह रथ हांका[161]।।
जरत बजागिनि करु, पिउ छाहाँ। आइ बुझाउ, अँगारन्ह माहाँ।
तोहि दरसन होइ सीतल नारी। आइ आगि तें करु फुलवारी।।
लागिउँ जरै जरै जस भारू[162]। फिरि फिरि भूँजेसि[163], तजिउँ न बारू।।
सरवर हिया[164] घटत निति जाई। टूक टूक होइकै बिहराई।।
बिहरत हिया करहू पिउ! टेका। दीठि दवंगरा[165] मेरवहु एका[166]।।

वैशाख की तपन और विरह की उग्रता

कँवल जो बिगसा[167] मानसर, बिनु जल गएउ सुखाइ।
कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिउ सीचै आइ। ।। 14 ।।

जेठ[168] जरै जग, चलै लुवारा[169]। उठहिं बवंडर परहिं अँगारा।।
विरह गाजि[170] हनुबंत[171] होइ जगा। लंकादाह करै तनु लागा।।
चारिहु पवन झकोरै आगी। लंका दाहि पलंका[172] लगी।।
दहि भइ साम नदी कालिंदी। बिरह क आगि कठिन अति मंदी[173]।।

ज्येष्ठ माह की लू और विरहाग्नि

---

148. चैत्र माह 149.उजाड़ 150. कोकिल का स्वर 151. पंच सर। कामदेव के पंच बाण 152. सारे 153. डूब जाएं 154. बौरे आम, बौर लगे आम 155. भौंरे 156. घिरिनि परेवा-गिरहबाज कबूतर या, कौड़िल्ला पक्षी 157. 1. नाड़ी 2. स्त्री 158. बैसाख नामक माह 159. गर्मी 160. हिवंचल ताका-उत्तरायण हुआ 161. बिरह बजागि सौंह रथ हाँका, सूर्य तो सामने से हटकर धीरे धीरे उत्तर की ओर बढ़ता जाता है, उसके स्थान पर विरहाग्नि से सीधे मेरी ओर (नागमती की ओर) रथ हाँका 162. भार 163. भूनता है 164. सरवर हिया-तालाब का हृदय 165. वर्षा के आरंभ की झड़ी 166. मरेवहु एका-मिलाकर एक कर दो, 167. खिला हुआ 168. ज्येष्ठ मास 169. लू (गर्म हवा) 170. गरजकर 171. हनुमान 172: पलंग, 173. धीरे धीरे जलाने वाली

NMDC-067

उठै आगि औ आवै आंधी। नैन न सूझ, मरौं दुख बाँधी।
अधजर[174] भइउ, माँसु तनु सूखा। लागेउ बिरह काल होइ भूखा।।
माँसु खाइ सब हाडन्ह लागै। अबहुँ आउ, आवत सुनि भागै।।

गिरि, समुद्र ससि मेघ, रबि, सहि न सकहिं वह आगि।
मुहमद सती[175] सराहिए, जरै जो अस पिउ लागि।।।।15।।

तपै लागि अब जेठ असाढ़ी। मोहि पिउ बिनु छाजनि भइ गाढ़ी।
तन तिनउर[176] भा, झरौं[177] खरी। भइ बरखा[178], दुख आगरि जरी।।
बंध[179] नाहिं औ कंध[180] न कोई। बात न आव कहौं का रोई?।।
साँठि नाठि[181], जग बात को पूछा? बिनु जिउ फिरै मूंज तनु छूंछा[182]।।
भई दुहेली टेक बिहूनी। थाँम[183] नाहिं उठि सकै न थूनी[184]।।
बरसै मेघ चुवंहिं नैनाहा। छपर छपर[185] होइ रहि बिनु नाहा।।
कोरौं[186] कहाँ ठाट नव साजा? तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा।।

आषाढ़ का आगमन और नागमति की घर की चिंता

अबहूं मया दिस्टि करि, नाह निठुर! घर आउ।
मँदिर उजार होत है, नव कै[187] आइ बसाउ[188]। ।।16।।

रोइ गंवाए[189] बारह मासा। सहस सहस[190] दुख एक एक सांसा[191]।।
तिल तिल बरख बरख[192] पर जाई। पहर पहर[193] जुग जुग[194] न सेराई[195]।।
सो नहिं आवै रूप मुरारी। जासौं पाव सोहाग[196] सुनारी[197]।।
साँझ भए झुरि झुरि[198] पथ हेरा। कौनि सो घरी[199] करै पिउ फेरा?
दहि कोइला भइ कंत सनेहा। तोला[200] माँसु रही नहिं देहा[201]।।
रकत न रहा बिरह तन गरा। रती रती[202] होइ नैनन्ह टरा।।
पाय लागि जोरै धनि हाथा। जारा नेह, जुड़ावहु[203], नाथा।।

नागमति की विरह व्यथा और पति की आतुर प्रतीक्षा

---

174. अधजल (आधा जला हुआ) 175. पतिव्रता स्त्री 176. तिनकों का ठाट 177. सूखती है 178. वर्षा 179. ठाट बांधने के लिए रस्सी 180. सहायक 181. साँठि नाठि- पूंजी नष्ट हुई 182. मूंज तनु छूंछा- बिना बंधन की मूंज जैसा शरीर 183. खंभा 184. लकडी की टेक 185. छपर छपर- सराबोर 186. छाजने की डाट में लगे बांस या लकड़ी 187. नव कै-नए सिरे से 188. बनाओ, 189. व्यतीत किया, 190. सहस सहस-हजार हजार 191. एक एक सांसा-एक एक सांस 192. सालों साल 193. प्रहर-प्रहर 194. युग 195. समाप्त होता है 196. 1. सौभाग्य 2. सोहागा 197. 1. वह स्त्री 2. सुनारिन, 198. सूख-सूखकर 199. घड़ी (समय) 200. तोला (मात्रा मापने की इकाई 201. देह में, शरीर में 202. रती-रती-थोड़ा-थोड़ा करके 203. शीतल करो, शांत करो, तृप्त करो,

NMDC-067

बरस दिवस धनि रोइ कै, हारि परी चित झंखि।
मानुस घर घर बूझि कै, बूझै निसरी पंखि। ।।17।।

भई पुछार[204], लीन्ह बनबासू। बैरिनि सवति दीन्ह चिलबाँसू[205]।।
होइ खर बान बिरह तनु लागा। जौ पिउ आवै उड़हि तौ कागा[206]।।
हारिल[207] भई पंथ मैं सेवा अब तहँ पठवौं[208] कौन परेवा[209]।।
धौरी[210] पंडक[211] कहु पिउ नाऊ जौं चितरोख[212] न दूसर ठाऊं।।
जाहि बया[213] होइ पिउ कंठ लवा[214] करै मेराव सोइ गौरवा[215]।।
कोइल भई पुकारति रही महरि पुकारै लेइ लेइ दही[216]।।
पेड़ तिलोरी[217] औ जल हंसा हिरदय पैठि बिरह कटनंसा[218]।।

नागमती की प्रिय से मिलनोत्कंठा

जेहि पंखी के निअर होइ, कहै बिरह कै बात।
सोई पंखी जाइ जरि, तरिवर होइ निपात[219]। ।।18।।

कुहुकि कुहुकि जस कोइल रोई। रकत आँसु घुँघुची बन बोई।।
भइ करमुखी नैन तन राती। को सेराव[220]? बिरहा दुख ताती।।
जहँ जहँ ठाढ़ि होइ बनबासी। तहँ तहँ होइ घुंघुचि कै रासी।।
बूंद बूंद महँ जानहुँ जीऊ। गुंजा गूंजि करै 'पिउ पीऊ'।।
तेहि दुख भए परास निपाते। लोहू बूड़ि उठे होइ राते।।
राते बिंब[221] भीजि तेहि लोहू[222]। परवर पाक, फाट हिय गोहूं।।
देखौं जहाँ होइ सोइ राता। जहाँ सो रतन कहै को बाता?

प्रकृति के कण-कण में नागमती की विरह व्यथा की झलक

नहिं पावस ओहि देसरा, नहिं हेवंत[223] बसंत।
ना कोकिल न पपीहरा, जेहि सुनि आवै कंत। ।।19।

---

204. 1. पूछने वाली 2. मयूर 205. चिड़िया फंसाने का एक फंदा, 206. कौआ 207. 1. थकी हुई 2. हारिल पक्षी 208. भेजूं 209. पक्षी 210. 1. धवल 2. एक चिड़िया 211. 1. पीली 2. एक चिड़िया 212. 1. हृदय में रोष 2. एक पक्षी 213. जाहि बयासंदेश-लेकर जा और फिर आ 214. कंठ लवा-गले में लगाने वाला 215. 1. गौरव युक्त 2. गौरा पक्षी 216. 1. दही 2. जलाई 217. तेलिया मैना 218. 1. काटता और नष्ट करता है 2. करनास या नीलकंठ 219. पत्रहीन 220. ठंढा करे 221. बिंबा फल, 222. रक्त, रूधिर 223. हेमंत ऋतु।

गोस्वामी तुलसीदास

प्राचीन और मध्यकालीन हिन्दी कवियों के व्यक्तिगत जीवन के संबंध में उनके द्वारा लिखी गई जानकारियों का प्रायः अभाव ही है। कारण स्पष्ट है, उन लोगों ने अपने-अपने जीवन के संबंध में नामोल्लेख से अधिक कुछ नहीं लिखा है। इसलिए हमें कवियों के जीवन के व्यक्तिगत विवरणों के लिए कई दूसरे साक्ष्यों, आधारों पर निर्भर रहना पड़ता है। इनमें उनके साहित्य में आयी अल्प सूचनाएं और कवियों के बारे में जन सामान्य में प्रचलित अनुश्रुतियाँ भी सम्मिलित हैं। इन्हीं के आधार पर कवियों के जीवन-वृत्त तैयार किए गये हैं। गोस्वामी तुलसीदास इसके अपवाद नहीं हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल व डॉ0 माता प्रसाद गुप्त ने इनकी कृतियों के तिथिक्रम को ध्यान में रखकर इनका जन्म-काल सन् 1533 ई0 के आसपास माना है। ये एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए थे, लेकिन अशुभ मूल नक्षत्र में जन्म लेने के कारण माता-पिता के स्नेह से वंचित थे। बाल्यकाल अनाथ की तरह बीता। उनका बचपन घोर अभावों में व्यतीत हुआ था। इसके साक्ष्य उनकी रचनाओं में भी उपलब्ध हैं: "जानत हौं चारि फल चारिहू चनक को।" इनकी माता का नाम हुलसी और पिता का नाम आत्माराम दूबे था। इनके जन्मस्थान के संबंध में कई मत हैं। कुछ विद्वान् बांदा जिलांतर्गत राजापुर नामक गाँव को इनकी जन्मभूमि के रूप में स्वीकार करते हैं तो कुछ लोग एटा जिले के सोरों को ठहराते हैं। उत्तर प्रदेश सरकार ने राजापुर को ही प्रामाणिक मानते हुए वहाँ तुलसीदास का एक स्मारक बनवाया है।

गोस्वामी तुलसीदास ने मध्यकाल की प्रतिनिधि काव्यभाषाओं ब्रज और अवधी में समान अधिकार से रचनाएं की हैं। उन्होंने विभिन्न काव्यरूपों का प्रयोग किया है और अपने समय तक प्रचलित ढेरों छंदो का भी व्यवहार किया है। उनकी ब्रज और अवधी की रचनाएं निम्नलिखित हैं:-

वैराग्य - संदीपनी, रामाज्ञा प्रश्न, रामललानहछू, जानकी-मंगल, रामचरितमानस, पार्वती-मंगल, कृष्ण-गीतावली, राम-गीतावली या गीतावली, विनय पत्रिका, दोहावली, बरवै रामायण, कवितावली, हनुमानबाहुक। इनमें रामचरिमानस, विनयपत्रिका और कवितावली महत्वपूर्ण कृतियाँ है।

गोस्वामी तुलसीदास मध्यकालीन हिन्दी साहित्य की एक विशिष्ट प्रतिभा हैं। आलोचक उन्हें समन्वय की विराट चेष्टा का कवि और लोकनायक भी कहते हैं जो तुलसीदास की प्रतिभा और उनके महत्वपूर्ण योगदानों का सार्थक मूल्यांकन है।

तुलसीदास की मृत्यु के संबंध में वेणी माधव दास जी का निम्नलिखित दोहा प्रचलित है-

संवत् सोरह सै असी, असी गंग के तीर।
सावन स्यामा तीज सनि, तुलसी तज्यो सरीर।

इस दोहे के आधार पर कवि का निधन संवत् 1680 (सन् 1623 ई0) में होना निश्चित होता है। प्रस्तुत संकलन में गोस्वामी तुलसीदास की रचनाधर्मिता के प्रमुख अंशों से आपका परिचय कराने की कोशिश की गई है। इसी योजना के अनुसार तुलसीदास की अक्षय साहित्यिक ख्याति के आधार-स्तंभ 'रामचरितमानस' के एक मार्मिक प्रसंग' परशुराम-लक्ष्मण संवाद', और कवितावली के कुछ महत्वपूर्ण अंश रखे गये हैं। तुलसीदास भक्त भी हैं और उनके इस रूप से भी आपका परिचय आवश्यक है। इसीलिए 'विनयपत्रिका' के दस पद भी दिये जा रहे हैं। इन अंशों को पढ़कर आप तुलसी की दृष्टि, उनके विचार और उनकी छवि से परिचित हो पायेंगे।

NMDC-067

परशुराम-लक्ष्मण संवाद

परशुराम-लक्ष्मण संवाद गोस्वामी तुलसीदास के रामचरित मानस महाकाव्य का एक अत्यंत प्रभावी अंश है। यह संवाद काव्य और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से बेजोड़ है। इसमें तुलसी का कवि-कौशल अपनी समग्रता में प्रकट हुआ है। संवाद मुख्यतया परशुराम और लक्ष्मण के बीच होता है, लेकिन विश्वामित्र, जनक, राम, पुरनारियों और सीता स्वंयवर में हिस्सा लेने आये राजा सबको इसमें स्थान मिला है। इसे कवि की सुचिंतित योजना के रूप में देखा जाना चाहिए। इन सभी प्रमुख और गौण चरित्रों की उपस्थिति से तुलसी दास ने परशुराम और लक्ष्मण के चरित्रों को संपूर्णता में उभारने में मदद ली है। परशुराम ब्रह्मर्षि हैं, वीरव्रती हैं, और क्रोध के लिए विख्यात हैं। साथ ही क्षत्रिय-द्रोही के रूप में भी उनकी प्रसिद्धि है। लक्ष्मण नवयुवक हैं। दशरथ पुत्र हैं और उनमें युवकोचित सभी गुण हैं। राम क्षमाशील, गंभीर और परिपक्व हैं। संवाद अंश में कवि ने बहुत सूक्ष्म तरीके से इन सभी चरित्रों को उद्घाटित किया है। ये सभी चरित्र इतने स्वाभाविक लगते हैं कि लगता है, सब कुछ पाठक के सामने ही घट रहा हो। कवि ने परिवेश से लेकर चरित्रों, घटनाओं आदि की बारीकियों को अत्यंत मार्मिक रूप में उपस्थित कर दिया है।

महाराजा जनक ने अपनी पुत्री सीता का स्वयंवर आयोजित किया है। स्वयंवर की शर्त है कि जो भी राजा या राजकुमार शिव धनुष की प्रत्यंचा चढ़ा देगा उसी से सीता का विवाह कर दिया जायेगा। सीता से विवाह की इच्छा रखे हुए विभिन्न राज्यों के राजागण आये हुए हैं। ऋषि विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण भी इस अवसर पर उपस्थित हैं। सभी राजागण बारी-बारी से शिवधनुष की प्रत्यचा चढ़ाने की कोशिश करते हैं, लेकिन धनुष की डोरी चढ़ाने को कौन कहे, उन सबसे तो धनुष भी नहीं उठता है। मन मसोस कर आमंत्रित राजागण अपनी-अपनी जगहों पर बैठ जाते हैं। राजा जनक निराश भाव से कहते हैं कि लगता है ब्रह्मा ने सीता के भाग्य में विवाह लिखा ही नहीं। यह सुनकर लक्ष्मण को क्रोध आता है। उन्हें लगता है कि राजा जनक सीधे-सीधे उनकी वीरता को चुनौती दे रहे हैं। वे अपने बड़े भाई राम से आज्ञा मांगते हुए गेंद की तरह से संपूर्ण ब्रह्माण्ड को ही उठा लेने का हौसला दिखाते हैं। श्रीराम और गुरु विश्वामित्र उन्हें शांत करते हैं। अंत में विश्वामित्र से अनुमति लेकर राम शिवध नुष की प्रत्यंचा चढ़ाने का यत्न करते हैं। जैसे ही वे प्रत्यंचा चढ़ाते हैं शिवधनुष टूट जाता है और उसके टूटने से बहुत तेज आवाज होती है। शिवधनुष का टूटना जनक व उनके अपने लोगों व सीता के लिए अत्यधिक हर्ष का कारण बनता है लेकिन दूसरी ओर अत्यंत नाटकीय स्थिति उत्पन्न होती है। परशुराम के आगमन से सारी खुशी पर अचानक जैसे ग्रहण लग जाता है। वे शिवजी के शिष्य हैं और शिवधनुष का टूटना उनके लिए कोई सामान्य घटना न होकर उनके गुरु के अपमान जैसा था। उनकी ख्याति एक अत्यंत कोधी ब्रह्मर्षि की है। वे कोध में किसी को नहीं छोड़ते हैं। कवि ने अत्यंत कुशलता से यहां परशुराम का चित्र खींचा है। उनका शरीर गौरवर्ण है, भाल प्रशस्त है, उस पर त्रिपुण्ड लगा हुआ है, सिर पर जटा-जूट है। कोध की वजह से उनका मुख कुछ और लाल हो गया है। स्वाभाविक रूप से भी दृष्टि डालते हैं तो लगता है कि मानो कोध में हों। (देखिए पद संख्या 1) तुलसी ने उनके

NMDC-067

बारे में लिखा है कि वे अपने वेश भूषा की दृष्टि से शांत दिखाई पड़ते हैं। लेकिन उनके काम कठोर हैं। उनके स्वरूप का वर्णन करना कठिन है। ऐसा लगता है कि साक्षात् वीर रस मुनि-शरीर धारण करके राजाओं के बीच आ गया है।

समूचा संवाद अंश अत्यंत नाटकीय है। जैसे ही परशुराम को स्वयंवर में आए राजागण देखते हैं, सभी भय से व्याकुल हो खड़े हो जाते हैं। सब अपना-अपना परिचय देते हुए उन्हें प्रणाम करते हैं। जनक भी आते हैं, प्रणाम करते हैं। सीता से भी अभिवादन करवाते हैं। विश्वामित्र भी उनसे मिलते हैं और अपने साथ आए राम और लक्ष्मण का भी परिचय करवाते हैं। इसके बाद परशुराम राजा जनक से अजान बनकर वहां उपस्थित भीड़ का कारण पूछते हैं और उनके समूचे शरीर में क्रोध व्याप्त हो जाता है। (देखिए पद संख्या 2)

राजा जनक परशुराम से सब हाल सुनाते हैं। ब्रह्मर्षि धरती पर टूटे धनुष को देखकर बहुत नाराज होकर जनक को अपशब्द कहते हैं और उनसे पूछते हैं कि धनुष किसने तोड़ा? मुझे तत्काल उस धृष्ठ का नाम बताओ अन्यथा जहां तक तुम्हारा राज्य है वहां तक धरती को उलट दूंगा। डरकर जनक से उत्तर देते नहीं बनता है और स्वयंवर की असफलता से कुठाग्रस्त राजागणों को खुशी होती है। इसके विपरीत देवता-मुनि जन, नाग, स्त्री, पुरूष आदि सभी चिंतित और दुखी हो जाते हैं। सीता की मां भी पश्चाताप करने लगती हैं और कहती हैं कि अब लगता है कि सारा बना बनाया खेल बिगड़ जाएगा ! परशुराम के स्वभावं के बारे में जानकर सीता भी व्याकुल हो जाती हैं। सीता को डरा देखकर वहाँ उपस्थित अन्य लोग भी भययुक्त हो जाते हैं। ऐसे में हर्ष और विषाद मुक्त भाव से राम ने कुछ कहा। (देखिए पद संख्या 3)

राम परशुराम से विनम्र भाव से कहते हैं कि हे स्वामी। शंभुधनुष भंग करने वाला आपका कोई एक सेवक ही हो सकता है। क्या आज्ञा है, मुझसे कहिए। यह सुनकर मुनि क्रुद्ध हो जाते हैं और गुस्से से कहते हैं कि यह तो अच्छा सेवक धर्म है। काम शत्रु का करे और सेवक बने। राम, साफ-साफ सुनिए, शिवधनुष जिस किसी ने भी तोड़ा होगा वह मेरे लिए रावण जैसा ही दुश्मन होगा। इसलिए वह व्यक्ति समाज छोड़कर अलग हो जाए, नहीं तो सभी राजा गण मारे जायेगे। मुनि के ऐसे वचन सुनकर लक्ष्मण को हँसी आ जाती है और वे परशुराम को संबोधित करते हुए कहते हैं कि मैंने बचपन में खेल-खेल में न जाने कितने धनुष तोड़ डाले हैं, लेकिन तब तो आपने इस तरह क्रोध नहीं किया। आखिर इस धनुष में ऐसा क्या है कि आप आसमान सिर पर उठा रहे हैं। लक्ष्मण की व्यंग्योक्ति सुनकर परशुराम और भी कुपित होते है और कहते हैं बालक लगता है, तुम्हारी मौत निकट है, तभी तुम शिव के धनुष के बारे में ऐसा कह रहे हो। (देखिए पद संख्या 4)

लक्ष्मण परशुराम को तंग करने का पूरा मन बना चुके हैं। आज वे कुछ भी छोड़ने वाले नहीं है। वे हंसते हुए कहते हैं, हे प्रभु मेरे लिए तो सारे धनुष एक जैसे ही हैं। आप झूठ मूठ क्रोध कर रहे हैं। भइया ने तो स्पर्श ही किया था। धनुष टूट गया तो इसमें उनका क्या दोष? आप व्यर्थ नाराज हो रहे हैं?

अपने फरसे की ओर संकेत करते हुए परशुराम लक्ष्मण को अपने क्षत्रिय कुल द्रोही होने और सिर्फ तपस्वी न जानने की हिदायत देते हैं। (देखिए पद संख्या 5)

संवाद योजना इतनी नाटकीय है कि, घटना के सारे उतार- चढ़ाव साफ-साफ समझ में आते हैं। एक तरफ परशुराम का क्रोध बढ़ता चला जाता है वहीं दूसरी ओर लक्ष्मण और भी अधिक चुटकी लेने लगते हैं। वे उनके क्रोध को अपनी बातों से और भी भड़काते हैं। वे ब्रह्मर्षि को कहते हैं कि आप मुझ बार-बार अपना कुठार दिखाकर डराना चाहते हैं। आप फूँक से पहाड़ उड़ाना चाहते हैं। यदि ऐसा है तो समझ लीजिए कि यहाँ कोई कोंहड़ें की बतिया नहीं है कि तर्जनी अँगुली देखने भर से मृत्यु हो जायेगी। आपके वचन हजार व्रजों के बराबर हैं व्यर्थ ही धनुष बाण धारण करते हैं। लक्ष्मण उन्हें यह भी कह जाते हैं कि मेरे वंश की परिपाटी ऐसी नहीं है जहाँ देव राजा भगवान के भक्त और गायों पर क्रूरता दिखाई जाए। लक्ष्मण, मुनि से कहते हैं कि यदि मैंने कुछ अनुचित कह दिया हो तो हे महामुनि मुझे क्षमा करेंगे। (देखिए पद संख्या 6)

लेकिन परशुराम का क्रोध इससे शांत नहीं होता है। वह विश्वामित्र को सुनाते हुए कहते हैं, यह बालक (लक्ष्मण) मूर्ख, कुटिल और मृत्यु के वश में है। यदि आप चाहते हैं कि इसकी प्राण रक्षा हो जाए तो इसे समझा कर और मेरे बल का प्रताप बताकर अप्रिय स्थिति को टालिए। लक्ष्मण इससे विचलित नहीं हुए और उन्होंने कहा कि हे मुनि आप अपना सुयश गा रहे हैं। कई बार आप अपनी बड़ाई अपने मुंह से ही कर चुके हैं। कुछ और भी कहना बाकी रह गया है तो उसे भी कह डालिए। क्रोध रोककर अपना दुख मत बढ़ाइए। आप वीरव्रती, धीर और क्षुब्ध नहीं होने वाले हैं। आप गाली देते हुए शोभा नहीं हासिल कर रहे हैं। जो शूर होता है वह युद्ध में अपने कारनामें दिखाता है और उसका झूठा प्रदर्शन नहीं करता है। अपना यश कायर ही गाता है और वह भी सम्मुख युद्ध में शत्रु के सामने। (देखिए पद संख्या 7)

लक्ष्मण की ऐसी बातें सुनकर परशुराम एक बार फिर अपने फरसे को ठीक से पकड़ते हैं और कहते हैं कि ऐसा लगता है, तुम्हें तुम्हारी मौत खींच लाई है। वे लोगों को सुनाकर कटुवादी बालक को बध्ययोग्य बताते हैं। मैने बालक समझकर बहुत क्षमा किया, लेकिन यह निश्चय ही मरने योग्य है। वे विश्वामित्र से भी लक्ष्मण के वध की स्थिति से उपजने वाले अपराध की क्षमा याचना करते हैं। मेरे आगे गुरू द्रोही खड़ा है और मैं निर्मम क्रोधी हूँ। अब तक सिर्फ विश्वामित्र तुम्हारी वजह से ही इसे मैंने छोड़ रखा अन्यथा जाने कब का अपने परशु का प्रयोग कर गुरु ऋण से मुक्त हो गया होता (देखिए पद संख्या 8)

लक्ष्मण ने मौका छोड़ा नहीं और उन्होने परशुराम को निरूत्तर करते हुए कहा कि, हे मुनि आपके चरित्र से सारा संसार भली-भांति परिचित है। आप अपने माता पिता के ऋण से अच्छी तरह मुक्त हुए हैं और अब आपके हृदय में गुरू ऋण का बड़ा भारी सोच अटका हुआ है। उसे आप मेरे सिर पर थोपना चाहते हैं। लक्ष्मण के कठोर वचनों को सुनकर एक बार फिर से मुनि अपने कुठार की मूठ सुधारते हैं और

NMDC-067

सभा हाय-हाय करने लगती है। आसन्न संकट जानकर ऐंसे में राम ने लक्ष्मण को रोका। राम ने देखा कि लक्ष्मण के उत्तर परशुराम की क्रोधग्नि में आहुति का काम कर रहे हैं। इसलिए इसे नियंत्रित करना ही होगा। (देखिए पद संख्या 9)

राम परशुराम से लक्ष्मण को क्षमा करने का निवेदन करते हैं कि दुधमुंहे बच्चे पर कोध न करें। यदि वह आपका प्रताप जानता तो लगातार अज्ञानता क्यों दिखाता ? यदि कोई बालक गलती करता है, तो माता, पिता, गुरु उसके बाल स्वभाव पर प्रसन्न होते हैं, इसलिए हे मुनिवर आप लक्ष्मण को बालक और सेवक समझकर क्षमा करें। आप तो शीलवान, धैर्यवान और ज्ञानी मुनि हैं। राम के वचनों का परशुराम पर अच्छा असर हुआ वे कुछ शांत हुए, लेकिन लक्ष्मण को हसता हुआ देखकर उन्हें फिर से क्रोध आ गया और उन्होंने राम से कहा कि तुम्हारा भाई बड़ा पापी है। उसका शरीर गोरा जरूर है लेकिन मन उसका काला ही है। वह विषमुख है न कि अमृत मुख। लक्ष्मण अभी भी अविचलित हैं। वे हंसकर कहते हैं कि हे मुनि, क्रोध सभी पापों का कारण हैं। इसी के वशीभूत होकर सब लोग अनुचित कार्य करते हैं और संयम में प्रतिकूलता उत्पन्न होती है।(देखिए पद संख्या 10)

लक्ष्मण आगे कहते हैं कि हे मुनिराज मैं आपका अनुचर हूँ। आप क्रोध छोड़कर मुझपर दया कीजिए। और अब तो चाप टूट ही गया है, जुड़ेगा नहीं। आप खड़े-खड़े थक गये होंगे। यदि आपको यह धनुष अत्यंत प्रिय है तो एक काम कीजिए कोई दक्ष व्यक्ति बुलाइए और इसे जुड़वा लीजिए। लक्ष्मण का साहस देखकर राजा जनक को भी डर लगने लगा। सभी नगरवासी भी डर से कांपने लगे। परशुराम फिर से अपने भाई को समझाने के लिए कहते हैं और खरी-खोटी सुनाते हैं(देखिए पद संख्या 11)

राम परशुराम का मनोविज्ञान जानते हैं। उन्हें पता है कि, मुनि को शांत कैसे किया जा सकता है? इसीलिए वे अत्यंत विनम्र होकर मधुर व शीतल वाणी बोलते हैं। यही नहीं ब्रह्मर्षि से हाथ जोड़कर कहते हैं कि हे स्वामी आप सहज ज्ञानी हैं, आप बालक की बात पर ध्यान बिलकुल मत दीजिए। कहता बर्रै और बालक एक स्वभाव के होते हैं। अर्थात् दोनों का स्वभाव बोलते रहने का है। इन्हें संत और दूसरों में फर्क का ज्ञान ही नहीं होता है। और सबसे अलग बात यह कि उसने काम बिगाड़ा भी नहीं है, अपराधी तो मै हूँ। आप मुझ पर दास समझकर कृपा कीजिए, आप मुझे वह तरीका बताइए जिससे आपका क्रोध शीघ्र चला जाए। हे मुनि मैं वही उपाय करूगा। परशुराम लक्ष्मण को अभी भी व्यंग्य भाव से देखते पाकर कहते हैं कि हे श्रीराम मेरा क्रोध कैसे शांत हो सकता है। यह अभी भी तुम्हारा भाई गलत तरीके से देख रहा है। मेरे कुठार की आवाज से गर्भ तक गिर जाता है। (देखिए पद संख्या 12)

परशुराम का क्रोध किसी भी भांति शांत नहीं होता है। हो भी कैसे? लक्ष्मण पीछे हटने के लिए तैयार ही नहीं है। वे उन्हें लगातार चिढ़ा रहे हैं। परशुराम राम से कहते हैं कि एक तो शिव धनुष तोड़ दिया और ऊपर से मेरी हंसी उड़ायी जा रही है। इससे ब्रह्मर्षि की खीझ प्रकट होती है। (देखिए पद संख्या 13)

परशुराम को लगता है कि राम उनसे जो विनय कर रहे हैं, वह छल मात्र है, इसीलिए वे राम को अपने

संतोष के लिए युद्ध करने के लिए चुनौती देते हैं और ऐसा नहीं होने पर वे सिर्फ राम कहलाये जाने के अधिकारी होंगे। ऐसा वे स्वंय कहते हैं। वे साफ- साफ कहते हैं कि छल त्याग कर मुझसे युद्ध करो, अन्यथा तुम्हें तुम्हारे भाई समेत मार डालूंगा। परशुराम कुठार उठाए हुये प्रलाप कर रहे है और श्रीराम मन ही मन हंस रहे हैं। राम कहते हैं कि, अपराधी लक्ष्मण है और आप मुझ पर कोध कर रहे हैं। सही भी है, टेढ़े चन्द्रमा को राहू भी छोड़ देता है। फिर भी मेरा सिर आपके आगे है, आप कोध छोड़ दीजिए। आप मुझे अपना अनुयायी समझकर बताइए कि आपका कोध कैसे शांत होगा? और स्वामी और सेवक के बीच युद्ध कैसे हो सकता है? इसलिए आप अपना रोष त्यागिए। आपका वेश देखकर यदि बालक ने कुछ कह दिया है तो उसका दोष नहीं है। (देखिए पद संख्या 14)

राम लक्ष्मण के अपराध की सफाई देते हुए कहते हैं कि कुठार, तीर-धनुष आदि देखकर, आपका नाम जानकर भी बच्चे ने आपको नहीं पहचाना। वंश स्वभाव वश उसने आपको उत्तर दिया। यदि आप मुनि की तरह आते तो वह आपके चरण अपने सिर पर रखता। अनजाने की चूक छमा कीजिए। आपकी कृपा चाहिए। मैं तो सिर्फ राम हूँ और आप परशु सहित राम हैं। इसलिए आपका नाम बड़ा है। मैं आपसे सब भांति छोटा हूँ। आप हम सबके अपराध माफ कीजिए। (देखिए पद संख्या 15)

परशुराम इतने से संतुष्ट नहीं होते हैं। वे राम से स्पष्ट शब्दों में कहते हैं, कि मुझे निपट ब्राह्मण मत जानो। मेरा कोध सुविख्यात है। वे अपने पराकम का बखान करने लगते हैं। राम उन्हें समझाते हुए फिर कहते हैं कि हे मुनि! धनुष पुराना था और छूते ही टूट गया। मैं धनुष तोड़ने का अभिमान नहीं कर रहा हूँ। राम ब्रह्मर्षि को बहुत तरीके से समझाते हुए शांत करते हैं। (देखिए पद संख्या 16)

राम के लगातार समझाते रहने से परशुराम का कोध शांत हो जाता है। धीरे-धीरे उन्हें राम के देवत्व का ज्ञान होता है और वे प्रसन्न हो जाते हैं। परशुराम हाथ जोड़कर बोले कि हे प्रभु आपका प्रेम और हृदय में अंट नहीं पा रहा है। (देखिए पद संख्या 17)

परशुराम राम के देवत्व को जानकर अपनी गलतियों पर पश्चाताप करने लगते हैं। बार-बार क्षमा माँगते है। और तरह तरह से प्रभु की स्तुति करने लगते हैं। रघुकुलकेतु राम की जय जयकार करते हुए परशुराम तप के लिए वन चले जाते हैं। जो राजा परशुराम के आगमन से जनक के अशुभ की कल्पना से आनंदित थे, पासा पलटते ही डरने लगते है और कायरों की तरह इधर-उधर भागने लगते हैं। देवता फूल बरसाने लगते हैं। वाद्य-यंत्र बजाने लगते हैं। सभी नगरवासी खुशी मनाने लगते हैं। (देखिए पद संख्या 18)

स्पष्ट है कि, परशुराम-लक्ष्मण संवाद कवि कौशल और प्रसंग की मार्मिकता की दृष्टि से भी मानस का एक महत्वपूर्ण अंश है। संवाद-योजना नाटकीयता से भरपूर है। घटनाओं का उतार-चढ़ाव आद्यंत बांधे रखता है। कभी लगता है कि, सब कुछ ठीक हो गया, तभी कुछ ऐसा घट जाता है कि लगने लगता है कि, सारा किया कराया व्यर्थ हो गया। बना बनाया खेल बिगड़ गया। और अंत बिलकुल सुखद तरीके से राम के देवत्व स्थापना के साथ हो जाता है।

परशुराम-लक्ष्मण संवाद

खरभरु[1] देखि बिकल पुर[2] नारीं। सब मिलि देहिं महीपन्ह[3] गारीं।।
तेहिं अवसर सुनि सिव धनु भंगा। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा[4]।।
देखि महीप सकल सकुचाने। बाज झपट जनु लवा[5] लुकाने।।
गौरि सरीर भूति भल भ्राजा। भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा।।
सीस जटा ससिबदनु सुहावा। रिसबस कछुक अरुन[6] होइ आवा।।
भृकुटी[7] कुटिल नयन रिस राते। सहजहुँ चितवत मनहुँ रिसाते[8]।।
बृषभ कंध उर बाहु बिसाला। चारू जनेउ माल मृगछाला।।
कटि मुनिबसन तून दुइ बाँधे। धनु सर कर कुठारु[9] कल काँधें।।

धनुष भंग होने पर परशुराम का आगमन

दो०- सांत बेषु करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप।
धरि मुनितनु जनु बीर रसु आयउ जहँ सब भूप।। 1।।

देखत भृगुपति बेषु कराला[10]। उठे सकल भय बिकल भुआला[11]।।
पितु समेत कहि कहि निज नामा। लगे करन सब दंड प्रनामा।।
जेहि सुभायँ चितवहिं हितु जानी। सो जाइन जनु आइ खुटानी[12]।।
जनक बहोरि आइ सिरु नावा। सीय बोलाइ प्रनामु करावा।।
आसिष दीन्हि सखीं हरषानीं। निज समाज लै गईं सयानीं।।
बिस्वामित्रु मिले पुनि आई। पद सरोज मेले दोउ भाई।।
रामु लखनु दसरथ के ढोटा[13]। दीन्हि असीस देखि भल जोटा[14]।।
रामहि चितइ रहे थकि लोचन। रूप अपार मार[15] मद[16] मोचन।।

परशुराम के आगमन से जनक के दरबार में बैठे सभी लोग भयभीत हो जाते हैं।

दो०- बहुरि बिलोकि बिदेह[17] सन कहहु काह अति भीर[18]।
पूछत जानि अजान जिमि ब्यापेउ[19] कोपु[20] सरीर।। 2।।

---

1. खलबली 2. नगर, 3. राजाओं को, 4. भृगुकुल कमल पतंगा-परशुराम 5. गौरेया, 6. लाल 7. भौंह 8. क्रोधित 9. फरसा, परशु, 10. भयंकर 11. भूपाल या राजागण 12. बाधा 13. बेटा, 14. जोड़ी 15. कामदेव 16. गर्व 17. राजा जनक का एक नाम 18. भीड़ 19. व्याप्त 20. क्रोध

NMDC-067

समाचार कहि जनक सुनाए। जेहि कारन महीप सब आए।।
सुनत बचन फिरि अनत निहारे। देखे चापखंड[21] महि डारे।।
अति रिस बोले बचन कठोरा। कहु जड़[22] जनक धनुष कै तोरा।। परशुराम का क्रोध
बेगि[23] देखाउ मूढ़ न त आजू। उलटउँ महि[24] जहँ लहि तव राजू।।
अति डरु उतरु देत नृपु नाहीं। कुटिल भूप हरषे[25] मन माहीं।।
सुर मुनि नाग नगर नर नारी। सोचहिं सकल त्रास[26] उर भारी।।
मन पछिताति सीय महतारी। बिधि अब सँवरी[27] बात बिगारी।।
भृगुपति कर सुभाउ सुनि सीता। अरध निमेष[28] कलप[29] सम बीता।।

दो०- सभय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीरू।
हृदयँ न हरषु बिषादु[30] कछु बोले श्रीरघुबीरु।। 3।।

नाथ[31] संभुधनु भंजनिहारा[32]। होइहि केउ एक दास तुम्हारा।।
आयसु[33] काह कहिअ किन मोही। सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही[34]।।
सेवकु सो जो करै सेवकाई। अरि करनी करि करिअ लराई।। राम परशुराम संवाद
सुनहु राम जेहिं सिवधनु तोरा। सहसबाहु[35] सम सो रिपु[36] मोरा।।
सो बिलगाउ[37] बिहाइ[38] समाजा। न त मारे जैहहिं सब राजा।। लक्ष्मण का उत्तर
सुनि मुनि बचन लखन मुसुकाने। बोले परसुधरहि[39] अपमाने।।
बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं[40]। कबहुँ न असि रिस कीन्हि गोसाईं[41]।।
एहि धनु पर ममता केहि हेतू। सुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू।।

दो०- रे नृप बालक काल बस बोलत तोहि न सँभार[42]। परशुराम का और भी क्रोधित
धनुही सम तिपुरारि[43] धनु बिदित[44] सकल संसार।।4।। होना

---

21. खण्डित प्रत्यंचा, 22. मूर्ख 23. शीघ्र 24. धरती 25. हर्षित 26. कष्ट, 27. बना-बनाया, 28. आधा पल 29. कल्प (युग) 30. दुख, 31. स्वामी 32. तोड़ने वाला, 33. आज्ञा, 34. क्रोधी 35. सहस्रबाहु, रावण 36. शत्रु 37. अलग 38. छोड़कर 39. परशुराम 40. लड़कपन में, 41. गोस्वामी (सम्मान सूचक पद) 42. संभल कर, 43. शिव (त्रिपुर नामक दैत्य को मारने वाले शिव) 44. ख्यात

NMDC-067

लखन कहा हँसि हमरें जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना।
का छति[45] लाभु जून धनु तोरें। देखा राम नयन के भोरें[46]।
छुअत टूट रघुपतिहु न दोसू। मुनि बिनु काज करिअ कत रोसू।।
बोले चितइ परसु की ओरा। रे सठ[47] सुनेहि सुभाउ न मोरा।।
बालकु बोलि बधउँ[48] नहिं तोही। केवल मुनि जड़ जानहि मोही।।
बाल ब्रह्मचारी अति कोहीं। बिस्व[49] बिदित छत्रियकुल द्रोही।।
भुजबल[50] भूमि भूप[51] बिनु कीन्ही। बिपुल[52] बार महिदेवन्ह दीन्ही।।
सहसबाहु भुज छेदनिहारा। परसु बिलोकु महीपकुमारा।।

लक्ष्मण परशुराम का वाक् युद्ध

दो०- मातु पितहि जनि सोचबस करसि महीसकिसोर।
गर्भन्ह के अर्भक[53] दलन परसु मोर अति घोर।। 5।।

परशुराम का और क्रोधित होना

बिहसि[54] लखनु बोले मृदु[55] बानी[56]। अहो मुनीसु महा भटमानी[57]।।
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू[58]।।
इहाँ कुम्हड़बतिया[59] कोउ नाहीं। जे तरजनी[60] देखि मरि जाहीं।।
देखि कुठारु सरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना।।
भृगुसुत समुझि जनेउ बिलोकी। जो कछु कहहु सहउँ रिस रोकी।।
सुर[61] महिसुर[62] हरिजन[63] अरु गाई[64]। हमरें कुल इन्ह पर न सुराई[65]।।
बधें[66] पापु अपकीरति[67] हारें। मारतहू पा परिअ तुम्हारें।।
कोटि[68] कुलिस[69] सम बचनु तुम्हारा। ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा।।

लक्ष्मण पर परशुराम के इस क्रोध का कोई असर नहीं पड़ता

दो०- जो बिलोकि अनुचित कहेउँ छमहु[70] महामुनि धीर[71]।
सुनि सरोष[72] भृगुबंसमनि बोले गिरा[73] गभीर[74]।। 6।।

---

45. हानि 46. भोले 47. दुष्ट, 48. वध करना 49. संसार 50. भुजा के बल पर 51. राजा, 52. अनेक 53. गर्भस्थ शिशु, 54. हँसकर 55. मधुर 56. वाणी, वचन, 57. स्थापित योद्धा, योद्धा के रूप में विख्यात 58. पहाड़ 59. नया निकला सीताफल 60. कनिष्ठिका (हाथ की सबसे छोटी अंगुली) 61. देवता 62. राजा 63. भक्त ईश्वर के जन 64. गाय 65. शूरता 66. वध करने पर 67. अपयश 68. एक एक करोड़ 69. वज्र 70. क्षमा करें 71. धैर्यवान 72. क्रोधयुक्त 73. वाणी, 74. गंभीर

NMDC-067

कौसिक[75] सुनहु मंद[76] यहु बालकु। कुटिल कालबस[77] निज कुल घालकु।।
भानु बंस[78] राकेस[79] कलंकू। निपट निरंकुस अबुध[80] असंकू।।
काल कवलु होइहि छन माहीं। कहउँ पुकारि खोरि मोहि नाहीं।।
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा[81]। कहि प्रतापु बलु रोषु हमारा।। परशुराम
लखन कहेउ मुनि सुजसु[82] तुम्हारा। तुम्हहि अछत[83] को बरनै[84] पारा।।
अपने मुँह तुम्ह आपनि करनी[85]। बार अनेक भाँति बहु बरनी।।
नहिं संतोषु त पुनि कछु कहहू। जनि रिस रोकि दुसह[86] दुख सहहू।।
बीरब्रती[87] तुम्ह धीर अछोभा[88]। गारी[89] देत न पावहु सोभा।।

दो०- सूर समर[90] करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान[91] रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु।।7।।

तुम्ह तौ कालु[92] हाँक[93] जनु लावा। बार बार मोहि लागि बोलावा।।
सुनत लखन के वचन कठोरा। परसु सुधारि[94] धरेउ कर घोरा।।
अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू। कटुबादी[95] बालकु बधजोगू[96]।। परशुराम
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा[97]। अब यहु मरनिहार[98] भा साँचा[99]।।
कौसिक कहा छमिअ[100] अपराधू। बाल दोष गुन गनहिं न साधू।।
खर कुठार मैं अकरुन[101] कोही। आगें अपराधी गुरुद्रोही[102]।।
उतर देत छोड़उँ बिनु मारें। केवल कौसिक सील तुम्हारें।।
न त एहि काटि कुठार कठोरें। गुरहि उरिन[103] होतेउँ श्रम थोरें।।

दो०- गाधिसूनु[104] कह हृदयँ हँसि मुनिहि हरिअरइ[105] सूझ।
अयमय खाँड़[106] न ऊखमय अजहुँ न बूझ अबूझ[107]।। 8।। विश्वामित्र

---

75. विश्वामित्र 76. मूर्ख 77. मृत्यु का वशीभूत, 78. वंश, कुल 79. चंद्रमा 80. बुद्धिहीन 81. मुक्त होना 82. सुख्याती, 83 रहते हुए 84. वर्णन करे 85. काम 86. असह्य 87. वीरव्रत लेने वाला, 88. जिसे क्षोभ न हो 89. गाली 90. युद्ध 91. उपस्थित वर्तमान, 92. मृत्यु 93. बुलाकर 94. व्यवस्थित करके, 95. कठोर वचन बोलने वाला, 96; वध योग्य, 97. बचा 98. मरने लायक 99. सच्चा 100. क्षमा करेंगे 101. करूणा रहित, निर्मम 102. गुरू से शत्रुता रखने वाला, 103. ऋण-मुक्त 104. विश्वामित्र 105. हरा ही हरा अर्थात आसान 106. लोहे की तलवार 107. गूढ़

NMDC-067

कहेउ लखन मुनि सीलु[108] तुम्हारा। को नहिं जान बिदित संसारा।।
माता पितहि उरिन भए नीकें। गुर रिनु रहा सोचु बड़ जीकें।। लक्ष्मण
सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा। दिन चलि गए ब्याज बड़ बाढ़ा।।
अब आनिअ ब्यवहरिआ[109] बोली। तुरत देउँ मैं थैली खोली।।
सुनि कटु बचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा।।
भृगुबर परसु देखावहु मोही। बिप्र बिचारि बचउँ नृपद्रोही।। परशुराम
मिले न कबहुँ सुभट[110] रन[111] गाढ़े। द्विज[112] देवता घरहि के बाढ़े।।
अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सयनहि[113] लखनु नेवारे[114]।।

दो०- लखन उतर आहुति[115] सरिस[116] भृगुबर कोपु कृसानु[117]।
बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुलभानु[118]।। 9।।

नाथ करहु बालक पर छोहू[119]। सूध[120] दूधमुख[121] करिअ न कोहू।।
जौं पै प्रभु प्रभाउ कछु जाना। तौ कि बराबरि करत अयाना[122]।।
जौं लरिका कछु अचगरि[123] करहीं। गुर पितु मातु मोद[124] मन भरहीं।। राम द्वारा क्षमा याचना
करिअ कृपा सिसु सेवक जानी। तुम्ह सम सील धीर मुनि ग्यानी।।
राम बचन सुनि कछुक जुड़ाने[125]। कहि कछु लखनु बहुरि मुसुकाने।। लक्ष्मण को हँसता देखकर
हँसत देखि नख सिख रिस ब्यापी[126]। राम तोर भ्राता बड़ पापी।। परशुराम के तन-बदन में
गौर सरीर स्याम मन माहीं। कालकूटमुख[127] पयमुख[128] नाहीं।। आग लग जाती है।
सहज टेढ़ अनुहरइ न तोंही। नीचु मीचु[129] सम देख न मोही।।

दो०- लखन कहेउ हँसि सुनहु मुनि कोधु पाप कर मूल[130]।
जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं बिस्व प्रतिकूल[131]।। 10।।

---

108. *चरित्र* 109. *व्यावहारिक,* 110. *महान योद्धा* 111. *युद्ध* 112. *ब्राह्मण* 113. *आंखों से* 114. *मना किया,* 115. *यज्ञ में हवि डालना,* 116. *समान* 117. *अग्नि* 118. *रघु कुल सूर्य अर्थात श्री राम,* 119. *स्नेह* 120. *सीधा* 121. *दूध मुहां नवजात,* 122. *अज्ञानता* 123. *नटखटपन* 124. *प्रसन्नता* 125. *शांत होना,* 126. *नाखून से लेकर चोटी (शीर्ष) तक क्रोध व्याप्त हुआ,* 127. *जहरीला मुंह* 128. *अमृत मुख* 129. *मृत्यु* 130. *आधार, जड़* 131. *विपरीत*

मैं तुम्हार अनुचर[132] मुनिराया[133] परिहरि[134] कोपु करिअ अब दाया[135]।।
टूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने। बैठिअ होइहिं पाय पिराने।।
जौं अति प्रिय तौ करिअ उपाई। जोरिअ कोउ बड़ गुनी[136] बोलाई।।
बोलत लखनहिं जनकु डेराहीं। मष्ट[137] करहु अनुचित भल नाहीं।।
थर थर काँपहि पुर नर नारी। छोट कुमार खोट[138] बड़ भारी।।
भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी। रिस तन जरइ होइ बल हानी।।
बोले रामहि देइ निहोरा[139]। बचउँ[140] बिचारि बंधु लघु तोरा।।
मनु मलीन[141] तनु सुंदर कैसें। बिष रस भरा कनक[142] घटु जैसें।।

लक्ष्मण की बहस सुनकर सारे लोग भयभीत हो जाते हैं।

दो०- सुनि लछिमन बिहसे बहुरि नयन तरेरे[143] राम।
गुर समीप गवने सकुचि[144] परिहरि बानी बाम[145]।। 11।।

अति बिनीत[146] मृदु[147] सीतल[148] बानी। बोले रामु जोरि जुग पानी[149]।।
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना[150]। बालक बचनु करिअ नहिं काना।।
बररै[151] बालकु एकु सुभाऊ। इन्हहि न संत बिदूषहिं[152] काऊ।।
तेहिं नाहीं कछु काज[153] बिगारा[154]। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा।।
कृपा कोपु बधु बँधब[155] गोसाईं। मो पर करिअ दास की नाईं।।
कहिअ बेगि[156] जेहि बिधि[157] रिस जाई। मुनिनायक सोइ करौं उपाई।।
कह मुनि राम जाइ रिस कैसें। अजहुँ अनुज तव चितव अनैसें[158]।।
एहिं कें कंठ कुठारू न दीन्हा। तौ मैं काह कोपु करि कीन्हा।।

राम द्वारा क्षमा याचना

दो०- गर्भ स्त्रवहिं[159] अवनिप[160] रवनि सुनि कुठार गति घोर।
परसु अछत देखउँ जिअत बैरी भूपकिसोर।। 12।।

---

132. *सेवक* 133. *मुनिराज* 134. *परित्याग करके,* 135. *दया* 136. *गुणी* 137. *चुप, मौन* 138. *धृष्ट* 139. *उलाहना,* 140. *बचाओ* 141. *गंदा* 142. *सोना* 143. *टेढ़ा कराना, दिखाना* 144. *संकोच* 145. *उल्टा,* 146. *विनम्र* 147. *मधुर,* 148. *ठंडा* 149. *दोनों हाथ,* 150. *ज्ञानी,* 151. *बर्रै,* 152. *प्रवीण, पंडित,* 153. *काम,* 154. *बिगाड़ना,* 155. *बंध जाऊँगा,* 156. *शीघ्र* 157. *प्रकार से* 158. *कुटिलता से* 159. *गिर जाता है,* 160. *राजा-गण*

बहइ[161] न हाथु दहइ[162] रिस छाती। भा कुठारु कुंठित नृपघाती।।
भयउ बाम बिधिं फिरेउ सुभाऊ। मोरे हृदयँ कृपा कसि काऊ।।
आजु दया दुखु दुंसह सहावा। सुनि सौमित्रि[163] बिहसि सिरू नावा।।
बाउ कृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला।
जौं पै कृपाँ जरिहिं मुनि गाता[164]। कोध भएं तनु राख बिधाता[165]।।
देखु जनक हठि बालकु एहू। कीन्ह चहत जड़ जमपुर[166] गेहू[167]।।
बेगि[168] करहु किन आँखिन्ह ओटा[169]। देखत छोट खोट नृप ढोटा।।
बिहसे लखनु कहा मन माहीं। मूदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं।।

दो०- परसुरामु तब राम प्रति बोले उर अति कोध।
संभु सरासनु[170] तोरि सठ[171] करसि हमार प्रबोधु[172]।। 13।।

परशुराम द्वारा राम को युद्ध के लिए ललकारना

बंधु कहइ कटु[173] संमत[174] तोरें। तू छल बिनय करसि कर जोरें।।
करु परितोषु[175] मोर संग्रामा। नाहि त छाड़ कहाउब रामा।।
छलु तजि करहि समरू सिवद्रोही[176]। बंधु सहित न त मारउँ तोही।।
भृगुपति बकहिं[177] कुठार उठाएँ। मन मुसुकाहिं, रामु सिर नाएँ।।
गुनह[178] लखन कर हम पर रोषू। कतहुँ सुधाइहु[179] ते बड़ दोषू।।

राम का उत्तर

टेढ़[180] जानि सब बंदइ[181] काहू। बक्र[182] चंद्रमहि ग्रसइ[183] न राहू।।
राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा। कर कुठारू आगें यह सीसा।।
जेहिं रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी। मोहि जानिअ आपन अनुगामी[184]।।

दो०- प्रभुहि सेवकहि समरु कस तजहु[185] बिप्रबर[186] रोसु।
बेषु[187] बिलाकें कहेसि कछु बालकहू नहिं दोसु।। 14।।

---

161. *बहना* 162. *दहलना,* 163. *लक्ष्मण,* 164. *शरीर,* 165. *ब्रह्मा* 166. *यमलोक,* 167. *घर* 168. *शीघ्रता से* 169. *ओट में, आड़ में,* 170. *धनुष,* 171. *दुष्ट,* 172. *उपदेश देना,* 173. *कठोर* 174. *सलाह* 175. *परितुष्ट करना, संतुष्ट करना* 176. *शिव का शत्रु* 177. *बकवास करना* 178. *अपराध* 179. *सीधापन* 180. *टेढ़ा* 181. *वंदना करना,* 182. *टेढ़ा, तिरछा* 183. *ग्रस्त करना,* 184. *अनुचर, सेवक पीछे चलने वाला,* 185. *त्याग कीजिए* 186. *श्रेष्ठ ब्राह्मण (परशुराम के लिए)* 187. *वेश भूषा*

देखि कुठार बान धनु धारी। भै लरिकहि रिस बीरु[188] बिचारी।।
नामु जान पै तुम्हहि न चीन्हा[189]। बंस[190] सुभायँ उतरु[191] तेहिं दीन्हा।।
जौं तुम्ह औतेहु[192] मुनि की नाईं। पद रज[193] सिर सिसु धरत गोसाईं।।
छमहु चूक अनजानत[194] केरी। चहिअ बिप्र उर कृपा घनेरी[195]।। राम के वचन
हमहि तुम्हहि सरिबरि[196] कसि नाथा। कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा।।
राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तोहारा।।
देव एकु गुनु धनुष हमारें। नव गुन परम पुनीत[197] तुम्हारें।।
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे। छमहु बिप्र अपराध हमारे।।

दो०- बार बार मुनि बिप्रबर कहा राम सन राम।
बोले भृगुपति सरुष[198] हसि तहूँ बंधु सम बाम।। 15।।

निपटहिं[199] द्विज करि जानहि मोही। मैं जस बिप्र सुनावउँ तोही।।
चाप[200] स्रुवा सर आहुति जानू। कोपु मोर अति घोर कृसानू[201]।। परशुराम राम के उत्तर से असंतुष्ट
समिधि[202] सेन चतुरंग[203] सुहाई[204]। महा महीप भए पसु[205] आई।।
मैं। एहिं परसु काटि बलि दीन्हे। समर जग्य[206] जप कोटिन्ह कीन्हे।।
मोर प्रभाउ बिदित नहिं तोरें। बोलसि निदरि[207] बिप्र के भोरें[208]।।
भंजेउ[209] चापु दापु[210] बड़ बाढ़ा। अहमिति[211] मनहुँ जीति जगु ठाढ़ा।।
राम कहा मुनि कहहु बिचारी। रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी।।
छुअतहिं टूट पिनाक[212] पुराना। मैं केहि हेतु करौं अभिमाना।।

दो०- जौं हम निदरहिं बिप्र बदि[213] सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तौ अस को जग सुभटु जेहि भय बस नावहिं माथ।। 16।।

---

188. *वीर, योद्धा* 189. *पहचानना* 190. *वंश, कुल* 191. उत्तर 192. *आते* 193. *धूल* 194. *अनजाने* 195. *घनी, बहुत सारी* 196. *बराबरी* 197. *पवित्र, श्रेष्ठ* 198. *क्रोध सहित,* 199. *मात्र, शुद्ध, नितांत* 200. *धनुष* 201. *अग्नि* 202. *समिधा, हवन सामग्री,* 203. *सेना* 204. *चतुरंगी (हाथी सेना, अश्व सेना, रथ सेना और पैदल सेना इन चारों के लिए चतुरंगी सेना पद प्रयुक्त होता रहा है।)* 205. *पशु,* 206. *यज्ञ* 207. *अपमान, निरादर* 208. *भोला* 209. *तोड़ने से* 210. *दर्प* 211. *अहंभाव (अहंता)* 212. *शिव धनुष* 213. *बोलना*

देव दनुज[214] भूपति[215] भट नाना[216]। समबल[217] अधिक होउ बलवाना।।
जौं रन हमहि पचारै[218] कोऊ। लरहिं सुखेन[219] कालु किन होऊ।।
छत्रिय तनु धरि समर सकाना[220]। कुल कलंकु तेहि पावँर[221] आना।।
कहउँ सुभाउ न कुलहि प्रसंसी। कालहु डरहि न रन रघुबंसी।।
बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय[222] होइ जो तुम्हहि डेराई।।
सुनि मृदु गूढ़[223] बचन रघुपति के। उघरे[224] पटल[225] परसुधर मति[226] के।।
राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू।।
देत चापु आपुहिं चलि गयऊ। परसुराम मन बिसमय[227] भयऊ।।

राम के देवत्व का ज्ञान

दो०- जाना राम प्रभाउ तब पुलक प्रफुल्लित गात[228]।
जोरि पानि[229] बोले बचन हृदयँ न प्रेमु अमात[230]।। 17।।

जय रघुबंस बनज[231] बन भानू[232]। गहन[233] दनुज कुल दहन कृसानू।।
जय सुर बिप्र धेनु हितकारी। जय मद मोह कोह भ्रम हारी।।
बिनय सील करुना गुन सागर। जयति बचन रचना अति नागर[234]।।
सेवक सुखद सुभग[235] सब अंगा। जय सरीर छबि[236] कोटि अनंगा[237]।।
करौं काह मुख एक प्रसंसा। जय महेस[238] मन मानस[239] हंसा।।
अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर[240] दोउ भ्राता।।
कहि जय जय जय रघुकुलकेतू। भृगुपति गए बनहि[241] तप हेतू।।
अपभयँ[242] कुटिल महीप डेराने। जहँ तहँ कायर[243] गवँहि[244] पराने[245]।।

परशुराम द्वारा क्षमा याचना

दो०- देवन्ह दीन्ही दुंदुभीं[246] प्रभु पर बरषहि[247] फूल।
हरषे[248] पुर नर नारि सब मिटी मोहमय सूल[249]।। 18।।

---

214. *दानव* 215. *राजा,* 216. *अनेक* 217. *बराबरी बल में* 218. *ललकारना* 219. *सुख* 220. *भागना* 221. *नीच* 222. *भयरहित* 223. *गंभीर* 224. *खुल गये,* 225. *पट,* 226. *बुद्धि* 227. *आश्चर्य* 228. *शरीर* 229. *हाथ* 230. *नहीं अंटता है,* 231. *वनस्पति* 232. *सूर्य* 233. *घना,* 234. *सुंदर* 235. *सुडौल* 236. *छवि, सौंदर्य* 237. *कामदेव* 238. *शिव* 239. *मानसरोवर* 240. *क्षमा-घर-अत्यंत क्षमा-शील,* 241. *वन में* 242. *डर* 243. *डरपोक* 244. *चले गये* 245. *भाग गये,* 246. *एक विशेष प्रकार का बाना,* 247. *बरसना* 248. *प्रसन्न होना,* 249. *कांटा, कष्ट।*

कवितावली

कवितावली में तुलसीदास ने युगीन यथार्थ चित्रित किया है। ऐसा करते हुए वे आदर्श-चित्रण की पुरानी लीक छोड़ते हैं। जिन मान्यताओं, विचारों के लिए संघर्ष कर रहे थे, वे कहीं दिखाई नहीं पड़ते हैं। उदाहरण के तौर पर 'वर्ण और जाति' का पारंपरिक ढांचा जिसकी उन्होंने वकालत की थी अब बिलकुल नए रूप में सामने आता है। पद संख्या एक में वे पारंपरिक समाज-व्यवस्था को चुनौती देते हैं। अब वे अपने साथ धूत, अवधूत, राजपूत, जुलाहा कुछ भी लगाये जाने से परेशान नहीं होते हैं। पद संख्या दो में उनके समय का सत्य और भी स्पष्ट रूप में प्रकट होता है। उन्होंने साफ-साफ शब्दों में लिखा कि, श्रमिक, किसान, व्यापारी, भिखारी, भाट, सेवक, चंचल नट, चोर, दूत और बाजीगर आदि सभी परेशान हैं। पेट भरने के लिए लोग ऊँचे-नीचे कार्यों में लिप्त हैं। यहाँ तक कि, पेट के लिए ये सभी अपनी संतानों को भी बेचने से नहीं डरते हैं। यह उनके समाज का कारुणिक चित्र हैं, जिसे वे निःसंकोच भाव से व्यक्त करते हैं। पद संख्या तीन में भी गोस्वामी तुलसीदास ने अपने समाज की दरिद्र दशा का चित्र उपस्थित किया है। उन्होंने लिखा है कि, किसानों के पास खेती नहीं है, भिखारी को भीख नहीं मिलती है, वैश्यों के पास किसी तरह का व्यापार नहीं है और नौकरी करने वालों के पास नौकरी नहीं है। सब लोग जीविकाहीन हैं। चारों तरफ दरिद्रता का साम्राज्य है। पद संख्या चार में तुलसी ने एक बार फिर से पारंपरिक सामाजिक ढांचे पर प्रहार किया है। वे स्पष्ट शब्दों में जाति-पाति की निरर्थकता का उद्घोष करते हैं। 'कवितावली' में तुलसीदास के व्यक्तिगत जीवन के भी चित्र मिलते हैं। ऐसा ही एक संदर्भ पद संख्या पाँच में व्यक्त हुआ है। उन्हें बहुत तरह के आक्षेपों का सामना करना पड़ता था, लेकिन वे अविचलित भाव से सभी आरोपों का मुकाबला करते थे। वस्तुतः इसे तुलसी के नितांत व्यक्तिगत संदर्भ की तरह नहीं लिया जाना चाहिए। क्योंकि इससे यह भी स्पष्ट होता है कि, किसी समाज में भले लोगों की क्या स्थिति होती है? उन्हें क्या कुछ नहीं झेलना पड़ता है? पद संख्या छह में तुलसीदास ने राम भक्ति की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए जोगियों और साधुओं के छद्म पर भी तीखा प्रहर किया है।

पद संख्या सात में तुलसीदास ने काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि विकारों के सर्वव्यापी प्रभाव की ओर संकेत करते हुए भगवान राम को ही इनसे बचने का एकमात्र उपाय बताया है। पद संख्या आठ में तुलसीदास ने समाज में बढ़ती हुई लोभ की प्रवृत्ति की निंदा करते हुए सांसारिक वस्तुओं की क्षणभंगुरता की बात की है। पद संख्या नौ में . राम की भक्ति की महिमा गाई गई है और उसे आगमों, वेदों और पुराणों द्वारा प्रवर्तित मुक्ति-मार्ग से श्रेष्ठतर बताया है। पद संख्या दस में तुलसीदास ने अपने समाज की दशा का अत्यंत मार्मिक चित्र उपस्थित किया है। लोग भूख से बेहाल हैं। पेट भरने के लिए द्वार-द्वार भटक रहे हैं, प्यासों को पानी नहीं नसीब होता है और भूख से व्याकुल लोग चने के मात्र चार दानों से भी वंचित है।

इस प्रकार तुलसीदास ने अपने समय का सामाजिक यथार्थ अत्यंत प्रामाणिक समय में प्रस्तुत कर दिया है।

कवितावली : उत्तरकाण्ड

धूत[1] कहौ, अवधूत[2] कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कहौ कोऊ।
काहूकी बेटीसों बेटा न ब्याहब, काहूकी जाति बिगार न सोऊ।
तुलसी सरनाभ गुलामु है रामको, जाको रूचैसो[3] कहै कछु ओऊ।
माँगि कै खैबो, मसीतको[4] सोइबो, लैबोको एकु न दैबेको दोऊ। ।। 1।।

परंपरागत समाज व्यवस्था को चुनौती

किसबी[5], किसान-कुल, बनिक, भिखारी भाट,
चाकर, चपल नट, चोर, चार, चेटकी[6]।
पेटको पढ़त, गुन गढ़त, चढ़त गिरि,
अटत गहन-गन अहन अखेटकी[7]।।
ऊँचे-नीचे करम, धरम-अधरम करि,
पेट ही को पचत, बेचत बेटा-बेटकी।
'तुलसी' बुझाइ एक राम घनस्याम ही तें,
आगि बड़वागिते[8] बड़ी है आगि पेटकी। ।। 2 ।।

समकालीन यथार्थ

खेती न किसानको, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिकको बनिज, न चाकरको चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहैं एक एकन सों 'कहाँ जाई, का करी?'
बेदहूँ पुरान कही, लोकहूँ बिलोकिअत,
साँकरे सबै पै, राम! रावरें कृपा करी।
दारिद-दसानन[9] दबाई दुनी, दीनबंधु!
दुरित-दहन देखि तुलसी हहा करी। ।। 3।

समाज की दारुण दशा

---

1. धूर्त, ठग 2. औघड़ 3. अच्छा लगे 4. मस्जिद में, 5. श्रमजीवी 6. इंद्रजाल 7. शिकार 8. समुद्र की आग (बड़वानल)
9. दरिद्रता रूपी रावण,

मेरें जाति-पाँति न चहौं काहूकी जाति-पाँति।
मेरे कोऊ कामको न हौं काहूके कामको।
लोकु परलोकु रघुनाथही के हाथ सब,
भारी है भरोसो तुलसीके एक नामको।।
अति ही अयाने[10] उपखानो[11] नहि बूझैं लोग,
'साह ही को गोतु[12] गोतु होत है गुलामको।।
साधु कै असाधु कै भलो कै पोच[13], सोचु कहा,
का काहू के द्वार परौं, जो हौं सो हौं रामको।। ।।4।।

पांरपरिक सामाजिक ढाँचे पर प्रहार

कोऊ कहै, करत कुसाज[14], दगाबाज बड़ो,
कोऊ कहै, रामको गुलामु खरो[15] खूब है।
साधु जानैं महासाधु, खल जानैं महाखल,
बानी झूँठी-साँची कोटि उठत हबूब[16] है।।
चहत न काहूसों न कहत काहूकी कछू,
सबकी सहत, उर अंतर न ऊब है।
तुलसीको भलो पोच हाथ रघुनाथही के
रामकी भगति-भूमि मेरी मति दूब है।। ।।5।।

समाज में भले लोगों की दुर्गति

जागैं जोगी-जंगम[17], जती-जमाती ध्यान धरैं,
डरैं उर भारी लोभ, मोह, कोह, कामके।
जागैं राजा राजकाज, सेबक-समाज, साज
सोचैं सुनि समाचार बड़े बैरी बामके[18]।।
जागैं बुध विद्या हित पंडित चकित चित,
जागैं लोभी लालच धरनि,धन धामके।
जागैं भोगी भोग हीं, बियोगी, रोगी सोगबस,
सोवै सुख तुलसी भरोसे एक रामके।। ।।6।।

जोगियों ढोंगियों के छद्म पर प्रहार

---

10. अज्ञानी, गंवार 11. कहावत 12. गोत्र, 13. तुच्छ, छोटा, नीच, 14. छल-कपट 15. शुद्ध, सच्चा 16. लहर, 17. योगी और घुमक्कड़ साधु 18. प्रतिकूल, विपरीत

NMDC-067

को न क्रोध निरदह्यो[19], काम बस केहि नहि कीन्हो?
को न लोभ दृढ़ फंद बाँधि त्रासन करि दीन्हो?
कौन हृदयँ नहि लाग कठिन अति नारि-नयन-सर?
लोंचनजुत नहि अंध भयो श्री पाइ कौन नर?
सुर-नाग-लोक महिमंडलहुँ को जु मोह कीन्हो जय न?
कह तुलसिदासु सो ऊबरै, जेहि राख रामु राजिवनयन। ।।7।।

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह का प्रभाव

कालिहीं तरुन तन, कालिहीं-धरनि-धन
कालिहीं जितौंगी रन, कहत कुचालि है।
कालिहीं साधौंगो काज, कालिहीं राजा-समाज,

मसक[20] ह्वै कहै, 'भार मेरे मेरु[21] हालिहै[22]'।।
तुलसी यही कुभाँति घने घर घालि आई,
घने घर घालति है, घने घर घालिहै।
देखत-सुनत-समुझतहू न सूझै सोई,
कबहूँ कह्यो न कालहू कोकालु कालि है। ।।8।।

सांसारिक क्षणभंगुरता

आगम[23] बेद, पुरान बखानत मारग कोटिन, जाहिं न जाने।
जे मुनि ते पुनि आपुहि आपुको ईसु कहावत सिद्ध सबाने।।
धर्म सबै कलिकाल ग्रसे,जप, जोग, बिरागु लै जीव पराने।
को करि सोचु मरै 'तुलसी' हम जानकीनाथ के हाथ बिकाने।। 9।।

राम भक्ति वेद-पुराण से श्रेष्ठ

लालची ललात, बिललात द्वार-द्वार दीन,
बदन मलीन, मन मिटै ना बिसूरना।
ताकत सराध, कै बिबाह, कै उछाह कछू,
डोलै लोल बूझत सबद ढोल-तूरना[24]।।
प्यासेहूँ न पावै बारि, भूखें न चनक[25] चारि,
चाहत अहारन[26] पहार, दारि घूर ना।
सोकको अगार, दुखभार भरो तौलौं जन
जौलौं देबी द्रवै न भवानी अन्नपूरना। ।। 10।।

सामाजिक यथार्थ का मार्मिक चिंत्रण

---

19. *जलाया नहीं (दहन नहीं किया)*, 20. *मच्छर*, 21. *मेरू नामक पर्वत* 22. *हिल जायेगा* 23. *शास्त्र* 24. *तुरही(वाद्य यंत्र)* 25. *चना* 26. भोजन, *आहार।*

NMDC-067

विनयपत्रिका

विनयपत्रिका, भक्त तुलसीदास की अपने आराध्य श्रीराम के लिए लिखी गई अर्जी है। इसमें कवि का मंतव्य बहुत साफ है। वह अपने प्रभु तक अपना हाल-समाचार पहुँचाना चाहता है। इसलिए यह ग्रंथ 'रामचरितमानस' के स्वर से अलग है। इसमें तुलसीदास ने अत्यंत विनय और सच्चाई के साथ आत्म-विश्लेषण किया है।

प्रथम पद में तुलसीदास ने माता जानकी से अपनी करुण गाथा राम तक पहुँचाने की प्रार्थना की है। उन्हें यह विश्वास है कि कृपालु राम के सुनने मात्र से ही उनकी बिगड़ी बन जायेगी। दूसरे पद में तुलसीदास ने अपने आराध्य राम की महत्ता और अपने छोटेपन की चर्चा की है और अपने प्रभु से 'चरण शरण' की कामना की है। तीसरे पद में एक सांसारिक जीव की भक्ति की उपलब्धि और असामर्थ्य की ओर संकेत करते हुए तुलसीदास ने राम से असहनीय दुखों को खत्म करने और अपने भक्त वत्सल होने के प्रण को सही साबित करने की प्रार्थना की है। पद संख्या चार में तुलसी ने यह स्वीकार किया है कि, उन्हें राम नाम रूपी चिंतामणि मिल है और वे सांसारिक प्रपंचों से मुक्त हो जायेंगे। पद संख्या पाँच में तुलसीदास ने विभिन्न दार्शनिक मतों का खण्डन करते हुए भक्ति की महत्ता का प्रतिपादन किया है। साथ ही 'आत्मज्ञान' की भूमिका पर भी प्रकाश डाला गया है।

पद संख्या छह में तुलसीदास ने मुक्ति के प्रचलित ढेरों मार्गों का उल्लेख करते हुए स्पष्ट किया है कि, मुक्ति के लिए एकमात्र मार्ग या माध्यम तो भगवान राम का नाम ही है। इसीलिए तुलसी बाकी मार्गों को अविश्वसनीय और अनुपयोगी मानते हैं और एकमात्र राम नाम का ही भरोसा रखते हैं। पद संख्या सात में तुलसीदास ने अपने आराध्य की महिमा का गान किया है। उनके प्रभु राम बिना किसी तरह की सेवा के हीं दुखियों, दीनों पर द्रवित होने वाले हैं। उदारता में उनकी बराबरी करने वाला अन्य कोई नहीं है। इस तरह तुलसीदास स्वंय को राम की भक्ति के लिए तैयार करते हैं। और दूसरे भक्त-जनों को भी। पद संख्या आठ में तुलसीदास ने संत-स्वभाव की चर्चा करते हुए 'अविचल हरिभक्ति' पर बल दिया है। पद संख्या नौ में तुलसी ने 'सीता-राम' की भक्ति के आदर्श की स्थापना की है। उनका साफ मानना है कि, परम प्रिय को भी शत्रु की तरह त्याग देना चाहिए। पद संख्या दस में तुलसीदास ने राम नाम के स्मरण की महिमा गाते हुए उसे सभी सांसारिक मुसीबतों से मुक्ति दिलाने वाला बताया है।

NMDC-067

विनयपत्रिका

कबहुँक अम्ब अवसर पाइ।
मेरिऔ सुधि[2] द्याइबी[3], कछु करून-कथा चलाइ।।
दीन सब अँगहीन छीन मलीन अघी[4] अघाइ[5]।
नाम लै भरै उदर एक प्रभु-दासी-दास कहाइ।।
बूझि है 'सो है कौन' कहिबी नाम दसा जनाइ।
सुनत राम कृपालु के मेरी बिगरिऔ[6] बनि जाइ।
जानकी जगजननि जन की किये बचन सहाइ।
तरै तुलसीदास भव तव-नाथ-गुनगन गाइ। ।। 1।।

जानकी से राम तक संदेश पहुँचाने की प्रार्थना

तू दयालु, दीन हौं, तु दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी[7], तू पापपुंज-हारी[8]।।
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो?
मो समान आरत[9] नहिं, आरतिहर तोसो।।
ब्रह्म तू, हौं जीव तू ठाकुर[10], हौं चेरो[11]।
तात, मात, गुरु, सखा तू सब बिधि हितू मेरो।।
तोहिं-मोंहि नाते अनेक मानिये जो भावै।
ज्यों-क्यों तुलसी कृपालु! चरन-सरन पावै। ।। 2।।

आराध्य राम की महत्ता और अपनी लघुता का चित्रण

ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि[12] राम-भगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की।।
धूम-समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घन की।
नहिं तहँ सीतलता न बारि[13], पुनि हानि होत लोचन की।।
ज्यों गच काँच[14] बिलोकि सेन[15] जड़ छाँह आपने तन की।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की।।
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि, जानत हौ गति जन की।
तुलसीदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन[16] की। ।। 3।।

आराध्य राम से दुखों को दूर करने की प्रार्थना

---

1. *माता* 2. *ध्यान, स्मृति* 3. *दिला देना, दिखा देना,* 4. पापी 5. *डूबा हुआ* 6. *बिगड़ा हुआ* 7. पापी 8. समस्त पापों *का नाश करने वाला (ईश्वर)* 9. दुखी 10. *स्वामी, मालिक* 11. चेला, सेवक 12. छोड़कर 13. जल, 14. दीवाल में जड़ा कांँच *(शीशा)* 15. बाज, 16. प्रण, प्रतिज्ञा,

NMDC-067

अबलौ[17] नसानी[18], अब न नसैहौं।
राम-कृपा भव-निसा सिरानी[19] जागे पुनि न डसैहौं[20]।।
पायो नाम चारूचिंतामनि[21], उर कर ते न खसैहौं[22]।
स्यामरूप सुचि[23] रुचिर[24] कसौटी, चित कंचनहिं कसैहौं।
परबस जानि हँस्यो इन इन्द्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुकर पन कै तुलसी रघुपति-पद-कमल बसैहौं। ।। 4।।

राम कृपा की प्राप्ति

केसब कहि न जाइ का कहिये।
देखत तव रचना विचित्र अति, समुझि मनहिं मन रहिये।।
सून्य भीति[25] पर चित्र रंग नहिं, तनु बिनु लिखा चितेर[26]।
धोये मिटै न मरे भीति, दुख पाइय इहि तनु हेरे।
रबिकर-नीर[27] वसै अति दारुन[28], मकर[29] रूप तेहिं माहीं।
बदन हीन सा ग्रसै चराचर[30], पान[31] करन जें जाहीं।।
कोऊ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मानै।
तुलसीदास परिहरै तीनि भ्रम, सो आपन पहिचानै। ।। 5।।

भक्ति की महत्ता

विस्वास एक राम-नाम को।
मानत नहिं परितीति अनत ऐसाई सुभाव मन बाम[32] को।।
पढ़िबो पर्‌यो न छठी[33], छ मत[34] रिगु[35] जजुर[36], अथर्वन[37] साम[38] को।
ब्रत तीरथ तप सुनि सहमत पचि[39] मरै करै तन छाम[40] को।।
करम-जाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित[41] राम को।
ग्यान विराग जोग जप भय लोभ मोह कोह काम को।।
सब दिन सब लायक भव गायक रघुनायक गुन-ग्राम को।
बैठे नाम-कामतरु-तर[42] डर कौन घोर घाम[43] को।।

राम की महत्ता

---

17. अब तक 18. बर्बाद किया, व्यर्थ किया, 19. बीत गई 20. बिस्तर बिछाना 21. मनोरथ पूरा करने वाली सुंदर मणि, 22. गिराऊँगा 23. पवित्र 24. सुंदर 25. दीवाल, भित्ति 26. चित्रकार 27. सूर्य किरणों का जल (मृगतृष्णा का जल) 28. कठिन, कठोर, 29. मगरमच्छ 30. जड़-चेतन जगत 31. पीने के अर्थ में प्रयुक्त है, 32. उलटा, कुटिल 33. भाग्य में नहीं लिखा गया 34. षड् दर्शन (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा वेदांत) 35. ऋगवेद, 36. यजुर्वेद 37. अथर्ववेद 38. सामवेद, 39. मर-खप जाना 40. दुर्बल 41. उचित साधन करना, 42. नाम रूपी कल्पवृक्ष के नीचे 43. धूप,

को जानै का जैहैं जमपुर, को सुरपुर परधाम को।
तुलसिहिं बहुत भलो लागत जग जीवन रामगुलाम को। ।। 6।।

ऐसौ का उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै[44] दीन पर राम सरिस कोऊ नाहीं।
जो गति जोग बिरागु जतन करि नहिं पावत मुनि ग्यानी।
सो गति[45] देत गीध[46] सबरी[47] कहँ प्रभु न बहुत जिय जानी।। — आराध्य की महिमा
जा संपति दस सीस अरपि[48] करि रावन सिव पहँ[49] लीन्हीं।
सो संपदा विभीषन कहँ अति सकुच-सहित हरि दीन्हीं।।
तुलसीदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करैं कृपानिधि तेरो।। ।। 7।।

कबहुँक हौं यहि रहनि[50] रहौंगो।
श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत-सुभाव गहौंगा[51]।।
जथालाभ[52] संतोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो[53]।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो[54]। — संत स्वभाव
परूष[55] बचन अति दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो[56]।
बिगत मान, सम सीतल मन, पर गुन नहिं दोष कहौंगो।।
परिहरि देह-जनित चिन्ता, दुख-सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसीदास प्रभु यहि पथ रहि, अबिचल हरि भक्ति लहौंगो[57]। ।। 8।।

जाके प्रिय न राम-बैदेही[58]।
सो छाँड़िये कोटि बैरी सम, जद्यपि जरम सनेही।।
तज्यो पिता प्रहलाद, विभीषन बंधु, भरत महतारी। — सीता-राम की भक्ति
बलिगुरु तज्यो, कंत ब्रज-ब्रनितनि, भये मुद मंगलकारी।
नाते[59] नेह राम के मनियत सुहृद सुसेव्य[60] जहाँ लौं।

---

44. द्रवित हो, कृपा करे 45. दशा स्थिति (मुक्ति) 46. गिद्ध (जटायु) 47. शबरी (भीलनी जिसने राम को जूठे बेर खिलाये थे) 48. अर्पित 49. से 50. आचरण 51. ग्रहण करूँगा 52. यथा लाभ (जो कुछ मिल जाए, अधिक की लालसा का त्याग) 53. चाहूँगा 54. निर्वाह करूँगा या निभाऊँगा 55. कठोर 56. जलाना 57. प्राप्त करूँगा, 58. राम जानकी, राम सीता (विदेह अर्थात राजा जनक की पुत्री होने की वजह से सीता को वैदेही कहा गया है) 59. रिश्ता, संबंध 60. पूज्य,

NMDC-067

अंजन कहा आँख जेहि फूटैं, बहुतक कहौं कहाँ कहाँ लौं।।
तुलसी सो सब भाँति परम हित पूज्य प्रान ते प्यारो।
जासों होय सनेह राम-पद, एतो मतो हमारो। ।। 9।।

राम कहत चलु, राम कहत चलु, राम कहत चलु भाई रे।
नाहिं तौ भव-बेगारि[61] महँ परिहौ[62] छूटत अति कठिनाई रे।।
बाँस[63] पुरान[64] साज[65] सब अटखट[66] सरल तिकोन[67] खटोला[68] रे।
हमहिं दिहल करि कुटिल करमचंद मन्द मोल बिनु डोला रे।।
विषम कहार[69] मार-मद-माते चलहिं न पाउँ बटोरा रे।
मन्द-बिलन्द[70] अभेरा[71] दलकन[72] पाइय दुख झझकोरा रे।।
काँट[73] कुराय[74] लपेटन लोटन ठाँवहिं[75] ठाउँ बझाऊ रे।
जस जस चलिय दूरि तस तस निज बास न भेंट लगाऊ रे।।
मारग अगम[76], संग नहिं संबल, नाउँ गाउ[77] कर भूला रे।
तुलसीदास भाव-त्रास हरहु अब होहु राम अनुकूला रे।। ।। 10।।

राम नाम के स्मरण की महिमा

---

61. संसार की बेगार (सांसारिक प्रपंच) 62. पड़ जायेगा 63. बाँस 64. पुराना 65. सजाना 66. गड़बड़, ऊटपटाँग 67. तीन कोनों वाला 68. डोली, पालकी 69. पालकी ढोने वाले, कहार 70. नीचा-ऊँचा 71. धक्का 72. झटके 73. काँटा 74. कंकड़, पत्थर 75. जगह-जगह 76. अगम्य, अजाना, कठिन 77. गाँव का।

NMDC-067

सूरदास

सूरदास भक्ति काव्य परंपरा की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं। उन्होंने श्रीकृष्ण को आधार बनाकर उच्च कोटि के साहित्य की रचना की है। अन्य प्राचीन और मध्यकालीन कवियों की तरह ही सूर ने भी अपने बारे में लगभग नहीं के बराबर लिखा है। यही वजह है कि, उनके जन्म, समय आदि के विषय में मतभेद की स्थिति रही है। मिश्र बंधु, आचार्य रामचंद्र शुक्ल और डॉ0 राम कुमार वर्मा आदि सूर का जन्म संवत् 1540 वि0 में मानते हैं। इस आधार पर सूर का जन्म सन् 1483 ई0 में निश्चित होता है, लेकिन 'सूर निर्णय' के लेखक (मीतल और पारीख) सूर का जन्म संवत् 1533 वि0 में मानते हैं। उनके अनुसार सूर आयु में वल्लभाचार्य से दस दिन छोटे थे। आचार्य वल्लभ का जन्म संवत् 1535 वि0 वैशाख कृष्ण एकादशी रविवार को हुआ था। इस आधार पर सूरदास का जन्म वैशाख शुक्ल पंचमी मंगलवार संवत् 1535 वि0 अर्थात सन् 1478 ई0 निश्चित होता है। वल्लभाचार्य 'सूर सारावली' का रचना काल संवत् 1602 वि0 अर्थात सन् 1545 ई0 मानते हैं। उस समय सूर 67 वर्ष के थे। इस आधार पर भी सूर का जन्म सन् 1478 ई0 ठहरता है।

यह असंदिग्ध है कि, सूरदास वल्लभाचार्य के प्रसिद्ध शिष्य थे। वल्लभाचार्य के पुत्र आचार्य विट्ठलनाथजी ने अपने पिता की मृत्यु के बाद उनके शिष्यों व अपने शिष्यों को मिलाकर 'अष्टछाप' बनाया था। इसमें भी उन्होंने सूर को प्रमुख स्थान दिया था। उन्हें 'अष्टछाप के जहाज ' की संज्ञा दी गई है।

रचनाएँ

सूरदास की तीन प्रामाणिक रचनाओं की प्राय: चर्चा होती है। इनमें सूरसारावली, साहित्य लहरी और सूर सागर सम्मिलित हैं। 'सूरसागर' सूरदास की अक्षय कीर्ति का आधार है।

सूरदास ने ब्रजभाषा में रचनाएं की हैं। यह उनकी मातृभाषा होने के साथ-साथ उनके आराध्य की क्रीड़ाभूमि ब्रज प्रदेश की लोक भाषा भी है। सूर ने ब्रजभाषा को अपनी लेखनी से समृद्ध किया है। विद्वान इन्हें ब्रजभाषा का बाल्मीकि तक कहते हैं।

सूर का सम्यक् मूल्यांकन करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अत्यंत मार्मिक टिप्पणी की है :

"तुलसी की प्रतिभा सर्वतोमुखी है और सूर की एकमुखी। पर एकमुखी होकर उसने अपनी दिशा में जितनी दूर तक की दौड़ लगाई है उतनी दूर तक की तुलसी ने भी नहीं; और किसी कवि की

NMDC-067

तो बात ही क्या है।" जिस क्षेत्र को सूर ने चुना है, उस पर उनका अधिकार अपरिमित है, उसके वे सम्राट हैं।" (भ्रमरगीत सार की भूमिका पृ0 37)

संकलन में सूर साहित्य के वैशिष्ट्य से संक्षेप में आपका परिचय करने का विचार किया गया है। इसी योजना को ध्यान में रखते हुए सूर-साहित्य के तीन अंश 1. विनय के पद, 2. वात्सल्य के पद और 3. भ्रमर गीत रखे गये हैं। ये तीनों ही अंश आपको सूर की कविताई और उनके भक्त-रूप से भली-भांति परिचित करायेंगे। यहाँ संकलित अंशों के अध्ययन की सुविधा का ध्यान रखते हुए कुछ संकेत दिए जा रहे हैं-

विनय के पद

सूरदास सबसे पहले भक्त हैं। कविता आराध्य श्रीकृष्ण को याद करने का बहाना भर है। विनय के पद इसी बात का समर्थन करते हैं। भक्त अपने आपको नितांत क्षुद्र-हेय साबित करता हुआ आराध्य की कृपा की आकांक्षा रखता है। वह अपने प्रभु को गारिमामय, सामर्थ्यवान और करुणाशील के रूप में चित्रित करता है, जबकि स्वयं को सबसे बड़े पापी के रूप में देखता है- 'प्रभु हौं सब पतितनि कौ टीकौ'।

गोस्वामी तुलसीदास की विनय पद्धति इससे भिन्न नहीं है-

"तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं। प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंज-हारी"।।

इसी पाठ्यपुस्तक में तुलसी की विनय पत्रिका के भी अंश है। सूरदास और तुलसीदास दोनों के विनय संबंधी पदों को एक साथ पढ़ कर देखेंगे तो आपको विनय की परंपरा का अच्छा ज्ञान प्राप्त होगा।

पद संख्या 1 में सूरदास अपने करुणामय स्वामी श्रीकृष्ण की बार-बार वंदना करते हैं क्योंकि उनके प्रभु सब कुछ करने में समर्थ हैं। उनकी कृपा मात्र से असंभव से असंभव कार्य भी संभव हो जाते हैं।

श्रीकृष्ण पतितों को शरण देने वाले हैं। दुखियों के कष्टों का निवारण करने वाले हैं। इसीलिए वे सूर को आकर्षित करते हैं। पद संख्या 3 में सूर ने यही भाव व्यक्त किया है। सूर के प्रभु विपत्ति के मित्र हैं। यह सिर्फ कहने मात्र के लिए नहीं है। आजमाई हुई बात है। लाक्षागृह से पाण्डवों की प्राण रक्षा, अंबरीष का दुर्वासा ऋषि के शाप से बचाव जैसे बहुत सारे प्रमाण हैं। पद संख्या 4 में सूर ने संकट हरण करने वाले प्रभु का गुणगान किया है।

पद संख्या 11 में सूर ने अपने उद्धार के लिए श्रीकृष्ण से शरण की याचना की है। मुक्ति के लिए अज्ञान या भ्रम का परिहार अत्यावश्यक होता है। इसीलिए सूर श्रीकृष्ण से अपनी सारी अविद्या दूर करने की प्रार्थना करते हैं। पद संख्या 14 में सूरदास समदर्शी प्रभु से अपने अवगुणों का ध्यान नहीं रखने की प्रार्थना करते हैं। इस तरह सूर अपने विनय के पदों में एक सच्चे निरीह भक्त के रूप में सामने आते हैं। अपनी मुक्ति के लिए वे अपने आराध्य श्रीकृष्ण से बार-बार याचना करते हैं और उन्हें विश्वास भी है कि, वे मुक्त हो जायेंगे क्योंकि उनके प्रभु संकटमोचन हैं, दीनानाथ है, दीनदयाल हैं, समदर्शी हैं, आदि आदि।

NMDC-067

विनय के पद

मंगलाचरण। राग बिलावल

आराध्य की कृपा की आकांक्षा

चरन कमल बंदौ[1] हरि राइ।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै[2] अंधे कौ सब कछु दरसाइ[3]।।
बहिरौ सुनै गूँग पुनि बोलै रंक[4] चलै सिर छत्र धराइ।
सूरदास स्वामी करूनामय[5] बार बार बंदौ तिहिं पाइ।। 1।।

सगुणोपासना। राग कान्हरौ।।

सगुण की उपासना

अबिगत[6] गति कछु कहत न आवै।
ज्यौं गूँगे मीठे फल कौ रस अंतरगत[7] ही भावैं।
परम स्वाद[8] सबही सु निरंतर अमित[9] तोष[10] उपजावै।
मन बानी कौं अगम अगोचर[11] सो जानै जो पावै।।
रूप रेख गुन जाति जुगति बिनु निरालंब कित धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातैं सूर सगुन पद गावै।। 2।।

राग बिलावल

सूर के प्रभु के गुण

काहू के कुल तन न बिचारत।
अबिगत की गति कहि न परति है, ब्याध[12] अजामिल[13] तारत[14]।।
कौन जाति अरु पाँति बिदुर[15] की ताही कैं पग धारत।
भोजन करत माँगि घर उनकैं राज मान मद टारत।।
ऐसे जनम करम के ओछे[16] ओछनि हूँ ब्यौहारत।
यहै सुभाव सूर के प्रभु कौ भक्त बछल[17] प्रन पारत ।। 3।।

राग धनाश्री

दुखियों का कष्ट निवारण

ऐसैहिं जनम बहुत बौरायौ[18]।
बिमुख[19] भयौ हरि चरन कमल तजि मन संतोष न आयौ।।

---

1. वंदना करता हूँ, 2. पार करता है, 3. दिखाई पड़ने लगता है. 4. कंगाल, दरिद्र 5. करूणायुक्त, दयामय, 6. अज्ञेय (ब्रह्म) 7. मन ही मन 9. अपार 10. संतोष, तृप्ति 11. अलक्ष्य, अग्राह्य, 12. परिशिष्ट देखिए 13. परिशिष्ट देखिए 14. तारते हैं (मुक्ति प्रदान करते हैं). 15. परिशिष्ट देखिए 16. हीन, छोटे 17. वत्सल, 18. पागल बना रहा, 19. दूर होकर, अलग होकर

NMDC-067

जब जब प्रगट भयौ जल थल मैं तब तब बहु बपु[20] धारे।
काम क्रोध मद लोभ मोह बस अतिहिं किए अब भारे।।
नृग[21] कपि[22] विप्र गीध[23] गनिका[24] गज[25] कंस[26] केसि[27] खल[28] तारे।
अघ[29] बक[30] वृषभ[31] बकी[32] धेनुक[33] हति[34] भव जल निधि तैं उबारे।।
संखचूड़[35] मुष्टिक[36] प्रलंब[37] अरु तृनाबर्त[38] संहारे।
गज चानूर[39] हते दव नास्यौ ब्याल[40] मथ्यौ भयहारे।।
जन दुख जानि जमलद्रुम भंजन[41] अति आतुर है धाए।
गिरि कर धारि इन्द्र[42] मद मथ्यौ[43], दासनि सुख उपजाएं।।
रिपु कच[44] गहत द्रुपद[45] तनया जब सरन सरन कहि भाषी[46]।।
बढ़े दुकूल कोट अंबर[48] लौं सभा माँझ पति राखी।।
मृतक जिवाइ दिए गुरू के सुत ब्याध परम गति पाई।
नन्द बरुन बंधन भय मोचन[49] सूर पतित सरनाई[50]।। 4।।

राग सोरठ

गोविंद गाढ़े[51] दिन के मीत।
गज अरु ब्रज प्रहलाद[52] द्रौपदी सुमिरत ही निहचीत[53]।।
लाखागृह[54] पांडवनि उबारे साक[55] पत्र मुख नाए।
अंबरीष[56] हित साप[57] निवारे ब्याकुल चले पराए।। भक्तों का उद्धार
नृप कन्या कौ व्रत प्रतिपारयौ[58] कपट वेष इक धारयौ।
तामैं प्रगट भए श्रीपति जू अरि गन गर्व प्रहारयौ।।
कोटि छयानबै नृप सेना सब जरासंध[59] बँध छोरे।
ऐसैं जन परतिज्ञा[60] राखत जुद्ध प्रगट करि जोरे।।
गुरु बांधव हित मिलै सुदामहिं[61] तंदुल[62] पुनि जाँचत।

---

20. शरीर 21. परिशिष्ट 22. परिशिष्ट 23. परिशिष्ट 24. परिशिष्ट 25. परिशिष्ट 26. कृष्ण का मामा कंस 27. केशी 28. दुष्ट 29. अघासुर 30. बकासुर 31. वृषभासुर 32. पूतना (राक्षसी) 33. धेनुकासुर, 34. मारकर 35. शंखचूड (असुर) 36. मुष्टिक (असुर) 37. प्रलंब (असुर) 38. तृणावर्त (असुर)। 39. चाणूर (असुर) 40. सर्प (कालिया नामक एक नाग को श्रीकृष्ण ने मारा था) 41. तोड़कर 42. देवताओं के राजा (इंद्र, देवराज) 43. तोड़ा, चूर कर दिया 44. बाल, 45. राजा द्रुपद (द्रौपदी के पिता), 46. बोली, 47. वस्त्र, 48. आकाश 49. मुक्त करने वाले, 50. शरण हूँ, 51. कठिन समय, आपत्ति काल 52. प्रहलाद (हिरण्यकश्यप का पुत्र, महान भक्त) 53. निश्चिंत 54. लाक्षागृह (पाण्डवों को जलाकर मार डालने के लिए दुर्योधन ने षड्यंत्र करके लाख का घर बनवाया था) 55. साग (शाक), 56. परिशिष्ट 57. शाप, 58. पालन किया, पूर्ण किया, 59. परिशिष्ट 60. प्रतिज्ञा, 61. सुदामा को, सुदामा से, 62. चावल,

NMDC-067

भगत बिरह कौ अतिही कादर[63] असुर गर्व बल नासत।।
संकट हरन चरन हरि प्रगट बेद बिदित जस[64] गावै।
सूरदास ऐसे प्रभु तजि कै घर घर देव मनावै।। 5।।

रे मन आपु[65] कौं पहिचानि।
सब जनम तैं भ्रमत[66] खोयौ अजहुँ[67] तौ कछु जानि।।
ज्यौं मृगा कस्तूरि भूलै सु तौ ताकैं पास।
भ्रमत ही वह दौरि ढूँढै जबहिं पावै बास[70]।।
भरम ही बलवंत सब मैं ईसहू[71] कैं भाइ।
जब भगत भगवंत चीह्नै[72] भरम मन तैं जाइ।।
सलिल[73] कौं सब रंग तजि कै एक रंग मिलाइ।
सूर जो द्वै रंग त्यागे यहै भक्त सुभाइ[74]।। 6।।

अद्वैत भाव

अब तुम नाम[75] गहौ मन नागर।
जातैं काल अगिनि[76] तैं बाँचौ सदा रहौ सुख सागर।।
मारि न सकै बिघन नहिं ग्रासै जम न चढ़ावै कागर।
किया कर्म करतहु निसि बासर[77] भक्ति कौ पंथ उजागर।।
सोचि बिचारि सकल स्रुति[78] सम्मति[79] हरि तैं और न आगर[80]।
सूरदास प्रभु इहिं औसर[81] भजि उतरि चलौ भवसागर।। 7।।

हरि की श्रेष्ठता

राग सारंग

हमारे निर्धन के धन राम।
चोर न लेत घटत[82] नहिं कबहूँ आवत गाढ़े काम।।
जल नहिं बूड़त[83] अगिनि न दाहत[84] है ऐसौ हरि नाम।
बैकुंठनाथ[85] सकल सुख दाता सूरदास सुख धाम।। 8।।

सगुण भक्ति की महता

---

63. कातर, दुखी 64. ऐसा, 65. स्वंय को, अपने को, 66. भ्रमित (भ्रम में पड़ा हुआ) 67. आज भी 70. सुगंध 71. ईश्वर को भी 72. पहचान लेता है, 73. पानी 74. स्वभाव 75. नाम (भगवान का) 76. अग्नि 77. दिन 78. वेद 79. सम्मत 80. श्रेष्ठ, 81. अवसर, समय, 82. कम नहीं होता है, 83. डूबता 84. दहन करना, जलाना, 85. ईश्वर,

राग सोरठ।

अब कैं राखि[86] लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठयौ द्रुम[87] डरिया[88] पारधि[89] साधे बान[90]।।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत ऊपर ढुक्यौ[91] सचान[92]।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह कौन उबारै प्रान।।
सुमिरत ही अहि[93] डस्यौ[94]
पारधी कर छुट्यो संधान[95]।
सूरदास सर[96] लग्यौ सचानहिं जय जयैं कृपानिधान।। 9।।

कृपा निधान की महिमा

राग धनाश्री

दीन कौ दयाल सुन्यौ अभय दान दाता।
साँची बिरुदा वलि[97] तुम जग के पितु माता।।
ब्याध गींध गनिका गज इनमैं को ज्ञाता।
सुमिरत तुम आए तहँ त्रिभुवन बिख्याता।।
केसि कंस दुष्ट मारि मुष्टिक कियौ घाता।
धाए गजराज काज केतिक यह बाता।।
तीनि लोक बिभव[98] दियौ तंदुल के खाता।
सरबस[99] प्रभु रीझि[100] देत तुलसी कैं पाता[101]।।
गौतम[102] की नारि[103] तरी नैंकु परसि[104] लाता।
और को है तारिबे कौं कहौ कृपा ताता।।
माँगत है सूर त्यागि जिहिं तन-मन राता[105]।
अपनी प्रभु भक्ति देहु जासौं तुम नाता[106]।। 10।।

भक्तों के कष्ट का निवारण

राग सारंग

प्रभु हौं सब पतितनि[107] कौ टीकौ[108]।
और पतित सब दिवस चारि के हौं तौ जनमत[109] ही कौ।।
बधिक अजामिल गनिका तारी और पूतना[110] ही कौं।

प्रभु की महत्ता

---

86. शरण 87. वृक्ष 88. डाल पर 89. बहेलिया (शिकारी) 90. तीर, 91. छिपा है 92. बाज पक्षी 93. सर्प 94. डस लिया 95. निशाना 96. तीर, 97. यश, ख्याति 98. वैभव 99. सर्वस्व 100. रीझकर, खुश होकर 101. पत्ते 102. गौतम ऋषि 103. स्त्री पत्नी (अहिल्या), 104. छूकर 105. रत है, लगा है, 106. रिश्ता, 107. पतितों 108. सिरमौर (श्रेष्ठ), 109. जन्म से , 110. पूतना (राक्षसी), परिशिष्ट

NMDC-067

मोहि छाँड़ि तुम और उधारे मिटै सूल[111] क्यौं जी[112] कौं ।।
कोउ न समरथ[113] अघ[114] करिबे कौं खैंचि कहत हौं लीकौं[115]।
मरियत लाज सूर पतिराने मैं मोहूँ तैं को नीकौ।। 11 ।।

राग धनाश्री

अब मैं नाच्यौ[116] बहुत गुपाल।
काम क्रौध कौ पहिरि[117] चोलना[118] कंठ बिषय[119] की माल।।
महामोह[120] के नूपुर[121] बाजत निंदा सबद रसाल[122]।
भ्रम भोयौ[123] मन भयौ पखावज[124] चलत असंगत[125] चाल।।
तृष्ना[126] नाद[127] करति घट[128] भीतर नाना[129] बिधि दै ताल।
माया को कटि[130] फेंटा[131] बाँध्यौ लोभ तिलक दियौ भाल[132]।।
कोटिक कला काछि[133] दिखराई जल थल सुधि[134] नहिं काल।
सूरदास की सबै अबिद्या[135] दूरि करौ नँदलाल।। 12 ।।

मोह, माया, भ्रम से मुक्ति

राग कल्यान

जैसें राखहु तैसें रहौं।
जानत हौ दुख सुख सब जन के मुख करि कहा कहौं।।
कबहुँक[136] भोजन लहौं कृपानिधि कबहुँक भूख सहौं।
कबहुँक चढ़ौं तुरंग[137] महागज[138] कबहुँक भार बहौं[139]।
कमल नयन घन स्याम मनोहर अनुचर[140] भयौ रहौं।
सूरदार प्रभु भक्त कृपानिधि तुम्हारे चरन गहौं।। 13 ।।

आराध्य के चरण में भ्रम से मुक्ति

राग देवगंधार

मेरो मन अनंत[141] कहाँ सुख पावै।
जैसें उड़ि[142] जहाज कौ पच्छी[143] फिरि जहाज पर आवै।।

सगुणोपासना की महत्ता

---

111. कसक, शूल 112. हृदय का, 113. समर्थ 114. पाप, 115. दृढ़ता के साथ 116. नाच चुका, 117. पहनकर 118. चोला, वस्त्र 119. इंद्रिय सुख 120. महामोह 121. पायल 122. रसयुक्त, 123. भ्रमित भूला हुआ 124. मृदंग(बाजा), 125. उलटा 126. तृष्णा (प्यास) 127. आवाज, ध्वनि 128. हृदय में, 129. अनेक 130. कमर 131. फेंटा 132. माथे पर (मस्तक) 133. बन संवरकर 134. स्मरण 135. अज्ञान, 136. कभी-कभार 137. घोड़ा 138. हाथी (मतवाला) 139. ढोता हूँ, 140. सेवक 141. अन्यत्र (और कहाँ), 142. उड़कर 143. पक्षी

NMDC-067

कमल नैन कौ छाँड़ि महातम[144], और देव कौं ध्यावै[145]।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ[146] दुरमति[147] कूप[148] खनावै[149]।।
जिहिं मधुकर[150] अंबुज[151] रस चाख्यौ क्यौं करील[152] फल खावैं।
सूरदास प्रभु कामधेनु[153] तजि छेरी[154] कौन दुहावै।। 14।।

राग खंबावती तिताला।

हमारे प्रभु औगुन[155] चित[156] न धरौ।
समदरसी है नाम तुम्हारौ सोई पार करौ।
इक लोहा पूजा मैं राखत इक घर बधिक परौ।
सो दुविधा[157] पारस[158] नहिं जानत कंचन[159] करत खरौ[160]।। आराध्य समदर्शी है
इक नदिया इक नार[161] कहावत मैलौ नीर भरौ।
जब मिलि गए तब एक बरन[162] है गंगा[163] नाम परौ।।
तन माया ज्यौं ब्रह्म कहावत सूर सु मिलि बिगरौ[164]।
कै इनकौ निरधार[165] कीजियै कै प्रन जात टरौ[166]।। 15 ।।

---

144. माहात्म्य, महत्व 145. ध्यान करना 146. प्यासा 147. दुर्बुद्धि 148. कुँआ 149. खुदवाए 150. भौंरा 151. कमल 152. करील 153. कामधेनु (मनोवांछा पूर्ण करने वाली गाय) 154. बकरी, 155. अवगुण 155. ध्यान 156. समदर्शी 157. भेद 158. पारस पत्थर जिसके स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है, 159. सोना 160. शुद्ध 161. नाला, 162. रंग, 163. गंगा, (दिवनदी) 164. बिगड़ गया है, 165. पृथक (अलग) 166. टला (दूर हुआ),

NMDC-067

12. व्याध-यदुवंश के विनाश के बाद एक बार कृष्ण सघन वन में एक पेड़ के नीचे पैर पर पैर रखे अध-लेटे बैठे हुए थे। उनके पैर में बने पद्म-चिन्ह को हिरण की आँख समझकर एक व्याध ने उसमें निशाना लगा दिया। कृष्ण ने उसे सशरीर स्वर्ग भेज दिया और स्वयं भी वैकुण्ठ चले गए।

13. अजामिल- जन्मना ब्राह्मण था, लेकिन कर्म से पतित था। उसके पुत्र का नाम नारायण था। मृत्यु के समय यम के दूत उसे यंत्रणा दे रहे थे तो उसने अपने बेटे का नाम लेकर पुकारा। नारायण की पुकार सुनकर भगवान के दूत वहाँ पहुँच गए और उसे भगवान के पास ले आएं। भगवान ने उसे मोक्ष प्रदान किया।

15. विदुर- दासी-पुत्र और कौरवों के आश्रित थे, लेकिन मन से पाण्डवों का पक्ष लेते थे। इन्हें परम नीतिज्ञ माना जाता है। प्रसिद्ध विदुर नीति ग्रंथ इन्हीं का लिखा माना जाता है।

21. नृग- राजा था और महान दानी के रूप में ख्याति थी। वह प्रतिदिन एक करोड़ गाय ब्राह्मणों को दान करता था। एक बार दान में दी गई एक गाय किसी तरह से पुनः उसकी गायों में शामिल हो गई थी, जिसे उसने दूसरे ब्राह्मण को दान कर दिया था। पहले ब्राह्मण ने अपनी गाय पहचान ली और दूसरे ब्राह्मण से झगड़ा करने लगा। वे दोनों ब्राह्मण राजा नृग में पास पहुँचे और झगड़े का कारण बताया। राजा के क्षमा माँगने पर भी उन्होंने उसे गिरगिट होने का शाप दिया। राजा एक हजार वर्षों तक द्वारकापुरी के पास के एक कुएं में पड़ा रहा। उसे श्रीकृष्ण ने मोक्ष दिया।

22. कपि वानर- (सुग्रीव के भाई बालि को राम ने मारकर उसे मोक्ष दिया था)

23. गीध (जटायु) -सीता को हरकर ले जाते हुए रावण से युद्ध किया था, जिसमें वह बुरी तरह घायल हुआ था। बाद में उसने राम को सारा किस्सा सुनाया और अपना प्राण त्याग दिया।

24. गनिका- वेश्या। भगवान का भजन करके मोक्ष प्राप्त किया।

25. गजराज- हाथियों का राजा, उसे अपने बल पर बड़ा घमण्ड था। एक बार पानी पीते हुए उसे एक मगरमच्छ ने पकड़ लिया था। बहुत कोशिशों के बाद भी वह मुक्त न हो पाया तब उसने भगवान को स्मरण किया। उसकी पुकार सुनकर भगवान विष्णु भागे आये और सुदर्शन चक्र से मगर को मारकर गजराज का उद्धार किया।

56. अंबरीष- राजा और परम विष्णु भक्त था। दुर्वासा ऋषि ने उससे नाराज होकर उसे शाप दिया था। बाद में भगवान विष्णु ने उसकी मदद की थी।

59. जरासंध- एक अन्यायी राजा था। कृष्ण ने उसे मल्ल युद्ध में भीम के द्वारा मरवाया था।

110 पूतना- पूर्वजन्म में अप्सरा थी। बाद में किसी शाप के परिणाम स्वरूप उसने पूतना नाम की राक्षसी के रूप में जन्म लिया। कंस ने बालक कृष्ण को मारने के लिए उसे भेजा था। उसने अपने स्तनों पर विष का लेप किया और कृष्ण को दूध पिलाने लगी। कृष्ण ने दूध पीते-पीते उसके प्राण हर लिए। इस तरह उसकी मुक्ति हुई।

NMDC-067

वात्सल्य

सूरदास ने अपने आराध्य कृष्ण की लीलाओं को काव्य का आधार बनाया है। 'वात्सल्य' के पद कृष्ण की बाल-क्रीड़ाओं के सुंदर चित्र हैं। कृष्ण की बाल- क्रीड़ाओं को इतने सजीव और मार्मिक रूप में अभिव्यक्ति मिली है कि सहृय निस्संकोच भाव से सूर को दाद देते नहीं थकते हैं।

वात्सल्य वर्णन में सूर ने बाल-मनोविज्ञान पर अपने असाधारण अधिकार का परिचय दिया है। बालकों की एक-एक चेष्टा, छोंटे से छोटा भाव, अनुभाव सूर की दृष्टि से ओझल नहीं होता है।

प्रथम पद में - यशोदा कृष्ण को पालने में झुला रही हैं और साथ ही कुछ गाती भी जाती हैं। यह सारा उपक्रम वे अपने लाल को अच्छी सीं नींद आ जाए इसीलिए कर रही हैं। कृष्ण को नींद नहीं आती हैं, इसीलिए माता यशोदा नींद को ही उलाहना दे रही हैं। कृष्ण कभी सो जाते हैं, कभी जाग जाते हैं, यह कम चलता रहता है। छोटे बच्चों की नींद ऐसी ही होती है। सूर ने इसे बारीकी से पकड़ा है।

पद संख्या 5 में सूर ने कृष्ण के घुटनों के बल चलने का दृश्य उपस्थित किया है। कृष्ण मुख में दही लपेटे हुए घुटनों के बल चल रहे हैं। उनके गाल सुंदर हैं, आँखें बड़ी-बड़ी हैं, माथे पर गोरोचन का तिलक है। वे आभूषणों से भी सजे हुए हैं। सूर इस अद्‌भुत दृश्य का एक पल अनुभव करके धन्य-धन्य हो जाते हैं। वे इसे सैकड़ों कल्पों के जीवन से ऊपर मानते हैं।

पद संख्या 6 में सूर ने कृष्ण के मक्खन खाने का चर्चा की है। वे खीझते हुए मक्खन खा रहे हैं। उनकी आँखें लाल हैं, भौहें टेढ़ी हैं और उन्हें बार-बार जंभाई आ रही है। वे घुटनों के बल चल रहे हैं। और उनका पूरा शरीर धूल से सना हुआ है। कभी वे तुतलाते हैं तो कभी 'तात' को पुकारते हैं। ध्यान दीजिए कि, सूर ने एक छोटे बच्चे की हरकतों का कितना सटीक और जीवंत चित्र उपस्थित किया है। छोटा बच्चा अपने कार्य-कलापों में नितांत प्राकृतिक (स्वाभाविक) होता है। वह अत्यंत स्वाभाविक तरीके से वही करता है जो उसका मन करता है। सूर के कृष्ण में ये सारी बातें हैं। पद संख्या 9 में सूर ने माता यशोदा के बालक कृष्ण को चलना सिखाने का चित्र खींचा है। कृष्ण चलना सीख रहे हैं। माता यशोदा सहारे के लिए उन्हें अपना हाथ पकड़ाती हैं, कृष्ण डगमगाते हुए जमीन पर अपना पैर रखते हैं। माता यशोदा कभी कृष्ण का सुंदर मुख देखकर आनंदित होती हैं, उनकी बलाइयां लेती है तो कभी अपने प्रिय के कुशल-क्षम के लिए कुलदेवता को याद करती हैं। कभी बलराम को साथ खेलने के लिए पुकारती हैं। ये सारी चेष्टाएं एक माँ की अपने बच्चे के प्रति सुरक्षा की भावनाएं हैं। सूर ने इन सबको अत्यंत मर्मस्पर्शी रूप में प्रस्तुत किया है। पद संख्या 11 में सूर ने बालक कृष्ण के एक और बाल-सुलभ जिज्ञासा

NMDC-067

को पेश किया है। बालक कृष्ण माता यशोदा से यह प्रश्न करते हैं कि, हे माँ, मेरी चोटी कब बढ़ेगी। तुम तो कहती हो कि, ज़ल्दी ही बलराम भइया की चोटी जैसी लंबी और मोटी हो जाएगी, परंतु अब तक तो ऐसा हुआ नहीं। पद संख्या 13 में सूर ने एक और बाल-चेष्टा का मनोरम दृश्य उपस्थित किया है। बालक कृष्ण अपनी माँ से 'चंद्रखिलौना' लेने की जिद कर रहे हैं। खिलौना नहीं मिलने पर वे स्पष्ट धमकी देते हैं कि, वे तत्काल धरती पर लोटेंगे और अपनी माँ की गोद में नहीं आएंगे। खाना-पीना भी छोड़ देंगे। माता यशोदा हंस कर उन्हें समझाने की चेष्टा करती हैं। इसी क्रम में वे उन्हें नई दुल्हन ला देने का प्रलोभन देती हैं, लेकिन तुरंत ब्याह के लिए जाने की तत्परता दिखाते हैं। एक छोटा बच्चा संभव, असंभव से परे होता है। वह अपनी जिद के साथ कुछ भी मांग रख सकता है। इसी भाव को सूर ने इस पद में मार्मिकता से अभिव्यक्त किया है। पद संख्या 14 में सूर ने बालक कृष्ण के बलराम व उनके मित्रों के साथ खेलने और नाराजगी का चित्र खींचा है। पद संख्या 16 में सूर ने कृष्ण का बलदाऊ के खिढाने से नाराज होकर माता यशोदा से शिकायत करने का भाव व्यक्त किया है। बलराम कृष्ण को चिढ़ाते हैं। उनसे कहते हैं कि, तुम यशोदा द्वारा खरीदे गए हो, उनके बेटे नहीं हो। यशोदा और नंद गौरवर्णी हैं और तुम काले हो। माँ-बाप के शरीर का रंग, बच्चों पर भी जाता ही है। यह तथ्य भी तुम्हारे खिलाफ है। इस तरह से बलराम कृष्ण को तंग करते हैं। कृष्ण इन आरोपों को गंभीरता से लेते हैं, परेशान होते हैं और कोई रास्ता न देख सीधे माता यशोदा से सहायता मांगते हैं। पद संख्या 17 में सूर ने बालक कृष्ण की खेलने की उत्कट इच्छा का चित्र उपस्थित किया है। कृष्ण के साथी-संगी उनके खेल में हारने व नाराज होने पर कहते हैं कि तुम्हारे साथ हम नहीं खेलेंगे। लेकिन कृष्ण खेलना चाहते हैं इसलिए वे नंद बाबा की दुहाई देकर दांव लगाते हैं। अंतिम और बीसवें पद में सूरदास ने कृष्ण के मक्खन चुराने व चोरी करते हुए पकड़े जाने पर अपनी माँ यशोदा को पट्टी पढ़ाने के दृश्यों को अच्छी तरह से वाणी दी है।

वात्सल्य

राग घनाश्रीं

जसोदा[1] हरि पालनैं झुलावैं।
हलरावै[2] दुलराइ[3] मल्हावै[4] जोइ सोइ कछु गावै।।
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया[5] काहे न आनि सुवावै[6]।
तु काहे नहिं वेगहिं[7] आवै तोकौ कान्ह[8] बुलावै।।
कबहुँ पलक[9] हरि मूँदि[10] लेत है कबहुँ अधर[11] फरकावै[12]।
सोवत जानि मौन[13] है कै रहि करि करि सैन[14] बतावै।।
इहिं अंतर[15] अकुलाइ[16] उठे हरि जसुमति मधुरैं गावै।
जो सुख सूर अमर मुनि दुरलभ[17] सो नँद भामिनि[18] पावै।।1।।

कृष्ण को पालने में झुलाती यशोदा

राग बिहांगरी।

जसुदा मदन गुपाल सोवाबै।
देखि सयन[19] गति त्रिभुवन[20] कंपै[21] ईस[22] बिरंचि[23] भ्रमावै।
असित[24] अरून[25] सित[26] आलस[27] लोचन उभय[28] पलक परिआवै।
जनु रवि गत संकुचित कमल जुग[29] निसि अलि[30] उड़न न पावै।।
स्वास उदर[31] उरसति[32] यौं मानौ दुग्ध सिंधु छबि पावै। नाभि[33]
सरोज[34] प्रगट पदमासन[35] उतरि नाल[36] पछितावै[37]।।
कर सिर तर करि स्याम मनोहर अलक[38] अधिक सोभावै[39]।
सूरदास मानौ पन्नगपति[40] प्रभु ऊपर फन[41] छावै।।2।।

बाल कृष्ण का सौंदर्य

राग रामकली।

महरि[42] मुदित उलटाइ कै मुख चूमन[43] लागी।
चिरजीवौ[44] मेरौ लाड़िलौ[45] मैं भई सभागी[46]।
एक पाख[47] त्रय मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई।

वात्सल्य

---

1. *यशोदा* 2. *हिलाती डुलाती है* 3. *दुलार करती है,* 4. *चुंबन लेती है* 5. *नींद* 6. *सुलाती* 7. *शीघ्र ही* 8. *कृष्ण* 9. *पलक* 10. *बंद कर लेते हैं* 11. *होठ* 12. *फड़काने लगते हैं* 13. *चुप हो जाती है* 14. *संकेत* 15. *(इसी) बीच* 16. *आतुरतापूर्वक,* 17. *दुर्लभ* 18. *पत्नी* 19. *शयन* 20. *त्रिलोक,* 21. *काँपता है* 22. *शंकर* 23. *ब्रह्मा* 24. *काले,* 25. *लाल* 26. *उज्जवल* 27. *अलसाये हुए* 28. *दोनों* 29. *युगल, जोड़ा* 30. *भौंरा* 31. *पेट* 32. *ऊपर नीचे होता है,* 33. *नाभि* 34. *कमल* 35. *ब्रह्मा (कमल के आसन पर बिराजने वाले)* 36. *नाल* 37. *पश्चाताप करते हैं* 38. *लटों (बाल की),* 39. *शोभा,* 40. *सर्पराज,* 41. *फनों की,* 42. *यशोदा (ब्रजरानी),* 43. *चूमने* 44. *दीर्घजीवी हो* 45. *लाडला, प्यारा* 46. *सौभाग्यवती* 47. *पक्ष (14 दिनों का एक पक्ष होता है)*

NMDC-067

पटकि रान उलटौ परयौ मैं करौ बधाई।।
नंद घरनि[48] आनंद भरी बोलब्रजनारी।
यह सुख सुनि आई सबै सूरज बलिहारी।।3।।

राग रामकली।

जननी देखि छबि बलि जाति।
जैसैं निधनी[49] धनहिं पाऐं हरष[50] दिन अरु राति।।
बाल लीला निरखि हरषित धन्य धनि ब्रज नारि।
निरखि[51] जननी बदन[52] किलकत[53] त्रिदसपति[54] दे तारि[55]।।
धन्य नंद धनि धन्य गोपी धन्य ब्रज कौ बास।
धन्य धरनी करन पावन जन्म सूरजदास ।। 4।।

बाल लीला

राग बिलावलं

सोभित कर[56] नवनीत[57] लिए।
घुटुरूनि[58] चलन रेनु[59] तन मंडित[60] मुख दधि[61] लेप[62] किए।।
चारु[63] कपोल[64] लोल[65] लोचन गोरोचन[66] तिलक दिए।
लट लटकनि मनु मत्त[67] मधुप[68] गन मादक मधुहिं पिए।।
कठुला[69] कंठ बज्र[70] केहरि[71] नख[72] राजत रूचिर[73] हिए[74]।
धन्य सूर एको पल इहिं सुख का सत[75] कल्प[76] जिए।।5।।

बाल लीला

राग रामकली।

खीझत[77] जात माखन खात।
अरुन लोचन भौंह[78] टेढ़ी बार बार जँभात[79]।।
कबहुं रूनझुन[80] चलत घुटुरूनि धुरि[81] धूसर[82] गात[83]।
कबहुँ झुकि कै अलक खैचत नैन जल भरि जात।।
कबहुँ तोतर[84] बोल बोलत कबहुँ बोलत तात।
सूर हरि की निरखि सोभा निमिष[85] तजत न मात।। 6।।

बाल कीड़ा

---

48. घरवाली 49. निर्धन, 50. हर्षित 51. देखकर 52. मुख, 53. किलकारी मारते हैं, 54. देवपति 55. ताली, 56. हाथ, 57. ताजा मक्खन 58. घुटनों के बतए 59. धूल, 60. सने हुए (धूसरित) 61. दही, 62. लपटाए हुए 63. सुंदर 64. गोल, 65. चंचल 66. गोरोचन, 67. मतवाला 68. भौंरा 69. कठुला 70. हीरा, 71. बाघ 72. नाखून 73. सुंदर 74. वक्ष-स्थल 75. सौ 76. युग 77. खीझते हैं 78. भौंहे 79. जम्हाई लेते हैं 80. रूनझुन (ध्वनि) 81 धूल में 82. सने हुए 83. शरीर 84. तुतलाकर (अस्पष्ट उच्चारण) 85. पल भर भी,

NMDC-067

राग नटनारायन।

हरि जू की बाल छबि कहौं बरनि[86]।
सकल सुख की सींव[87] कोटि मनोज[88] सोभा हरनि।।
भुज[89] भुजंग[90] सरोज नैननि बदन बिधु[91] जित[92] लरनि[93]।
रहे बिबरनि[94] सलिल[95] नभ उपमा[96] अपर[97] दुरि[98] डरनि[99]।।
मंजुल[100] मेचक[101] मृदुल[102] तनु अनुहरत[103] भूषन[104] भरनि[105]।
मनहुँ सुभग सिंगार सिसु तरु फरयौ अद्‌भुत फरनि।।
चलत पद प्रतिबिंब[106] मनि आगन घुटुरुवनि करनि।
जलज[107] संपुट[108] सुभग छबि भरि लेति उर जनु धरनि।।
पुन्य फल अनुभवति[109] सुतहि बिलोकि कै नँद धरनि।
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित[110] लरखनि[111] ।।7।। ।।

बाल कीड़ा

राग धनाश्री।

किलकत[112] कान्ह घुटुरुवनि आवत।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन बिंब पकरिबैं धावत।।
कबहुँ निरखि हरि आपु छाँह[113] कौं कर सौं पकरन[114] चाहत।
किलकि हँसत राजत द्वै दँतियाँ[115] पुनि पुनि तिहिं अवगाहत[116]।।
कनक्र भूमि पर कर पग छाया यह उपमा इक राजति।
करि करि प्रतिपद[117] प्रति मनि[118] बसुधा[119] कमल बैठकी साजति।।
बाल दसा सुख निरखि जसोदा पुनि पुनि नंद बुलावति।
अँचरा[120] तर[121] लै ढाँकि[122] सूर के प्रभु कौं दूध पियावति।। 8।।

बाल वर्णन

राग बिलावल।

सिखवति[123] चलन जसोदा मैया।
अरबराइ[124] कर पानि गहावत[125] डगमगाइ[126] धरनी[127] धरे पैया[128]।।

यशोदा कृष्ण को चलना सिखा रही हैं

---

86. वर्णन करता हूं, 87. सीमा, 88. कामदेव, 89. भुजाएं 90. सर्प 91. चंद्रमा 92. जीत लेता है, 93. होड़, लड़ाई, 94. विवर्ण 95. जल, 96. उपमा, सादृश्य 97. दूसरी, 98. छिप गई हैं, 99. डरकर 100. सुंदर 101. श्याम, 102. कोमल 103. मोदित करना 104. आभूषण 105. भरा हुआ, 106. प्रतिच्छाया 107. कमल 108. संपुट 109. अनुभव करती है 110. सुंदर 111. लड़खड़ाकर चलना, 112. किलकारी मारते हुए 113. छाया, 114. पकड़ना 115. दाँत, 116. पकड़ना चाहते हैं (प्रतिबिंब को) 117. प्रत्येक पद (कदम पर), 118. प्रत्येक मणि 119. पृथ्वी 120. आंचल 121. के नीचे, तले 122. ढंककर 123. सिखा रही हैं, 124. हड़बड़ाकर, 125. पकड़ा देते हैं, 126. डगमगाते हुए 127. पृथ्वी पर, जमीन पर, 128. पांव

NMDC-067

कबहुँक सुंदर बदन बिलोकति उर आनद भार लात बलया।
कबहुँक कुल देवता मनावति[130] चिरजीवहु[131] मेरौ कुँवर कन्हैया।।
कबहुँक बल[132] कौं टेरि[133] बुलावति इहिं आँगन खेलौ दोउ भैया।
सूरदास स्वामी की लीला अति प्रताप बिलसत[134] नँदरैया[135]।। 9।।

राग बिलावल।

नंद जू के बारे[136] कान्ह छाँड़ि दै मथनियाँ[137] बार बार कहति मातु
जसुमति नँदरनियाँ।।
नैकु रहो माखन देउँ मेरे प्रान धनियाँ।
आरि[138] जनि करौ बलि बलि जाउँ हौं निधनियाँ[139]।। बाल चेष्टा
जाकौ ध्यान धरैं सबै सुर नर मुनि जनियाँ।
ताकौ नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ[140]।
सेष[141] सहस[142] आनन[143] गुन गावत नहिं बनियाँ[144]।
सूर स्याम देखि सबै भूलीं गोप धनियाँ।। 10।।

राग रामकली।

मैया कबहिं बढैगी चोटी।
किती बार मोहिं दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।। बाल सुलभ जिज्ञासा
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं है है लाँबी[145] मोटी।
काढ़त[146] गुहत[147] न्हवावत[148] ओछत[149] नागिनि सी भुई[150] लोटी[151]।। बाल हठ
काँचौ[152] दूध पियावत पचि पचि[153] देति न माखन रोटी।
सूरज चिरजीवौ दोउ भैया हरि हलधर की जोटी[154]।। 11।।

129. बलैया 130. मनाती है, 131. चिरंजीवी हो, 132. बलराम, 133. कहती हैं (बुलाकर). 134. क्रीड़ा कर रहे हैं, 135. नंदरायए 136. लड़ैते (लड़के, दुलारे), 137. मथानी 138. हठ, 139. कंगालिन, निर्धन स्त्री, 140. गोद में, 141. शेषनाग 142. हजार, 143. मुख, 144. बनता है। 145. लंबी, 146. कंघी करते, 147. गूंथते हुए 148. स्नान करते हुए, 149. पोंछते हुए 150. जमीन तक, भूमि तक, 151. लटकने लगेगी, 152. कच्चा 153. बार-बार 154. जोड़ी,

NMDC-067

राग कान्हरौ।

किहिँ बिधि करि कान्हहिँ समुझैहौँ।
मैँ ही भूलि चंद दिखरायौ[155] ताहि कहत मैँ[156] खैहौँ।।
अनहोनी[157] कहुँ भई कन्हैया देखी सुनी न बात। बाल चेष्टा
यंह तौ आहि[158] खिलौना सबकौ खान[159] कहत तिहिँ तात।।
यहै देत लवनी[160] नित मोकौँ छिन[161] छिन साँझ[162] सवारे[163]।
बार बार तुम माखन माँगत देउँ कहाँ तैँ प्यारे।।
देखत रहौ खिलौना चंदा आरि न करौ कन्हाई।
सूर स्याम लिए हँसति जसोदा नंदहिँ कहति बुझाई।। 12 ।।

राग केदारौ।

मैया[164] मैँ तौ चंद खिलौना लैहौँ।
जैहौँ लोटि[165] धरनि पर अबहीँ तेरी गोद न ऐहौँ।।
सुरभी[166] और पय[167] पान न करिहौँ बेनी[168] सिर न गुहैहौ ।
है हौँ पूत नंद बाबा कौ तेरौ सुत न कहैकौ।। बाल हठ
आगैँ आउ बात सुनि मेरी बलदेवहि न जनैहौँ।
हँसि समुझावति कहति जसोमति नई दुल हनिया दैहौ।।
तेरी सौ[169] मेरी सुनि मैया अबहिँ बियाहन[170] जैहौँ।
सूरदास है कुटिल[171] बराती[172] गीत सुमंगल[173] गैहौ ।।13।।

राग रामकली।

खेलत स्याम ग्वालनि संग।
सुबल हलधर अरू श्रीदामा करत नाना रंग।। बाल क्रीड़ा
हाथ तारी देत भाजत सबै करि करि होड़[174]।
बरजै[175] हलधर स्याम तुम जनि चोट लागै गोड़[176]।। कृष्ण की शिकायत
तब कह्यौ मैं दौरि जानत बहुत बल मो गात।
मेरी जोरी[177] है श्रीदामा हाथ मारें जात।।
उठे बोलि तबै श्रीदामा चाहु तारी[178] मारि।
आगै हरि पाछे श्रीदामा धरयौ स्याम हँकारि[179]।।

---

155. दिखाया, 156. खाऊंगा, 157. असंभव, 158. है 159. खाने को, 160. मक्खन, 161. क्षण, 161. शाम, 163. सुबह, 164. माँ, 165. लोट(जाऊंगा), सो (जाऊंगा) 166. गाय, 167. दूध, 168. वेणी, चोटी, 169. शपथ, सौंगध, 170. विवाह के लिए 171. कुटिल; 172. बराती, 173. सुंदर गीत, मंगलगीत, 174. स्पर्धापूर्वक 175. बरजते हैं, मना करते हैं, 176. पैर, 177. जोड़ीदार, 178. ताली, 179. हुँकारते हुए

NMDC-067

जानिकै मैं रह्यौ ठाढ़ौ छुवत[180] कहा जु मोहिं।
सूर हरि खीझत सखा सौं मनहि कीन्हौ कोह[181] ।। 14 ।।

राग गौरी।

सखा कहत हैं स्याम खिसाने[182]।
आपुहिं आपु बलकि[183] भए ठाढ़े अब तुम कहा रिसाने[184] ।।
बीचहि बोलि उठे हलधर तब याके[185] माइ न बाप।
हारि जीत कछु नैकु न समुझत लरिकनि लावत पाप।।
आपुन हारि सखनि सौं झगरत[186] यह कहि दियौ पठाइ[187] सूर स्याम
उठि चले रोइ कै जननी पूछति धाइ।।15।।

खेल खेल में नाराजगी

राग गौरी।

मैया मोहिं दाऊ[188] बहुत खिझायौ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ तू जसुमति कब जायौ।।
कहा करौं इहि रिस[189] के मारे खेलन हौ नहिं जात।
पुनि पुनि कहत कौन हैं माता को है तेरौ तात।।
गोरे नंद जसोदा गोरी तू कत स्यामल[190] गात।
चुटकी दै दै ग्वाल नचावत हँसत सबै मुसुकात।।
तू मोही कौं मारन सीखी दाउहिं कबहुँ न खीझै।
मोहन को मुख रिस समेत लखि जसुमति सुनि सुनि रीझै।।
सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई[191] जनमत ही कौ धूत[192]।
सूर स्याम मोहिं गोधन[193] की सौं हौ माता तू पूत।।16 ।।

कृष्ण द्वारा बलराम की शिकायत

180, छूना, 181. क्रोध 182. *खिसिया (खीज), गए हैं*, 183. *अकड़कर*, 184. *नाराज*, 185. *इसके*, 186. *झगड़ता है*, 187. *(घर) भेज दिया*, 188. *बलदाऊ, बलराम (श्री कृष्ण के बड़े भाई)*, 189. *क्रोध*, 190. *सांवला* 191. *चुगलखोर*, 192. *धूर्त, चालाक (झूठा)* 193. *गोधन*,

NMDC-067

राग सारंग।

खेलत मैं को काको गुसैयाँ[194]।
हरि हारे जीते श्रीदामा बर बस हीं[195] कत करत रिसैयाँ।।
जाति पाँति हमते[196] बड़[197] नाही नाही बसत तुम्हारी छैयाँ[198]।
अति अधिकार जनावत यातैं जातैं अधिक तुम्हारैं गैयाँ।।
रूहठि[199] करै तासौं को खेलै रहे बैठि जहँ तहँ सब ग्वैयाँ[200]।
सूरदास प्रभु खेल्यइ चाहत दाउँ दियौ करि नंद दुहैयाँ[201]।। 17।।

बालक कृष्ण के खेलने की उत्कट इच्छा
कृष्ण द्वारा बहाना बनाना

राग गौरी।

सखा[202] सहित[203] गए माखन चोरी।
देख्यौ स्याम गवाच्छ[204] पंथ है मथति[205] एक दधि भोरी[206]।।
हेरि मथानी धरी माट[207] तैं माखन हो उतरात[208]।
आपुन गई कमोरी[209] माँगन हरि पाई ह्याँ घात[210]।।
पैठे[211] सखनि सहित घर सूनै दधि माखन सब खाए।
छूछी[212] छाँड़ि मटुकिया[213] दधि की हँसि सब बाहिर आए।।
आइ गई कर लिए कमोरी घर तैं निकसे ग्वाल।
माखन कर दधि मुख लपटानौ[214] देखि रही नँदलाल।।
कहँ आए ब्रज बालक संग लै माखन मुख लपटान्यौ।
खेलत तै उठि भज्यौ[215] सखा यह इहिं घर आइ छपान्यौ[216]।।
भुज[217] गहि लियौ कान्ह एक बालक निकसे ब्रज की खोरि[218]।
सूरदास ठगि[219] रही ग्वालिनी[220] मन हरि लियौ अँजोरि[221]।। 18।।

मक्खन चोरी का दृश्य

---

194. मालिक 195. बलपूर्वक 196. हमसे (हम लोगों से) 197. बड़े 198. छाँव, आश्रय, 199. रोष 200. साथी, मित्र 201. दुहाई (देकर), 202. मित्रों (के साथ), 203. साथ लेकर 204. गवाक्ष (खिड़की) 205. मथ रही है 206. भोली, 207. मटके से; 208. ऊपर आया हुआ (ऊपर तैरता हुआ) 209. मटकी, 210. अवसर, मौका, 211. घुस गए 212. खाली, 213. मटकी 214. लगाकर, लपेटकर लपटाए 215. भागा था; 216. छिप गया था, 217. हाथ, भुजा 218. गलियों से 219. ठगी रह गई (मुग्ध), 220. ग्वालिनी, 221. दिन में ही (दिन दहाड़े).

NMDC-067

राग बिलावल।

ग्वालिनी उरहन[222] कैं मिस[223] आई।

नंद नँदन तन मन हरि लीन्ही बिनु देखे देखे छिन रह्यौ न जाई।।

सुनहु महरि अपने सुत के गुन कहा कही किहि भाँति बनाई। चोली फारि[224] हार[225] गाँह तोरयौ इन बातनि कही कौन बड़ाई[226]।।

गोपियों द्वारा कृष्ण की शिकायत

माखन खाइ खवायौ[227] ग्वालनि जो उबरयौ[228] सो दियौ लुढ़ाई[229]।

सुनहु सूर चोरी सहि[230] लोन्ही अब कैसे सहि जाति ढिठाई[231]।। 19।।

राग रामकली।

मैया मै नहि माखन खायौ।

ख्याल[232] परै ये सखा सबै मिलि मेरैं मुख लपटायौ।।

देखि तुही सींके[233] पर भाजन[234] ऊँचै धरि लटकायौ।

तुही निरखि नान्हे[235] कर अपनैं मैं कैसैं करि पायौ।।

कृष्ण द्वारा बहाना बनाना

मुख दधि पोंछि[236] बुद्धि इक कीन्ही दोना[237] पीठि दुरायौ[238]। डारि साँटि[239] मुसुकाइ जसोदा स्यामहिं कंठ[240] लगायौ।।

बाल बिनोद[241] मोद[242] मन मोह्यौ[243] भक्ति प्रताप दिखायौ। सूरदास जसुमति कौ यह सूख सिब बिरंचि नहिं पायौ।। 20।।

---

222. उलाहना (उपालंभ), 223. बहाने, 224. फाड़ना 225. माला (गले की), 226. बड़ाई (अच्छाई), 227. खिलाया, 228. उबरा, बचा हुआ (शेष), 229. गिरा दिया, लुढ़का दिया, 230. सहन किया, बर्दाश्त किया, 231. ढीठपना (सीनाजोरी), 232. हँसी, 233. छींके (पर), 234. बर्तन 235. छोटे, नन्हें, 236. पोंछकर (पोंछ डाला), 237. दोना (दही का), 238. छिपा दिया 239. छड़ी, 240. गले से, 241. क्रीड़ा, 242. आनंद 243. मोह लिया,

'भ्रमरगीत' सूरदास के 'सूरसागर' का ही हिस्सा है। सूरसागर की रचना का आधार श्रीमद्भागवत की कथा है। उद्धव कृष्ण के परम मित्र हैं। उन्हें कृष्ण ने उपदेश देने के लिए ब्रज भेजा है। उनका ब्रज में बतौर कृष्ण के मित्र, खूब आदर-सत्कार हुआ। यह कथा श्रीमद्भागवत में है, लेकिन गोपियों का ज्ञान और योग का विरोध उसमें नहीं है। यह सूरदास की मौलिक योजना है और ऐसा वे जान बूझकर करते हैं। उन्हें निर्गुण भक्ति के ऊपर सगुण भक्ति की श्रेष्ठता साबित करना था। इसलिए वे बार-बार गोपियों द्वारा ज्ञान और योग के विपक्ष में ढेर सारे अकाट्य तर्क करवाते हैं। आपके संकलन में 'भ्रमरगीत' से संबधित 26 पद रखे गये हैं। इन थोड़े से पदों को पढ़कर आप सूरदास की दृष्टि और उनके अभिव्यक्ति-कौशल का सम्यक् परिचय प्राप्त कर सकेंगे। यहाँ संक्षेप में भ्रमरगीत के कुछ पदों के संबंध में आवश्यक संकेत दिए जा रहे हैं। इनसे आपको अध्ययन में सुविधा मिलेगी।

पद संख्या 1 में सूर ने स्पष्ट किया है कि, कृष्ण मथुरा में हैं और उन्हें माता यशोदा, नंद बाबा, गायों, ब्रजवासियों की बहुत याद आती है। वे राहगीर से माता यशोदा के लिए संदेश भेजते हैं और जल्दी वापस (ब्रज) आने का वादा भी करते हैं। साथ ही माता यशोदा के स्वंय के लिए कृष्ण की धाय (सेविका) कहे जाने का विरोध भी करते हैं। दूसरा पद भी कृष्ण का माता यशोदा को आश्वासन है। कृष्ण को दुख है कि, नंद बाबा ने उन्हें और बलराम को मथुरा भेजकर अपना जी कड़ा कर लिया है। इसीलिए उन्होंने एक बार भेजकर दुबारा कुशल क्षेम जानने की भी कोशिश नहीं की। पद संख्या 3 में सूर ने उद्धव के ब्रज पहुँचने और गोपियों से मिलने और उनके द्वारा खरी-खोटी सुनाए जाने का वर्णन किया है। गोपियाँ उद्धव को ज्ञान योग का व्यापारी घोषित करते हुए उनका जबरदस्त प्रतिरोध करती हैं। उन्हें सही जगह अपना माल बेचने की राय देती हैं। पद संख्या 4 में सूर ने गोपियों की अनन्य कृष्ण-निष्ठा स्थापित करते हुए सगुण भक्ति मार्ग के लाभ बताये हैं। पद संख्या 5 में सूर ने गोपियों के श्रीकृष्ण के प्रति अटूट प्रेम की चर्चा करते हुए निर्गुण (योग) मार्ग को कमतर सिद्ध किया है। पद संख्या 7 में सूर ने गोपियों के हवाले से कृष्ण की मनोहर छवि का उल्लेख करते हुए निर्गुण मार्ग के ऊपर सगुण भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। सूर के गोपियों की आकुलता, कृष्ण की राह तकते हुए नहीं बढ़ती है, बल्कि उद्धव के नीरस योग-संदेशों को सुन कर बढ़ती है। पद संख्या 9 में सूर ने पुन: गोपियों की कृष्ण निष्ठा का सुंदर चित्र उपस्थित किया है। गोपियाँ उद्धव के योग को तीती ककड़ी कहती है, और उन लोगों के पास ले जाने के लिए रहती हैं, जिनके चित्त अस्थिर हैं।

सूर की गोपियां तो स्थिर चित्त वाली हैं। उन्हें कृष्ण में अटूट आस्था है। इसलिए उद्धव का योग मार्ग उनके लिए बेकार है। पद संख्या 10 में सूर ने गोपियों की योग और ज्ञान मार्ग संबंधी भोली जिज्ञासाओं

की योजना करके निर्गुण पंथ को अबूझ, अनुपयोगी सिद्ध किया है। गोपियों के सीधे सादे प्रश्नों के सामने ज्ञानी उद्धव असहाय नजर आते हैं। पद संख्या 12 में सूर ने कृष्ण के वियोग में गोपियों की दशा के चित्र खींचे हैं। प्रकृति ने भी कृष्ण के वियोग में अपना स्वभाव बदल दिया है। गोपियाँ अपने प्रिय की आतुरता से प्रतीक्षा कर रही हैं। पद संख्या 14 में सूर ने कृष्ण के वियोग में गोपियों की अवस्था का मर्मस्पर्शी दृश्य उपस्थित किया है। उद्धव गोपियों द्वारा बार-बार मना करने पर भी अपने पक्ष पर डटे हुए हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें गोपियाँ दूसरे तरीके से समझाती हैं। उनकी चतुराई देखती ही बनती है। पद संख्या 16 में सूर ने गोपियों की इसी वाक्चातुरी का वर्णन किया है। उद्धव से कहती है कि हमारे तो एक ही मन था और वह कृष्ण अपने साथ मथुरा ले गए हैं, ऐसे में आपके बताए रास्ते पर हम कब तक चल सकती हैं? यदि हमारा मन हमें वापस मिल जाए तो हम वही करेंगी जैसा आप कहेंगे। पद संख्या 18 में भी यही भाव व्यक्त हुआ है। गोपियाँ उद्धव को निरुत्तर करते हुए कहती हैं कि, हमारे मन दस या बीस तो हैं नहीं कि एक कृष्ण में लग जाए तो भी दूसरा आपके निर्गुण में रम सकता है। अर्थात आपके निर्गुण को मानने की स्थिति में हम सब (गोपियाँ) नहीं हैं। पद संख्या 21 में कृष्ण के वियोग में गोपियों की काव्य दशा के मार्मिक चित्र संयोजित हैं। पद संख्या 23 में सूरदास ने माता यशोदा द्वारा उद्धव से देवकी के लिए संदेश भेजने की योजना की है। इस पद में एक माँ का सच्चा हृदय व्यक्त हुआ है। माँ को अपने से दूर गए बेटे के सुख, सुरक्षा और आश्वस्ति की हमेशा चिंता लगी रहती है। चाहे उसका बच्चा कितने ही सुख और सुविधा में ही क्यों न हो? पद संख्या 26 में सूर ने गोपियों के प्रिय कृष्ण की स्वीकारोक्ति की योजना की है। ऐसा नहीं है कि, सिर्फ गोपियाँ या ब्रजवासी ही कृष्ण के वियोग से दुखी हैं। श्रीकृष्ण स्वंय भी अपने प्रिय जनों से दूर जाकर दुखी हैं। तभी तो वे साफ-साफ कहते हैं कि, उन्हें किसी भी हाल में अपनी प्यारी ब्रज भूमि विस्मृत नहीं होती है। उन्हें यमुना के सुंदर किनारे, सघन कुंजों की छाया, ग्वाल-बालों के साथ खेलना आदि बार-बार याद आता है। वे मथुरा के वैभवपूर्ण परिवेश में रहते हुए भी जब कभी ब्रज को याद करते हैं तो बेसुध हो जाते हैं।

भ्रमरगीत

राग सारंग

पथिक[1] संदेसो कहियो जाय।
आवैंगे हम दोनों भैया, मैया जनि अकुलाय[2]।।
याको बिलग[3] बहुत हम मान्यों जो कहि पठयो धाय[4]।
कहै लौं कीर्ति[5] मानिए तुम्हारी बड़ी[6] कियो पय[7] प्याय[8]।।
कहियो जाय नंद बाबा सों अरु गहि पकरयो पाय।
दोऊ दुखी हीन नहि पावहिं धूमरि धौरी माय।।
यद्यपि मथुरा बिभव बहुत है तुम बिनु कछु न सुहाय[9]।
सूरदास ब्रजवासी लोगनि[10] भेंटत[11] हृदय जुड़ाय[12]।। । 1।।

कृष्ण द्वारा माता यशोदा को भेजा गया संदेश

नंद बाबा को भेजा गया संदेश

नीके रहियो जसुमति मैया।
आवैंगे दिन चारि पाँच में हम हलधर दोउ भैया।।
जा दिन तें हम तुमतें बिछरे काहु न कह्यो 'कन्हैया'।
कबहूँ प्रात न कियो कलेवा[13] साँझ न पीन्हीं[14] धैया[15]।।
बंसी बेन[16] संभाँरि राखियो और अवेर[17] सवेरो[18]।
मति लै जाय चुराय राधिका कछुक खिलौने मेरो।।
कहियो जाय नंद बाबा सो निपट निठुर जिय कीन्हो।
सूर स्याम पहुँचाय मधुपुरी[19] बहुरि संदेस न लीन्हो।। ।। 2।।

यशोदा को कृष्ण द्वारा भेजा सांत्वना संदेश

राग काफी

आयो घोष[20] बड़ो ब्योपारी।
लादि खेंप[21] गुन ज्ञान जोग की ब्रज में आय उतारी।।
फाटक[22] दै कर हाटक[23] माँगत भोरै[24] निपट सु धारी[25]।
धुर[26] ही तें खोटो[27] खायो है लए फिरत सिर भारी।
इनके कहे कौन डहकावै[28] ऐसी कौन अजानी[29]।

---

1. यात्री. 2. आकुल (व्याकुल चिंतित) 3: बुरा मानना 4. दाई 5. यश 6. बड़ा किया (पाल-पोसकर) 7. दूध 8. पिलाकर 9. सुहाता, 10. लोगों को (आत्मीय जनों को) 11. मिलते हुए, 12. शीतल होता है (ठंडा हो जाता है) 13. नाश्ता 14. पीना 15. थन से सीधे छूटती दूध की धारा 16. मोर पंख 17. देर (विलब), 18. जल्दी (शीघ्र) 19. मधुरा नगरी 20. ग्राम (गोकुल) 21. माल का बोझ 22. फटकन (सारहीन तत्व) 23. सोना 24 (सीधे सादे) 25. समझकर 26. मूल, आरंभ 27. खोट 28. धोखा खाए, ठगाए 29. अज्ञानी, मूर्ख

NMDC-067

अपनो दूध छाँड़ि को पीवै खार[30] कूप[31] को पानी।।
ऊधो जाहु सबार[32] यहाँ तें बेगि गहरु[33] जनि लावौ।
मुँहमाँग्यो[34] पैहो सूरज प्रभु साहुहि आनि दिखावौ।।।।3।।

उद्धव को गोपियों की उलाहना

राग घनाश्री

हम तो दुहूँ भाँति फल पायो।
जो ब्रजनाथ[35] मिलै तो नीको नातरू[36] जग जस[37] गायो।।
कहै वै गोकुल की गोपी सब बरनहीन[38] लघुजाती[39]।
कहै वै कमला[40] के स्वामी[41] संग मिलि बैठीं इस पाँती[42]।
निगमध्यान[43] मुनिज्ञान अगोचर, ते भए घोषनिवासी[44]।
ता ऊपर अब साँच[45] कहो धौं मुक्ति[46] कौन की दासी?
जोग कथा, पा[47] लागो[48] ऊधो, ना कहु बारंबार[49]।
सूर स्याम तजि और भजै[50] जो वाकी जननी छार[51]।।।।4।।

सगुण भक्ति का गुणगान

राग घनाश्री

लरिकाइ[52] को प्रेम, कहो अलि, कैसे करिकै छूटत?
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित अब अंतरगति यों लूटत।।
चंचल चाल मनोहर चितवनि[53] वह मुसुकानि मंद धुनि गावत।
नटवर[54] भेस नंदनदन को वह बिनोद गृह बन ते आवत।।
चरनकमल[55] की सपथ[56] करति हौं यह संदेस मोहिं बिष सम लागत।
सूरदास मोहि निमिष नं बिसरत मोहन मूरति सोवत जागत।।।।5।।

गोपियों का वचन: बचपन के प्रेम का स्मरण

---

30. खारे (क्षार युक्त, नमकीन), 31. कुआँ, 32. सबेरे 33. विलंब, देर, 34. मुँहमांगा, 35. श्रीकृष्ण 36. नही तो (अन्यथा) 37. यश, 38. अवर्ण 39. छोटी जाति की 40. लक्ष्मी (धन संपत्ति की देवी), 41. पति (विष्णु) 42. पंक्ति, 43. शास्त्रों के ध्यान या पहुँच 44. ग्रामवासी, गोकुलवासी 45. सत्य 46. मोक्ष, 47. पाँव, 48. पड़ती है, 49. बार-बार 50. भक्ति करे, याद करे, 51. भस्म, राख 52. बचपन, लड़कपन (का), 53. आँखें (दृष्टि), 54. श्रीकृष्ण का पर्याय 55. चरण कमल 56. शपथ,

NMDC-067

बिलग जानि मानहु, ऊधो प्यारे।
वह मथुरा काजर[57] की कोठरि[58] जे आवहिं ते कारे[59]।।
तुम कारे सुफलकसुत[60] कारे, कारे मधुप भँवारे[61]।
तिनके संग अधिक छबि उपजत कमलनैन मनिआरे[62]।।
मानहु नील[63] माट[64] तें काढ़े[65] लै जमुना ज्यों पखारे।
ता गुन स्याम भई कालिंदी[66] सूर स्याम गुन न्यारे।।।। 6।।

मथुरा से आने वाले हर व्यक्ति के प्रति शिकायत का भाव

अँखिया हरि दरसन की भूखी।
कैसे रहैं रूपरसराची[67] ये बतियाँ सुनि रूखी[68]।
अवधि[69] गनत इकटक[70] मग जोवत तब एती नहिं झूखी[71]।
अब इन जोग संदेसन ऊधो अति अकुलानी दूखी।।
बारक[72] वह मुख फेरि दिखाओ दुहि पय पिवत पतूखी[73]।
सूर सिकत[74] हठि नाव चलाओ ये सरिता[75] है सूखी।।।। 7।।

कृष्ण के लिए आकुल गोपियां

राग सारंग

जाय कहौ बूझी कुसलात[76]।
जाके ज्ञान न होय सो मानै कही तिहारी बात।।
कारो नाम, रूप पुनिकारो, कारे अंग सखा सब गात।
जौ पै भले होत कहुँ कारे तौ कत बदलि[77] सुता[78] लै जात।।
हमको जोग भोग[79] कुबजा[80] को काके हिये समात[81]?
सूरदास सेए सो[82] पति कै पाले जिन्ह तेही, पछितात।।।। 8।।

सगुण उपासना

---

57. काजल, 58. कोठरी, 59. काले, 60. अक्रूर 61. भौंरे 62. सुहावना 63. नीली 64. मिट्टी का बर्तन 65. निकाले 66. यमुना (नदी), 67. रूपरसरत (श्री कृष्ण के सुंदर रूप में डूबी हुई) 68. चिकनाई रहित (सूखी), 69. समय, 70. एकटक (निरंतर, पलक गिराये बिना), 71. संतप्त हुई 72. एक बार फिर 73. पत्ते का दोना, 74. बालू, 75. नदी, 76. कुशलता (कुशल-क्षेम), 77. बदलकर 78. बेटी, 79. सुख (भोग-विलास, सभी तरह के सांसारिक सुख) 80. कुब्जा- मथुरा के राजा कंस की दासी और कृष्ण भक्त थी। वह बहुत कुरूप और कुबड़ी थी। मथुरा जाते हुए मार्ग में उसने श्रीकृष्ण का स्वागत किया और उन्हें चंदन लगाया। कृष्ण ने उसकी पीठ दबाकर उसका कुबड़ापन दूर किया और वह अपूर्व सुंदरी बन गई। कृष्ण उसके घर भी गए। इस सारे घटना क्रम से गोपियाँ ईर्ष्यालु हो गई और उन सबने कुब्जा को बहुत खरी-खोटी सुनाई थी। 81. समाना, 82. जैसे (की तरह), वही।

राग सारंग

हमारे हरि हारिल[83] की लकरी[84]।
मन बच[85] क्रम[86] नँदनंदन सों उर यह दृढ़ करि पकरी[87]।।
जागत सोवत, सपने सौतुख[88] कान्ह कान्ह जक[89] री।
सुनतहि जोग लगत ऐसो अलि! ज्यों करुई[90] ककरी[91]।।
सोई ब्याधि हमैं लै लाए देखी सुनी न करी।
यह तौ सूर तिन्है लै दीजै जिनके मन चकरी[92]।। ।। 9।।

कृष्ण के प्रति गोपियों का अनन्य प्रेम

राग सारंग

निर्गुन[93] कौन देस को बासी?
मधुकर हँसि समुझाय, सौंह दै बूझति साँच, न हाँसी।।
को है जनक, जननि को कहियत, कौन नारि, को दासी?
कैसो बरन भेस है कैसो केहि रसै[94] में अभिलासी।
पावैगो पुनि कियो आपनो जो रे! कहैगो गाँसी[95]।
सुनत मौन है रह्यो ठग्यो सो सूर सबै मति नासी[96]। ।। 10।।

निर्गुण पंथ की अनुपयोगिता

राग केदारो

नाहिंन रह्यौ मन में ठौर[97]।
नंदनंदन अछत[98] कैसे आनिए उर और?
चलत, चितवत, दिवस जागत, सपन सोवत राति।
हृदय ते वह स्याम मूरति[99] छन न इत उत जाति।।
कहत कथा अनेक ऊधो लोकलाभ[100] दिखाय।
कहा करौ तन प्रेम पूरन घट न सिंधु समाय।
स्याम गात सरोज आनन ललित अति मृदु हास[101]।
सूर ऐसे रूप कारन मरत लोचन प्यास।। ।। 11।।

कृष्ण की छवि हृदय में स्थित

---

83. हारिल पक्षी (यह पक्षी हमेशा अपनी चोंच में लकड़ी या तिनका दबाए रखता है), 84. लकड़ी, 85. वचन (वाणी) 86. कर्म, 87. पकड़ी हुई हैं 88. प्रत्यक्ष 89. रट, धुन 90. कड़वी 91. ककड़ी 92. अस्थिर (डांवाडोल) 93. गुणहीन (निर्गुण ब्रह्म के लिए संकेत है) 94. प्रेम 95. कपट की बात भुमने वाली बात, 96. नष्ट हुई 97. स्थान, जगह 98. रहते हुए 99. मूर्ति, छवि, चित्र 100. सांसारिक लाभ 101. हँसी

बिन गोपाल बैरिन[102] भई कुंजें[103]।
तब ये लता लगति अति सीतल, अब भई विषम ज्वाल[104] की पुंजे[105]।
बृथा[106] बहति जमुना खग[107] बोलत, बथा कमल फूलैं अलि[108] गुंजे
पवन पानि घनसागर[109] संजीवनि दधिसुत[110] किरन भानु भई भुंजे।।
ए ऊधो कहियो माधव सों बिरह कदन[111] करि मारत लुंजै[112]।
सूरदास प्रभु को मग जोवत अंखियाँ भई बरन[113] ज्यों गुंजै[114]।। ।। 12।।

कृष्ण के बिना प्रकृति भी उदास

हरि हैं राजनीति पढ़ि आए।
समुझी बात कहत मधुकर जो? समाचार कछु पाए?
इक अति चतुर हुते पहिले ही, अरु करि नेह[115] दिखाए।
जानी बुद्धि बड़ी, जुबतिन[116] को जोग संदेस पठाए।।
भले लोग आगे के सखि री! परहित डोलत धाए।
वे अपने मन फेरि पाइए जे है चलत चुराए।।
ते क्यों नीति करत आपनु जे औरनि रीति छुड़ाए?
राजधर्म सब भए सूर जहँ प्रजा न जाये सताए।। ।। 13।।

गोपियों की उलाहना

राग जैतश्री

अति मलीन[117] वृषभानुकुमारी[118]।
हरि स्रमजल[119] अंतर तनु भीजे ता लालच न धुआवति[120] सारी[121]।।
अधोमुख[122] रहति उरध[123] नहिं चितवति ज्यों गथ[124] हारे थकित जुआरी[125]।
छूटे चिहुर[126] बदन कुम्हिलानो[127] ज्यों नलिनी हिमकर[128] की मारी।।
हरिसंदेस सुनि सहज मृतक भई इक बिरहिनि दूजे अलि जारी।
सूर स्याम बिनु यों जीवति हैं ब्रजबनिता[129] सब स्यामदुलारी।। ।। 14।।

राधा का वियोग

---

102. शत्रु 103. बाग-बगीचे 104. ज्वालाओं की, 105. समूह 106. व्यर्थ (बेकार में) 107. पक्षी 108. भौंरे 109. कपूर 110. चंद्रमा 111. छुरी 112. लँगड़ा बना रही है (अपंग बना रही है) 113. वर्ण, रंग 114. गुंजा, घुँघची, 115. स्नेह (प्रेम) 116. युवतियों को (युवा स्त्रियों को) 117. मलिन, उदास 118. राधा, 119. पसीने (से) 120. धुलाती है, 121. साड़ी 122. नीचे मुँह किए हुए 123. उर्ध्व (ऊपर) 124. पूंजी, संपत्ति 125. जुआरी (जुआ खेलने वाला) 126. चिकुर, केश 127. कुम्हला गया है 128. चंद्रमा 129. ब्रज की स्त्रियाँ (गोपियाँ)

ऊधो ब्रज की दसा बिचारत

ना पीछे यह सिंद्धि आपनी जोगकथा बिरतासे।।
जेहि कारन पठए नंदनंदन सो सोचहु मन याहीं।।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं।।
तुम निज दास जो सखा स्याम के संतत निकट रहत हौ।
जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि कहा गहत हौ?
वै अति ललित मनोहर आनन कैसे मनहिं बिसारौं[130]।
जोग जुक्ति औ मुक्ति बिबिध बिधि वा मुरली पर वारौं।।
जेहि उर बसै स्यामसुंदर घन क्यों निर्गुन कहि आवै।
सूरस्याम सोइ भजन बहावै जाहि दूसरी भावै।। ।। 15।।

कृष्ण के प्रति गोपियों की भक्ति की सरल और निष्कपट अभिव्यक्ति

राग धनाश्री

ऊधो! मन नहिं हाथ[131] हमारे।
रथ चढ़ाय हरि संग गए लै मथुरा जबै सिधारे।।
नातरू कहा जोग हम छाँड़हि अति रुचि कै तुम ल्याए।
हम तौ झकति[132] स्याम की करनी मन लै जोग पठाए।।
धजहू मन अपनी हम पावै तुमतें होय तो होय।
सूर, सपथ हमैं कोटि तिहारी कही करैगी सोय।। ।। 16।।

गोपियों का उपालंभ और वाक्चातुर्य

ऊधो! इतनी कहियो जाय।
अति कृसगात[133] भई हैं तुम बिनु बहुत दुखारी गाय।।
जल समूह बरसत अँखियन तें, हूँकत[134] लीने नांव[135]।
जहाँ जहाँ गोदोहन[136] करते ढूँढ़त सोइ सोइ ठाँव[137]।
परति पछार[138] खाय तेहि तेहि थल अति व्याकुल ह्वै दीन।
मानहुं सूर काढ़ि डारे हैं बारिमध्य[139] तें मीन।। ।। 17।।

गोपियों की विरह वेदना

---

130. भुलाऊँ (भुलाया जाए), 131. वश में, 132. झींखती है (झक मारती है), 133. कृशकाय (दुर्बल) 134. हूँकती हैं (हूँकने लगती है), 135. नाम (श्रीकृष्ण का नाम), 136. गायों का दूध निकालते थे 137. स्थान, जगह 138. पछाड़ 139. जल के बीच से या जल से

NMDC-067

एक हुतो[140] सो गयो हरि के संग, को अराध[141] तुव ईस?
भई अति सिथिल[142] सबै माधव[143] बिनु जथा देह बिन सीस[144]।
स्वासा[145] अटकि[146] रहे आसा लगि, जीवहिं कोटि बरीस[147]।।
तुम तौ सखा स्यामसुदर के सकल जोग के ईस।
सूरजदास रसिक की बतियाँ पुरवी[148] मन जगदीस।।18।। ।।18।।

गोपियों का सह कथन

देखियत कालिंदी अति कारी।
कहियो, पथिक! जाय हरि सों ज्यों भई बिरह जुर जारी[149]।।
मनो पलिका[150] पै परी धरनि धँसि तरँग तलफ तनु जारी।
तटबारू[151] उपचार चूर[152] मनो, स्वेद[153] प्रवाह पनारी[154]।।
बिगलित कच[155] कुस[156] कास[157] पुलिन मनो, पंक[158] जुकज्जल[159] सारी।
भ्रमर मनौं मति भ्रमर चहूँदिसि[160], फिरति हैं अंग दुखारी।।
निसिदिन चकई ब्याज[161] बकत[162] मुख, किन मानहुँ अनुहारी[163]।
सूरदास प्रभु जो यमुना गति[164] सो गति भई हमारी।।।। 19।।

वियोग वर्णन

हमको सपनेहू में सोच[165]।
जा दिन ते बिछुरे नंदनंदन ता दिन तें यह पोच[166]।।
मनो गोपाल आए मेरे घर हँसि करि भुजा गही।
कहा करौं बैरिनि भई निँदिया, निमिष न और रही।।
ज्यों चकई प्रतिबिंब देखिकै आनंदी पिय जानि।
सूर, पवन मिस[167] निठुर बिधाता[168] चपल कर्यौ जल आनि।। ।।20।।

कृष्ण स्मृति

---

140. *था* 141. *आराधना करे (पूजा करे)* 142. *शिथिल* 143. *कृष्ण* 144. *सिर* 145. *श्वास* 146. *अटक गई है (रुक गई है)* 147. *वर्ष, साल* 148. *पूर्ण करें,* 149. *विरह ज्वर से जली (कृष्ण के)* 150. *पलंग* 151. *तन* 152. *चूर्ण* 153. *पसीना,* 154. *धारा, बहाव* 155. *बाल, केश* 156. *कुशा (एक प्रकार की घास)* 157. *एक प्रकार की घास* 158. *कीचड़* 159. *काली, काजल,* 160. *चारों दिशाओं में (चारो तरफ)* 161. *बहाने से* 162. *बोलती है* 163. *समता* 164. *दशा, स्थिति* 165. *चिंता* 166. *चिंता , सोच, बुरा* 167 *बहाने से* 168. *ब्रह्मा।*

NMDC-067

निसिदिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहति पावस[169] ऋतु हम पै जब तें स्याम सिधारे।।
दृग[170] अंजन लागत नहिं कबहूँ, उर कपोल[171] भए कारे।
कंचुकि[172] नहिं सूखत सुनु सजनी! उरबिच[173] बहत पनारे[174]।।
सूरदास प्रभु अंबु[175] बढ़्यो है, गोकुल लेहु उबारे।
कहँ लौं कहौं स्यामघन सुंदर बिकल होत अति भारे।। ।।21।।

गोपियों की करुण दशा

राग नट

कहत कत परदेसी[176] की बात?
मंदिर-अरध-अवधि[177] बदि[178] हम सों, हरि अहार[179] चलि जात।।
ससि रिपु[180] बरष सूर रिपु युग बर, हरि रिपु किए फिरै घात।
मघ पचक[181] लै गए स्यामघन, आय बनी यह बात।।
नखत[182], स्वेद[183], ग्रह जोरि अर्ध[184] करि को बरजै[185] हम खात।
सूरदास प्रभु तुमहिं मिलन कों कर मीड़ति[186] पछितात।। ।।22।।

कृष्ण से मिलन की चाह

यशोदा का वचन उद्धवप्रति

राग सोरठा

सँदेसो देवकी सों कहियो।
हौं तो धाय[187] तिहारे सुत की कृपा करत ही रहियो।।
उबटन[188] तेल और तातो जल देखत ही भजि[189] जाते।
जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती करम करम करि न्हाते।।
तुम तो टेव[190] जानतिहि ह्वैहै तऊ मोहिं कहि आवै।
प्रात उठत मेरे लाल लड़ैतेहि माखन रोटी भावै।।
अब यह सूर मोहि निसिबासर बड़ों रहत जिय सोच।
अब मेरे अलक लड़ैते[191] लालन ह्वै है करत संकोच।। ।।23।।

यशोदा का देवकी को संदेश

---

169. पावस ऋतु 170. आँखों में, 171. हृदय और गाल 172. चोली 173. हृदय के बीच से (छाती के बीच से) 174. नाले 175. जल 176. बाहरी व्यक्ति (परदेशी) 177. एक पक्ष (पद्रंह दिन) 178. वादा करके (कहकर) 179. मास (माह) 180. दिन (अर्थात् दिन एक वर्ष के समान व्यतीत होता है) 181. मघा से लेकर पाँचवा नक्षत्र चित्रा अर्थात चित्र 182. नक्षत्र 183. वेद (चार वेद) 184. आधा, 185. शेष (बचा हुआ) 186. मलती हुई 187. धाय (सेविका) 188. उबटन (हल्दी और सरसों का लेप) 189. भागते थे 190. उपाय 191. दुलारे, लाडले।

जद्यपि मन समुझावत लोग।
सूल होत नवनीत देखिकै मोहन के मुख जोग।।
प्रात समय उठि माखन रोटी को बिन माँगे दैहै?
को मेरे बालक कुँवर कान्ह को छन छन आगो लैहै?
कहियो जाय पथिक! घर आवै राम स्याम दोउ भैया।
सूर वहाँ कत होत दुखारी जिनके मो सी मैया।। ।।24।।

यशोदा की विरह वेदना और मातृसुलभ चिंता

कहै लौं कहिए ब्रज की बात।
सुनहु स्याम! तुम बिनु उन लोगन जैसे दिवस बिहात।
गोपी, ग्वाल, गाय, गोसुत सब मलिनबदन[192], कृसगात।
परम दीन जनु सिसिर-हेम-हत[193] अंबुजगन[194] बिनु पात।।
जो कोउ आवत देखति हैं सब मिलि बूझति कुसलात[195]।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरनन लपटात[196]।।
पिक[197], चातक[198] बन बसन न पावहिं बायस[199] बलिहि[200] न खात।
सूर स्याम संदेसन के डर पथिक न वा मग जात।। ।।25।।

सम्पूर्ण ब्रज विरहमग्न

कृष्ण वचन उद्धवप्रति

राग धनाश्री

ऊधो! मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंससुता[201] की सुंदरि कगरी[202] अरु कुंजन की छाहीं।।
वै सुरभी वै बच्छ दोहनी, खरिक[203] दुहावन जाहीं।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल[204] नाचत गहि गहि बाहीं[205]।
यह मथुरा कंचन की नगरी मनि मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति[206] आवति वा सुख की जिय उमगत, तनु नाहीं[207]।।
अनगन[208] भांति करी बहु लीला जसुदा नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहे मौन है, यह कहि कहि पछिताहीं।। ।।26।।

कृष्ण की स्वीकारोक्ति

---

192. उदास (मलिन मुख वाले हैं) 193. हिम या पाले के मारे हुए। 194. कमल समूह, कमल दल, 195. कुशलता (कुशल क्षेम), 196. लिपट जाती है 197. कोयल 198. चातक, चकवाक पक्षी, 199. कौवा 200. बलि (अन्न) 201. यमुना, 202. किनारा, 203. गोशाला 204. कोलाहल, शोर 205. बाहें 206. याद 207. शरीर का ध्यान नहीं रहता है। 208. अनगिनत।

मीराबाई

मीराबाई प्रसिद्ध राठौर राजा जोधाजी के पुत्र राव दूदाजी की पौत्री थीं। इनके पिता राजा रत्नसिंह थे। वह अपनी माता-पिता की एकमात्र संतान थी। राजा रत्नसिंह को उनके पिता ने जीवन-यापन के लिए बारह गांवों की जागीर दी थी। इन्हीं गांवों में से एक गांव, कुड़की, था। मीरा का जन्म यहीं संवत 1555 वि० (सन् 1498ई०) के आसपास हुआ था।

मीरा की माँ का देहांत जब हुआ था, तब वह मात्र चार-पाँच वर्ष की थीं। माँ की मृत्यु के बाद उनके दादाजी राव दूदाजी ने उन्हें 'कुड़की' से बुला लिया था। दूदाजी के सान्निध्य में ही उन्होंने अपना बचपन व्यतीत किया और प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की। मीरा के व्यक्तित्व पर उनके दादाजी राव दूदाजी के धार्मिक जीवन का प्रभाव पड़ा। राव दूदाजी की मृत्यु के बाद मीरा की जिम्मेदारी राव वीरमदवेजी ने संभाली थी। उन्होंने ही मीरा का विवाह सन् 1516 ई० में महाराणा सांगा के पुत्र कुवंर भोजराज के साथ किया था। मीरा को पति सुख अधिक समय नहीं मिला। असमय ही उनके पति की मृत्यु हो गई और उन्हें वैधव्य जीना पड़ा। लेकिन इस विषम परिस्थिति ने उनके जीवन की दिशा बदल दी। अब वे अपना सारा समय अपने आराध्य श्रीकृष्ण के ध्यान और पूजा में लगाने लगीं।

मीरा अपने पारिवारिक बंधनों से मुक्त होकर श्रीकृष्ण के प्रेम में लीन हो गईं। उनके परिवार जनों को उनका यह स्वरूप स्वीकार्य नहीं था। परिणामस्वरूप मीरा को ढेरों प्रतिरोध व प्रतिबंधों का सामना करना पड़ा। उनके पदों में कठिन जीवन-संघर्ष के बहुत सारे चित्र उपलब्ध हैं। संकलन के कुछ पद स्पष्टत: इस ओर संकेत करते हैं। मीरा की कृष्ण की भक्ति व प्रेम में अटूट निष्ठा थी। वह किसी भी प्रतिबंध के आगे नहीं झुकी। उन्होंने घर छोड़ दिया और साध्वी जीवन अपना लिया। कृष्ण भक्ति करते हुए वृंदावन, मथुरा, द्वारिका गईं। उनकी मृत्यु का समय संवत् 1603 वि (सन् 1546 ई०) माना जाता है। हालांकि कुछ लोग उन्हें इसके बाद भी जीवित रहने की बात करते हैं।

रचनाएं- आचार्य पशुराम चतुर्वेदी ने निम्नलिखित कृतियों को मीरा रचित बताया हैं:
रसीजी को मोहरों, गीतगोविंद की टीका, राग गोविंद, सोरठ के पद, मीराबाई का मलार, गर्वागी और फुटकर पद। इनमें फुटकल पदों की प्रामाणिकता सर्वाधिक है। इनकी पदों की निश्चित संख्या ज्ञात नहीं है।

मीरा का जीवन और उनका साहित्य विलक्षण है। मध्यकालीन सामंती दबावों को झेलते हुए भी अपने

बनाये मार्ग पर चलना किसी स्त्री के लिए कतई सरल कार्य नही था और यह कार्य तब और भी कठिन था, जबकि, स्त्री किसी राजपूत राज परिवार की हो। डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी ने मीरा की कविताओं पर अत्यंत मार्मिक टिप्पणी की है-

मीराबाई की कविता भी भक्ति आंदोलन, उसकी विचारधारा और तत्कालीन समाज में नारी स्थिति से उनकी टकराहट का प्रतिफलन है। यह प्रतिफलन उस मानवीयता में प्रकट हुआ जो अपने समय की धार्मिक साधनाओं के ही सहारे रूपायित हो सकती थी।

अब आप को मीराबाई के संकलित पदों को समझाने के लिए कुछ उपयोगी संकेत दिए जा रहे हैं-

मीरा भक्त हैं और उनका अभीष्ट श्रीकृष्ण की भक्ति है। प्रथम पद में उन्होंने श्रीकृष्ण के चरण कमलों की वंदना की है क्योंकि उनके आराध्य श्रीकृष्ण अशरण को शरण देने वाले, भक्त समाज हैं। पद संख्या '2' में मीरा ने श्रीकृष्ण के मनोहर स्वरूप का वर्णन करते हुए उनके प्रति अपना अनन्यता प्रकट की है। पद संख्या '3' में भी उन्होंने उपर्युक्त भाव की ही व्यंजना की है। कुल कुटुंब और स्वजनों के रोकने-टोकने पर भी उनकी कृष्ण के प्रति अटूट निष्ठा में किसी प्रकार का विचलन नहीं आता है। पद संख्या '4' मीरा ने श्रीकृष्ण के अप्रतिम सौंदर्य की चर्चा करते हुए स्वंय के उस रूप पर मुग्ध होने की बात स्वीकार की है। पद संख्या '5' में मीरा की श्रीकृष्ण के प्रति एक-निष्ठा का भाव स्पष्टतः अभिव्यक्त हुआ है। मीरा की भक्ति का स्वरूप ' प्रेमाभक्ति' है। वह श्रीकृष्ण को अपना प्रिय मानती हैं और उन्हें प्रसन्न करने के लिए नृत्य करती हैं और तरह-तरह से रिझाने की चेष्टा करती हैं। पद संख्या '6' इसी सत्य की ओर इशारा करता है। पद संख्या '7' में मीरा की कृष्ण निष्ठा की व्यंजना मार्मिक रूप में हुई है। वह कृष्ण जैसा सारे संसार में किसी का नहीं पाती हैं। इसीलिए राणा द्वारा भेजे गए विष के प्याले को भी सहजता से स्वीकार कर लेती हैं। उन्हें अपने प्रिय श्रीकृष्ण से दूर करने वाले किसी भी दबाव की तनिक सी भी चिंता नहीं है। यह उनकी निष्ठा का प्रभावी उदाहरण है।

पद संख्या '8' में भी मीरा की अनन्य भक्ति ही प्रकट हुई है। उन्हें कृष्ण के बिना सारा संसार व्यर्थ लगता है। पद संख्या '9' प्रेमा-भक्ति के आदर्श की स्थापना करता है। भक्त का अपना सर्वस्व अपने आराध्य को सौंप देना, भक्ति की पराकाष्ठा है। मीरा ने अपना सब कुछ श्रीकृष्ण को सौंप दिया। यही भाव इस पद का मूल है। पद संख्या '10' में मीरा ने स्पष्ट किया हैं कि, उन्होंने कृष्ण की भक्ति के लिए अपना तन और जीवन सब कुछ न्योछावर कर दिया है। बदले में उन्हें सिर्फ अपने आराध्य के दर्शन की अभिलाषा है। मीरा के पदों में मध्यकालीन सामंती समाज की विषमताओं की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। उनके पदों में मध्यकालीन सामंती दबावो में जूझती हुई स्त्री के साफ-साफ चित्र मौजूद

हैं। पद संख्या '11' '12' '13', '14' व '15' में इन दबावों के स्वर बहुत स्पष्ट हैं। मीरा राजपूत राज परिवार की थी। उनके ऊपर कड़े सामाजिक प्रतिबंध थे। उनके समाज का किसी स्त्री का घर की चारदीवारी से बाहर निकलना मृत्यु पूर्व संभव नहीं था। लेकिन वह तो कृष्ण की भक्ति करते हुए साधु-महात्माओं से खुले आम मिलती थी। सार्वजानिक तौर पर श्रीकृष्ण के प्रति अपनी भक्ति की आम व्यक्ति करती थीं। यह एक स्त्री का अपने समाज से कठिन संघर्ष था। हालांकि इसके लिए मीरा को अपना कुल, परिवार, समाज त्यागना पड़ा। तरह-तरह के लोकापवादों और लांछनों को झेलना पड़ा, जानलेवा षड्यंत्रों से भी गुजरना पड़ा परंतु मीरा की निष्ठा और भक्ति अदम्य और अटूट थी। पद संख्या '16' में मीरा ने अपनी भावदशा का एक और सुन्दर उदाहरण दिया है। वह कृष्ण के प्रेम में सब कुछ भूल चुकी थी। उनकी अवस्था का सही ज्ञान भला दूसरों को कैसे हो सकता था? उनका कष्ट तो सिर्फ श्रीकृष्ण ही दूर करने में सक्षम थे।

पद संख्या '17' में मीरा भक्ति के आदर्श और उसकी चुनौतियों की ओर इशारा करता है। उन्होंने बहुत साफ कहा है कि, सारे सांसारिक संबंध झूठे हैं। सत्य एकमात्र श्रीकृष्ण की भक्ति है। श्रीकृष्ण ही उनके जंन्म-जमांतर के मित्र, हितैषी व प्रिय हैं। इसीलिए वह उन्हीं प्रेम में खोई रहती हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने भी ठीक ऐसे ही भाव अपनी 'विनय पत्रिका' में जाके प्रिय न राम- वैदेही, तजिए ताहि कोटि वैरी सम जपापि परम स्नेही वाले पद में व्यक्त किया है।

पद संख्याा '18' में मीरा ने प्रकृति के साथ एक वियोगिती का दशा का उल्लेख किया है। पद संख्या '19' में मीरा ने अपने कृष्ण प्रेम का एक और उदाहरण दिया है। उन्हें वृन्दावन भला लगता है क्योंकि वृंदावन में सब जगह उनके गोविंद विराजमान हैं। एक भक्त को इससे अधिक की लालसा क्यों होगी? वह तो हर समय व हर जगह अपने प्रिय की उपस्थिति का ही अनुभव करना चाहता है। वृंदावन में मीरा के लिए यह स्थिति सुलभ थी। अंतिम पद (20) में मीरा ने संसार की नश्वरता की बात करते हुए बाह्याचारों पर कठोर प्रहार किया है। वह अपनी मुक्ति के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना करती हैं।

मीरा के पद

मण थें परस[1] हरि रे चरण ।। टेक ।।
सभग सतल कँवल[2] कोमल, जगत ज्वाला[3] हरण ।
इण चरण प्रह्लाद परस्याँ, इन्द्र पदवी धरण ।
इण चरण ध्रुव[4] अटल करस्याँ सरण असरण[5] सरण ।।
इण चरण ब्रह्माण्ड भेट्याँ नखसिखाँ गिरि भरण ।
इण चरण कालियाँ णाथ्याँ गोपी लीला करण ।
इण चरण गोबरधन धार्‌याँ गरब मधवा[6] हरण ।
दासि मीराँ लाल गिरधर, अगम तारण[7] तरण ।।।। 1।।

कृष्ण की वंदना

हे मा बड़ी बड़ी अंखियन वारो, साँवरो मो तन हेरत हँसिके ।। टेक ।।
भौंह कमान बान बाँके लोचंन, मारत हियरे[8] कसिके[9] ।
जतन करो जन्तर[10] लिखी बाँधों ओखद[11] लाऊँ घँसिके ।
ज्यों तोकों कछु और बिथा[12] हो, नाहिन मेरो बसिके[13] ।
कौन जतन करों मोरी आली, चन्दन लाऊँ घसिके ।
जन्तर मन्तर जादू टोना, माधूरी मूरति बसिके ।
साँवरी सूरत आन मिलावी ठाढ़ी रहूँ मैं हँसिके ।
रेजा[14] रेजा भयो करेजा अन्दर देखो धाँसिके ।
मीराँ तो गिरधर बिन देखे, कैसे रहे घर पर बसिके[15] ।।। 2।।

कृष्ण का मनोहर स्वरूप

थारो[16] रूप देख्याँ अटकी[17] ।। टेक ।।
कुल कुटुम्ब सजण[18] सकल बार बार हटकी[19] ।
बिसर्‌याणा लगण[20] लँगा मोर मुगट बटकी ।

कृष्ण के प्रति अटूट निष्ठा

---

1. *स्पर्श कर, वंदना कर,* 2. *कमल के समान कोमल* 3. *तीन प्रकार के सांसारिक ताप या दुख (दैहिक, दैविक और भौतिक)* 4 *भक्त ध्रुव* 5 *अशरण (बिसहारा)* 6. *इंद्र* 7. *तारने वाले या पार कराने वाले,* 8. *हृदय में,* 9. *जोर से* 10. *यंत्र* 11. *औषधि* 12. *व्यथा* 13. *वश का* 14. *टुकड़े टुकडे* 15. *बस कर* 16. *तुम्हारा (कृष्ण का),* 17. *उलझना,* 18. *स्वजन* 19. *मना किया,* 20. *लगन प्रेम,*

म्हारो मण मगण स्याम लोक कह्याँ भटकी[21]।
मीरा प्रभु सरण गह्याँ जाण्या घट घट की।। ।।3।।

निपट[22] बंकट[23] छब[24] अँटके[25]।
म्हारे णेणा[26] निपट बंकट छब अँटके।। टेक।।
देख्याँ रूप मदन मोहन री, पियत पियूखन[27] मटके।
बारिज[28] भवां अलक मतवारी, णेणे रूप रस अँटके।
टेढ्या कट टेढ़े करि मुरली, टेढ्या पाग[29] लर[30] लटके।
मीरा प्रभु रे रूप लुभाणी, गिरधर नागर नटके।। ।।4।।

कृष्ण का अप्रतिम सौंदर्य

णेणाँ लोभाँ आटकाँ शक्याँ णा फिर आय।। टेक।।
रूँम रूँम[31] नखसिख लख्याँ, ललक[32] ललक अकुलाय।
म्हाँ ठाढी घर आपणे मोहन निकल्याँ आय।
बदन चन्द परगासताँ[33] मन्द मन्द मुसकाय।
सकल कुटुम्बाँ बरजताँ[34], बोल्या बोल वणाय[35]।।
णेणा चंचल अटक णा माण्या, परहथ[36] गयाँ बिकाय।
भलो कह्याँ काँई कह्याँ बुरोरी सब लया सीस चढ़ाय।
मीरा रे प्रभु गिरधर नागर विणा[37] पल रह्याँ णा जाय।। ।।5।।

कृष्ण के प्रति निष्ठा

म्हाँ गिरधर आगाँ, आगाँ नाच्यारी।। टेक।।
णाच[38] णाच म्हाँ रसिक रिझावाँ[39] प्रीत पुरातन[40] जाँच्या[41] री।
स्याम प्रीत री बाँध घुँघर्याँ मोहण म्हारो साँच्यारी[42]।
लोक लाज कुलरा[43] मरजादाँ[44] जगमां णेक[45] णा राख्यौरी।
प्रीतम पल छण णा बिरारावाँ मीरा हरि रँग राच्याँरी[46]।। ।।6।।

प्रेमाभक्ति

---

21. भुलावे में पड़ गई 22. नितांत 23. वक्र, टेढे (त्रिभंगी लाल,श्री कृष्ण के लिए विशेषण) 24. छवि में, सौंदर्य में, 25. उलझ गए, फंस गए 26. नेत्र 27. अमृत के, 28. कमल जैसी, 29. पगड़ी 30. मोतियों की लड़ी पर 31. रोम रोम 32. गहरी अभिलाषा, 33. प्रकाश फैलाते हुए 34. बार-बार मना करते हैं, 35. बनाकर (व्यंग्य करने के संदर्भ में), 36. पराये हाथों 37. बिना 38. नाच नृत्य 39. प्रसन्न किया करती हूँ, 40. पुरानी 41. देखा, जाँचा 42. सच्चा है, 43. कुल की 44. मर्यादा 45. एक 46. रंगी हुई है, अनुरक्त है

NMDC-067

म्हाराँ री गिरधर गोपाल दूसराँ णाँ कूयाँ[47]।
दूसराँ णाँ कूयाँ साधाँ सकल लोक जूयां[48]।। टेक।।
भाया छांड्याँ बन्धा छाँड्याँ सँगा सूयाँ।
साधाँ ढिग बैठ बैठ, लोक लाज खूयाँ[49]।
भगत देख्याँ राजी ह्ययाँ जगत देख्याँ रूयाँ[50]।
असुवाँ जल सींच सींच प्रेम बेल बूयाँ[51]।
दध मथ घृत काढ़ लयाँ डार दया छूयाँ।
राणा विषरो प्यालो भेज्याँ पीय मगण हूँया।
मीरा री लगण लग्याँ होणा हो जो हूँयाँ[52]।।।। 7।।

कृष्ण के प्रति निष्ठा

माई साँवरे रंग राची[53]। टेक।।
साज सिंगार बाँध पग घूंघर, लोकलाज तज नाची।
गयाँ कुमत लयाँ[54] साधाँ सँगत श्याम प्रीत जग साँची।
गायां गायाँ हरि गुण निसदिन, काल ब्याल[55] री बाँची।
स्याम विणा जग खाराँ[56] लागाँ, जगरी बातां काँची[57]।
मीराँ सिरि गिरधर नट नागर भगति रसीली जाँची।।।। 8।।

कृष्ण को प्रसन्न करना

मैं गिरधर के घर जाऊँ।।टेक।।
गिरधर म्हाँरों साँचो प्रीतम, देखत रूप लुभाऊँ।
रैण[57] पड़े तब ही उठि जाऊँ, भोर गये उठि आऊँ।
रैणदिना वाके सँग खेलूं ज्यूं त्यूं वाहि लुभाऊँ[58]।
जो पहिरावै सोई पहिरूँ, जो दे सोई खाऊँ।
मेरी उणकी[59] प्रीत पुराणी, उण विण पल न रहाऊँ।
जहाँ बैठावें तितही बैठूं बेचे तो बिक जाऊँ।
मीराँ के प्रभु गिरधर नागर, बार बार बलि[60] जाऊँ।।।। 9।।

प्रेमाभक्ति

---

47. कोई भी 48. देख लिया है 49. खो दिया है 50. दुखी हुई 51. बोया है, लगाया है 52. हुई 53. प्रेम में (रँग राँची) 54. स्वीकार कर लिया, 55. सर्प 56. (कड़वा) 57. कच्ची, सारहीन, 57. रात 58. मुग्ध हो 59. उनकी, 60. न्योछावर होती हूँ (उसे सब कुछ सौंपती हूँ)

माई री म्हा लियाँ गोविन्दाँ मोल[61] ।। टेक ।।
थे कह्याँ छाणे[62] म्हाँ काँचोड्डे[63] लियाँ बजन्ता[64] ढोल।
थे कह्याँ मुंहौघे[65] म्हाँ कह्याँ सस्तो, लिया री ताजाँ तोल।
तण वाराँ म्हाँ जीवन वाराँ, वाराँ अमोलक[66] मोल।
मीरा कूँ प्रभु दरसण दीज्याँ पूरब जणम की कोल[67] ।। ।। 10 ।।

कृष्ण के प्रति समर्पण

नहिं सुख भाव[68] थाँरो देसलड़ो[69] रँगरूड़ो[70] ।। टेक ।।
थाँरे देसाँ में राणा साध नहीं छै, लोग बसै सब कूड़ो[71]।
गहणा[72] गाँठी राणा हम सब त्यागा, त्याग्यो कर रो चूड़ो।
काजल टीकी हम सब त्यागा, त्याग्यो छै बाँधन जूड़ो।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, बर पायो छै पूरो ।। ।। 11 ।।

मध्यकालीन सामंती दबाव

राणाजी म्हाने या बदनामी लगे मीठी[73] ।। टेक ।।
कोई निन्दी कोई बिन्दी मैं चलूंगी चाल अनूठी[74]।
साँकडली[75] सेर्‌या जन मिलिया क्यूं कर फिरूं अपूठी।
सत संगति मा म्यान सुणै छी, दुरजन लोगाँ ने दीठी[76]।
मीरा रो प्रभु गिरधर नागर, दुरजन जलो जा अंगीठी ।। ।। 12 ।।

पग बाँध घूँघर्‌या णाच्याँरी[78] ।। टेक ।।
लोग कह्याँ मीरा बावरी[79] सासु कह्याँ कुलनासाँ[80] री।
विख[81] रो प्यालो राणा भेज्याँ पीवाँ मीरा हाँसाँ[82] री।
तण मण वार्‌याँ हरि चरणामां दरसण अमरित प्यास्याँ[83] री।
मीरा रे प्रभु गिरधर नागर, थारी सरणाँ आस्याँ री ।। ।। 13 ।।

सामाजिक विरोध

राणाजी थे जहर दियो म्हे जाणी[84] ।। टेक ।।
जैसे कंचन दहत अगिन में, निकरात वारायाणी[85]।
लोकलाज कुल काण जगत की, दइ बहाय जस पाणी[86]।

मीरा का संघर्ष

---

61. *मूल्य (देकर)* 62. *छिपा कर आँख बचाकर* 63. *खुले आम,* 64. *बजाते हुए,* 65. *महँगा,* 66. *अनमोल,* 67. *वादा प्रतिज्ञा संकल्प,* 68. *सुहाता है, अच्छा लगता है,* 69. *देश,* 70. *अच्छे रंग का, विचित्र सुंदर* 71. *झूठे, दुर्जन* 72. *आभूषण* 73. *भली, अच्छी,* 74. *उल्टी, भिन्न मार्ग से,* 75. *सँकरी, तंग* 76. *देखा,* 78.. *नृत्य किया* 79. *बावली, पगली* 80. *कुल में कलंक लगाने वाली* 81. *विष* 82. *हँसी, प्रसन्न रही,* 83. *प्यासा,* 84. *जान गई* 85. *बारह वाणी (बारहों सूर्यो के समान चमक वाला)* 86. *पानी,*

NMDC-067

अपणे घर का परदा करले, मैं अबला[87] बौराणी।
तरकस तीर लग्यो मेरे हियरे, गरक[88] गयो सनकाणी[89]।
सब संतन पर तन मन वारों चरण कंवल लपटाणी।
मीराँ को प्रभु राणि लई है, दासी अपणी जाणी।। ।। 14।।

हेली[90] म्हासूं हरि बिन रह्याँ न जाय।। टेक।।
सास लड़ै मेरी नन्द खिजावै, राणा रह्याँ रिसाय[91]।
पहरो[92] भी राख्यो चौकी बिठार्यो, ताला दियो जड़ाय[93]।
पूर्व जन्म की प्रीत पुराणी, सो क्यू छोड़ी जाय।
मीराँ के प्रभु गिरधर नागर, अवरून आवे म्हाँरी दाय[94]।। ।। 15।।

मीरा पर लगाया गया बंधन

हेरी म्हा दरद दिवाणां[95] म्हारां दरद न जाण्याँ कोय ।।टेक।।
घायल री गत घायल जाण्याँ, हिबड़ी[96] अगण सँजोय[97]।
जौहर[98] की गत जौहर जाण्याँ, क्या जाण्याँ जिण खोय।
दरद की मारयाँ दर[99] दर डोल्याँ बैद मिल्या णा कोय।
पीरा री प्रभु पीर[100] मिटाँगा जब वैद साँवरो होय।। ।। 16।।

मीरा की भाव दशा

म्हाँरो जणम जणम रो साथी थाँने णा बिसर्‌याँ दिन राती।। टेक।।
था देख्याँ विण कुल[101] णा पड़ताँ जाणे म्हारी छाती[102]।
ऊँचा चढ़चढ़ पंथ[103] निहारया कलप कलप अखियाँ राती।
भो[104] सागर जग बन्धण[105] जूँठाँ[106] झूठां कुलरा न्याती[107]।
पल पल थारो रूप निहाराँ निरख निरख मदमाँती।
मीराँ रे प्रभु गिरधर नागर हरि चरणाँ चित्त राँती।। ।। 17।।

मीरा भक्ति का आदर्श

---

87. *असहाय, कमजोर (स्त्री)* 88. *गर्क हो गया, प्रवेश कर गया,* 89. *सनक गई या पागल हो गई,* 90. *अरी (संबोधन)* 91. *नाराज, कुपित* 92. *रखवाली के लिए पहरेदार नियुक्त किये हैं* 93. *डलवाया है* 94. *मेरी पसंद में,* 95. *पंगली* 96. *हृदय में* 97. *यत्न पूर्वक संभाल कर रखना,* 98. *जौहर करने वाली स्त्री अर्थात आग मे तपने वाली* 99. *जगह-जगह* 100. *पीड़ा, कष्ट,* 101. *चैन,* 102. *हृदय* 103. *रास्ता* 104. *भव (आवागमन या जन्म मृत्य का चक)* 105. *बंधन* 106. *झूठा,* 107. *नाता, संबंध*

NMDC-067

बरसाँ री बदरिया सावण री, सांवण री मणभावण[108] री।।
सावन माँ, उमग्यो[109] म्हारी मण री, भणक[110] सुण्याँ हरि आवण री।
उमड़ घुमड़ घण मेघां आयाँ, दामण[111] घण झर लावण री।
बीजाँ बूँदा मेहो[112] आयाँ बरसा शीतल पवन सुहावण री।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, बेला मंगल गायण[113] री।। ।। 18।।

प्रकृति के संग वियोगिनी की दशा

आली म्हाणें लागी वृन्दावण नीकाँ।। टेक।।
घर-घर तुलसी ठाकुर पूजा, दरसण गोविन्दजी काँ।
निरमल नीर बह्याँ जमणाँ माँ, भोजन दूध दही काँ।
रतण सिंहासण आप विराज्याँ, मुगट धर्‍याँ तुलसी काँ।
कुँजन-कुँजन[114] फिर्‍या साँवरा, सबद सुण्या मुरली काँ।
मीराँ रे प्रभु गिरधर नागर, भजण बिणा नर फीकाँ[115]।। ।। 19।।

मीरा की भक्ति साधना

भज मण चरण कँवल अवणासी[116]।। टेक।।
जेताई[117] दीसा[118] धरण गगन माँ, तेताई[119] उठ जासी।
तीरथ बरतो[120] ग्याणां कथंता, कहा लयाँ करवत कासी।
यो देही[121] रो गरब[122] णा करणा, माटी माँ मिल जासी।
यो संसार चहर[123] राँ बाजी, साँझ पड्याँ उठ जासी।
कहा भयाँ था भगवा पहर्‍याँ घर तज लयाँ संन्यासी।
जोगी होयाँ जुगत[124] णाँ जाणा, उलट जणम राँ फाँसी।
अरज कराँ अबला कर जोर्‍याँ, स्याम तम्हारी दासी।
मीरा रे प्रभु गिरधर नागर, काट्याँ म्हारो गाँसी[125]।। ।। 20।।

संसार की नश्वरता और गिरधर नगर की महत्ता

---

108. *मनभावन, मन को भाने वाली* 109. *उमंगों से भर आया, उमंगित हुआ,* 110. *आभास* 111. *दामिनी बिजली,* 112. *वर्षा* 113. *गाना गाना,* 114. *बगीचे-बगीचे में,* 115. *नीरस, व्यर्थ,* 116. *अविनाशी अनश्वर, परमात्मा* 117. *जो कुछ भी* 118. *दीख पड़ता है,* 119. *वह सभी, उतना* 120. *व्रत* 121. *शरीर* 122. *गर्व, अभिमान* 123. *चौसर (एक प्रकार का खेल)* 124. *युक्ति, ईश्वर प्राप्ति के उपाय* 125. *गाँठ या बंधन।*

NMDC-067

बिहारी

रीतिकालीन हिन्दी कविता के दो सौ वर्षों के इतिहास में बिहारी का महत्वपूर्ण स्थान है। सैद्धान्तिक रूप से उन्हें रीतिसिद्ध कवि कहा जाता है। इस कोटि विशेष के कवियों में उनकी बराबरी के कवि दुर्लभ हैं। इसीलिए उन्हें रीतिसिद्ध कवियों में सबसे ऊपर रखा जाता है।

बिहारी के जन्म के संबंध में विवाद की स्थिति है। एक संभावना उनके बुंदेलखण्ड में जन्म लेने की ओर संकेत करती है। कुछ लोग उन्हें ग्वालियर के निकट बसुआ गोविंदपुर गांव में केशव राय नाम के माथुर चौबे के यहाँ सन् 1595 ई० में जन्मा बताते हैं। इन्होंने हरिदासी संप्रदाय में दीक्षित स्वामी नरहरि दास का शिष्यत्व स्वीकार किया था। इनका अपने समय के प्रसिद्ध विद्वानों, कवियों, राजनीतिज्ञों से अच्छा संपर्क था। पण्डित राज जगन्नाथ, कुलपति मिश्र, दुलह, जसंवत सिंह और अब्दुल रहीम खानखाना आदि से इनका परिचय था। जयपुर के राजा मिर्जा जयसिंह का इन्हें संरक्षण प्राप्त था। उन्हीं के कहने पर इन्होंने सतसई की रचना की थी। इनकी मृत्यु का समय विद्वानों ने सन् 1664 ई० माना है।

बिहारी की साहित्यिक ख्याति का एकमात्र आधार उनकी सतसई है। इसमें उन्होंने जीवन के अपने व्यापक अनुभव, पर्यविक्षण और बहुज्ञता का एक साथ परिचय दिया है। डॉ० सत्य प्रकाश मिश्र ने भी इस ओर स्पष्ट संकेत किया है- "सतसई के अध्ययन से बिहारी की अनुभव सम्पन्नता, चमत्कारोन्मुखी वृत्ति, भाषिक रचनात्मकता और शास्त्र तथा साहित्य के व्यापक अध्ययन और मनन का स्पष्ट पता चलता है।"

अर्थ की दृष्टि से बिहारी के दोहे विलक्षण हैं, उनके दाहों से संबंध में प्रचलित निम्नलिखित किंवदंती से भी प्रकट है-

सतसैया के दोहरे ज्यों नावक के तीर।
देखन में छोटे लगैं घाव करैं गम्भीर।।

संकलन में कुल 58 दोंहे हैं। इन दोहों को कम से शृंगार व नीति जीवन बोध के आधार पर रखा गया है। दोहा संख्या 30 से 57 तक के दोहे बिहारी को गहरे जीवनानुभव सम्पन्नता का कवि साबित करते हैं। इस प्रकार आपको बिहारी की समग्र छवि से परिचित कराने की चेष्टा की गई है।

संक्षेप में दोहों को समझने की सुविधा की दृष्टि से यहाँ कुछ संकेत दिए जा रहे हैं-

दोहा संख्या 1 सतसई का मंगलाचरण है। इसमें कवि ने अपने कल्याण के लिए नागरी राधा से प्रार्थना की है। स्व० श्री जगन्नाथ दास रत्नाकर जी ने इस दोहे के तीन अर्थ किए है। दोहे सं० 3 शृंगार का दोहा है। इसमें पूर्वानुरागिनी नायिका किसी बहुत खास सखी से प्रेम के वश होकर लोक लाज छूटने की की बात कह रह रही है। दोहा सं० 4 में कवि ने नायिका के नेत्रों की प्रशंसा की है। दोहा सं० 6 प्रेम में नेत्र कैसी निर्णायक भूमिका अदा करते हैं इसी की व्यंजना बिहारी ने अपने इस दोहे में की है। प्रेमी और प्रेमिका भीड़भाड़ में भी नेत्रों के सहारे गोपनीय संवाद कर ले रहे हैं। एक दूसरे तक अपनी बात पहुँचा पा रहे हैं। दोहा सं० 7 में प्रेमी व प्रेमिका के बीच गुप्त वार्तालाप की एक और छटा अभिव्यक्त हुई है। दोहा सं० 10 में नायिका (प्रेमिका) के विलक्षण विरह की चर्चा हुई है। दोहा सं० 14 में नेत्र-सौंदर्य वार्णित है। दोहा सं० 16 में भी नेत्रों की सुंदरता की कवि ने प्रशंसा की है। दोहा संख्या 17 में कवि ने प्रेम की मार्मिक अभिव्यंजना की है। दोहा संख्या 20 में कवि ने राधा और कृष्ण के बीच के अद्वितीय प्रेम के एक आयाम से पाठकों का परिचय कराया है। राधा, कृष्ण से बात करने का सुख प्राप्त करना चाहती हैं। इसलिए उन्होंने उनकी मुरली छिपा दी है। अब दोनों में मीठी नोक झोंक हो रही है। दोहा सं० 21 में कवि ने प्रणय मान व्यक्त किया है। दोहा सं० 24 में कवि में श्रीकृष्ण के विरह में गोपियों की अवस्था का सुंदर चित्र उपस्थित किया है। दोहा सं० 25 में प्रेम की विलक्षणता की अभिव्यक्ति हुई है नायिका नायक के सामने आकर शर्म संकोच की वजह से उसकी ओर देख नहीं पाती है और उसे नहीं देखने पर भी वह व्याकुल हो जाती है। यह प्रेम की विलक्षणता ही है।

दोहा संख्या 26 में कवि ने रंग संयोजन के अपने ज्ञान का सुंदर परिचय दिया है। कृष्ण श्यामवर्णी हैं, उन्होंने पीतांबर ओढ़ रखा है। इससे कवि को ऐसा लगता है, जैसे, नीलमणि शैल पर सुबह-सुबह धूप पड़ रही हो। दोहा सं० 27 में राधा कृष्ण के अटूट प्रेम की सुंदर व्यंजना हुई है। दोहा सं० 28 में नायिका के चंचल नेत्रों की सुंदरता का वर्णन है। दोहा सं० 29 में कवि ने श्लेष के उपयोग से सत्संग की महिमा का वर्णन किया है।

बिहारी निश्चित रूप से शृंगार के एक बड़े कवि हैं। उनके दोहों में इस भाव की तमाम बारीकियाँ अत्यंत कुशलता से चित्रित हुई हैं। लेकिन कवि को शृंगारेतर अनुभव भी है। वह जीवन और समाज की जटिलताओं से भी परिचित है। इस भाव के दोहे सतसई में संख्या की दृष्टि से कम अवश्य है, परंतु मार्मिकता में कहीं से भी कम नहीं हैं। दोहा संख्या 31 में कवि ने संगति दोष का सुंदर अभिव्यक्ति हैं। दोहा सं०33 में कवि ने संपत्ति के बढ़ने के साथ व्यक्ति के मन के असंतुलित होने का स्पष्ट संकेत किया है। इनके घमण्ड से व्यक्ति के समूल नाश तक की स्थिति आ जाती है। इस भाव की सुंदर व्यंजना इस दोहे में हुई है। जीवन और समाज पर कवि की पकड़ का एक अच्छा उदाहरण दोहा सं० 34 है। घर जमाई को किन स्थितियों से गुजरना पड़ता है; उसकी दशा और दुर्गति पर बिहारी ने मार्मिक टिप्पणी

की है। दोहा संख्या 35 में बिहारी ने सोने को धतूरे से ज्यादा खतरनाक बताया है। धतूरा खाने पर व्यक्ति मतवाला होता है, जबकि सोना पाकर ही उसे उन्माद होता है। यह कवि के अपने समाज के सूक्ष्म निरीक्षण का ही परिणाम है कि वह इस तरह के भावों की सटीक अभिव्यक्ति करने में सक्षम हुआ है। दोहा संख्या 41 में कवि ने लोभ की निंदा की है। दोहा संख्या 43 बिहारी का एक प्रसिद्ध दोहा है। कहते हैं कि कवि ने अपने आश्रयदाता राजा जयसिंह को यह दोहा सुनाकर उन्हें पुनः राज-काज से जोड़ दिया था। राजा अपनी नई नई रानी के प्रेम में इतना लीन था कि वह राज काज से विरत हो गया था। ऐसे में बिहारी ने इस दोहे की रचना की और उसे सुनाया था। दोहों संख्या 44 में कवि नें प्रेम दशा का चित्र उपस्थित करते हुए बुरे व्यक्ति पर प्रेमी प्रेमिका के मिलन से उत्पन्न होने वाले भाव की व्यंजना की है।

दोहा सं० 45 में कवि ने विपत्ति में भी धैर्य नहीं छोड़ने की बात की है। साथ ही उसने सुख, सम्पन्नता की स्थिति में लोगों को ईश्वर का स्मरण करना नहीं भूलने की राय दी है। इसमें कवि का देववाद (भाग्यवाद) प्रकट हुआ है। दोहा संख्या 50 में कवि ने स्पष्ट किया है कि चाहे कितने यत्न क्यों न किए जाएं कि व्यक्ति का स्वभाव नहीं बदलता है। दोहा संख्या 51 में बिहारी ने स्वीकार किया है कि सबके गुणवान गुणवान कहने भर से कोई व्यक्ति गुणी नहीं हो जाता है। गुणी होने के लिए उसमें गुण भी होने चाहिए। दोहा संख्या 56 में बिहारी ने यह सत्य व्यक्त किया है कि साहित्य, संगीत आदि में सिद्धि साधना से ही संभव है और यह कोई सरल कार्य नहीं है। इसमें वही सफल होता है जो इसमें पूरी तरह लीन हो जाता है। दोहा संख्या 57 में कवि ने रसिक मन और नरपशु के अंतर को स्पष्ट करते हुए दोनों की दृष्टियों के अंतर को भी उपस्थित किया है। दोहा संख्या 58 में नायिका और उसकी सखी के बीच वातार्लाप है। सखी, नायिका को नायक के प्रेम का महत्व समझा रही है।

बिहारी के दोहे

मेरी भव बाधा[1] हरौ राध नागरि सोई।
जा तन की झाँई[2] परैं स्यामु हरित दुति[3] होइ।। 1।।

मंगलाचरण
राधा से प्रार्थना

औरै-ओप[4] कनीनिकनु[5] गनी धनी सिरताज[6]।
मनी धनी[7] के नेह की बनीं छनीं पट लाज।। 2।।

नवयौवना मुग्धा

फिरि फिरि चितु उत हीं रहतु, टुटी लाज की लाव[8]।
अंग-अंग छवि झौं र[9] मैं भयौ भौंर की नाव। ।।3।।

पूर्वारागिनी नायिका

जोग जुगति[10] सिखए सबै मनौ महामुनि मैन।
चाहत पिय अद्वैतता[11] कानन[12] सेवत नैन।। ।।4।।

नायिका के नेत्रों का सौंदर्य

लौनै मुहुँ दीठि[13] न लगै, यौं कहि दीनौ ईठि[14]।
दूनी है। लागन लगी, दियैं दिठौना[15] दीठि। ।।5।।

काजल लगाने से बढ़ी शोभा

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन[16] में करत हैं नैननु हीं सब बात। ।।6।।

नायक नायिका की आँखों द्वारा प्रेम की अभिव्यक्ति

लखि गुरूजन बिच कमल सौं सीसु छुवायौ स्याम।
हरि-सनमुख करि आंरसी[17] हियैं लगाई बाम[18]। ।।7।।

नायक और नायिका की चेष्टा

---

1. *सांसारिक विघ्न बाधा या जन्म मरण का दुख* 2. *इस शब्द के तीन अर्थ लिए गये हैं। क. परछांही, आभा ख. झांकी-झलक ग ध्यान* 3. *इस शब्द के भी तीन अर्थ लिए गये हैं क हरे रंग वाला ख. हरा भरा ग. तेजहीन, प्रभाशून्य* 4. *कुछ और ही ओप वाली* 5. *आँखों की पुतलियों से,* 6. *अनेक सपत्नियों में श्रेष्ठतम* 7. *स्वामी, प्रभु, पति,* 8. *रस्सी* 9. *झूमर* 10. *योग, युक्ति, योग, शब्द यहां द्विअर्थी हैं क नायक का मिलाप ख. चित्तवृतियों के निरोध द्वारा जीवात्मा और परमात्मा का मिलन इस आधार पर जोग जुगति के दो अर्थ इस प्रकार होंगे क. प्रियतम संयोग प्राप्ति के उपाय ख. योग क्रिया करने के विधान* 11 *प्रिय से अभिन्नता* 12 *शब्द श्लिष्ट है; दो अर्थ है क. कानों से ख. वन* 13. *कुदृष्टि, नजर,* 14. *हितकारिणी या सखी* 15. *काजल का टीका* 16. *भवन,* 17. *दर्पण* 18. *नायिका*

पाइ महावरू दैंन कौं नाइनि बैठी आइ। फिरि फिरि, जानि महावरी एड़ी मीड़ति[19] जांइ।। 8।।	एड़ी का सौंदर्य
नेहु न, नैननु, कौं कछू उपजी बड़ी बलाइ[20]। नीर भरे नितप्रति रहैं तऊ न प्यास बुझाइ।। 9।।	नेत्र वर्णन
लाल, तुम्हारे बिरह की अगनि अनूप[21] अपार। सरसै बरसैं नीर हूँ, झर[22] हूँ मिटै न झार[23]।। 10।।	विरह व्यथा
मकराकृति[24] गोपाल कैं सोहत कुंडल कान। धरयौ मनौ हिय धर समरू[25] डयौढ़ी लसत निसान।। 11।।	कृष्ण का सौंदर्य
गोरी गदकारी[26] परैं हँसत कपोलनु गाड़। कैसी लसति गवाँरि यह सुनकिरवा[27] की आड़।। 12।।	नायिका का सौंदर्य वर्णन
मंगलु बिंदु सुरंगु[28], मुखु ससि, केसरि-आड़ गुरू[29]। इक नारी लहि संगु, रसमय किय लोचन-जगत।। 13।।	मुख सौंदर्य
रससिंगार[30]-मंजनु[31] किए, कंजनु[32] भंजनु[33] दैन। अंजनु रंजनु[34] हूँ बिना खंजनु[35] गंजनु[36] नैन।। 14।।	नेत्र का सौंदर्य
साजे मोहन मोह कौं मोहीं करत कुचैन[37]। कहा करौं उलटै परे टोने[38] लोने नैन।। 15।।	मोहन के सौंदर्य से मुग्ध नायिक।

---

19. मलना या मसलना 20. विपत्ति 21. विलक्षण 22. प्रचंड ताप, 23. जलन 24. मकर की आकृति के 25. कामदेव 26. मांसल शरीर 27. सुनहरा कीड़ा; 28. सुंदर रंग (यहां इसका रंग लाल है) 29. बृहस्पति 30. शृंगार रसोचित (हाव भाव, कटाक्षादि) 31. निमग्न या दक्ष 32. कमल 33. मान-भंग 34. रंगना या लगाना 35. पक्षी 36. तिरस्कार, 37. विकल या व्याकुल 38. जादू

NMDC-067

सायक[39]-सम मायक[40] नयन, रँगें त्रिविध रँग गात[41]।
झखो[42] बिलखि दुरि, जात जल, लखि जलजात[43] लजात।। 16।। — नयन सौंदर्य

कागद[44] पर लिखत न बनत, कहत सँदेसु लजात।
कहिहै सबु तेरौ हियौ मेरे हिय की बात।। 17।। — विरह व्यथा

अंग-अंग नग जगमगत दीपसिखा[45] सी देह[46]।
दिया बढ़ायें हूँ रहै बड़ौ उज्यारौ[47] गेह[48]।। 18।। — नायिका की छबि

पत्रा[49] हीं तिथि[50] पाइयै, बा घर कैं चहुँ पास।
नितप्रति पून्यौई[51] रहै, आनन ओप उजास[52]।। 19।। — सौंदर्य वर्णन

बतरस[53] लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ[54]।
सौंह[55] करै भौंह हनु[56] हँसै, दैन कहैं नटि[57] जाइ।। 20।। — राधा कृष्ण का प्रेम वर्णन

मैं मिसहा[58] सोयौ समुझि, मुँहु चूम्यौ ढिग[59] जाइ।
हँस्यौ खिसानी[60] गल गह्यौ रही गरै लपटाइ।। 21।। — प्रणय मान

अनियारे[61] दीरघ[62] दृगनु किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरे कछू, जिहिं बस होत सुजान[63]।। 22।। — आंतरिक भाव

जब जब वै सुधि कीजियै तब, तब सब सुधि जाँहि।
आँखिनु आँखि लगी रहैं आँखें लागति नाँहि।। 23।। — वियोगिनी नायिका की दशा

---

39. शाम, सांयकाल (स्व श्री जगन्नाथ दास रत्नाकर ने यही अर्थ उचित माना है) 40. माया करने वाले 41. शरीर 42. मछली भी, 43. कमल 44. कागज 45. दीपशिखा 46. शरीर 47. उजाला 48. घर 49. पंचांग 50. तारीख 51. पूर्णिमा 52. उजाला 53. बातचीत का आहट 54. छिपा दिया 55. शपथ 56. भौंहों में 57. मुकरना, बहाना करना 58. बहाना करने वाला, ठगने वाला 59. पास जाकर 60. खीझना; खिसियाना 61. कोरदार 62. बड़े 63. संयाने (गुणीजन)

सघनकुंज-छाया सुखद सीतल सुरभि समीर।
मनु है जातु अजौं[64] वहै उहि जमुना के तीर।। 24।।

कृष्ण का स्मरण

इन दुखिया अँखियानु कौं सुखु सिरज्यौई[65] नाँहि।
देखैं बनै न देखतै अनदेखैं अकुलाँहि[66]।। 25।।

वियोग दशा

सोहत ओढै पीतु पटु स्याम, सलौनैं[67] गात।
मनौ नीलमनि सैल पर आतपु[68] परयौ प्रभात[69]।। 26।।

श्याम का सौंदर्य

चिरजीवौ[70] जोरी,[71] जुरै क्यौं न सनेह गँभींर।
को घटि,[72] ए वृषभानुजा[73] वे हलधर के बीर[74]।। 27।।

प्रेम की अधिकता

चमचमात चंचल नयन बिच घूँ घट-पट[75] झीन[76]।
मानहु सुरसरिता[77] बिमलजल उछरत जुग मीन[78]।। 28।।

नयन वर्णन

अजौं तरयौंना[79] हीं रहयौ श्रुति सेवत[80] इक रंग[81]।
नाक-बास बेसरि[82] लहयौ बसि मुकुतनु[83] कैं संग।। 29।।

सत्संग की महिमा

बन-बाटनु[84] पिक-बटपरा[85] लखि बिरहिनु मत मैं न।
कुहौ[86] कुहौ कहि कहि उठैं करि करि राते[87] नैन।। 30।।

नायिका द्वारा नायक को परदेश जाने से रोकने का प्रयत्न

संगति दोषु[88] लगै सबनु[89] कहे ति साँचे[90] बैन[91]।
कुटिल[92]-बंक[93]-भ्रुव[94]-सँग भए कुटिल बंक-गति नैन।। 31।।

संगति दोष

---

64. आज भी (अब भी), 65. रचा या बनाया गया 66. व्याकुल हो जाती हैं 67. सुंदर, चमकीले 68. धूप 69. सुबह 70. दीर्घायु 71. जोड़ी 72. कमतर 73. वृषभानु तनया (राधा) 74. अनुज का भाई 75. वस्त्र 76. पतला महीन 77. देवनदी, गंगा 78. मछली 79. इसके दो अर्थ हैं: क अधोवर्ती और ख एक विशेष प्रकार का कर्णाभूषण (ताटंक या तालपर्ण) 80. सेवा करते हुए 81. एक निष्ठ भाव से 82. इसके दो अर्थ है: (क) नाक का विशेष प्रकार का आभूषण (ख) वेसरी खच्चरी खचरी अर्थात निकृष्ट प्राणी 83. इसके भी दो अर्थ है: (क) मुक्त जन (मोक्ष प्राप्त मनुष्य) (ख) मोती, 84. वन मार्गों में 85. कोयल रूपी डाकू 86. कोयल की आवाज के लिए प्रयुक्त है 87. लाल, 88. साथ का दोष 89. सबको 90. सत्य, 91. वचन 92. टेढ़ी आकृति वाली 93. वक (उल्टे स्वभाव वाली) 94. भृकुटी

NMDC-067

नर की अरू[95] नल-नीर[96] की गति एकै करि जोइ[97]।
जेती नीचौ है चलै तेतौ[98] ऊँचौ होइ। ।। 32 ।।

मनुष्य और जल की तुलना

बढ़त बढ़त संपति-सलिलु[99] मन-सरोजु[100] बढ़ि जाइ।
घटत घटत सु न फिरि घटै, बरु[101] समूल[102] कुम्हिलाइ[103] ।।33 ।।

संपत्ति का गुण अवगुण

आवत जात न जानियतु[104], तेजहिं[105] तजि सियरानु[106]।
घरहँ[107] जँवाई[108] लौं घट्यौ खरौ[109] पूस-दिन-मानु[110] ।। 34 ।।

ससुराल में रहने वाले जमाता का वर्णन

कनकु[111] कनक[112] तैं सौगुनी मादकता[113] अधिकाइ।
उहिं खाऐं बौराइ[114], इहिं पाऐं हीं बौराइ ।। 35 ।।

सोने का गुण

नई लगनि[115], कुल की सकुच[116] बिकल[117] भई अकुलाइ[118]।
दुहूँ ओर ऐंची[119] फिरति, फिरकी[120] लौं दिनु जाइ ।। 36 ।।

नायिका की दशा

संगति सुमति[121] न पावेही परे कुमति[122] कैं धंध[123]।
राखौ मेलि कपूर मैं हींग न होइ सुगंध ।। 37 ।।

कुमति और सुमति का प्रभाव

रनित[124] भृंग घंटावली[125], झरित[126] दान मधु नीरू[127]।
मंद मंद आवतु चल्यौ कुंजरू[128] कुंज समीरू[129] ।। 38 ।।

वसंत

बसै बुराई जासु तन ताही कौ सनमानु[130]।
भलौ भलौ कहि छोड़ियै, खोटैं[131] ग्रह जपु, दानु ।। 39 ।।

समाज का यथार्थ

---

95. और 96. फुहारे के नल का पानी 97. देखना या समझना 98. उतना ही 99. संम्पति रूपी जल 100. मन रूपी कमल 101. वरन्, प्रत्युत 102. जड़ सहित 103. मलिन होता है 104. जानने में 105. तेज, चमक, सौंदर्य 106. शीतल हो गया, 107. घर का (ससुर के घर से संबंध है) 108. दामाद 109. भली प्रकार 110. पस के दिन का मान 111. धतूरा 112. सोना, 113. मतवाला बनाने की शक्ति 114. पागल होना, 115. नया प्रेम संबंध 116. लज्जा 117. व्याकुल 118. उद्विग्न होती है 119. खिंची हुई, 120. काठ वा मोटे कागज के गोल टुकड़े में दो छेद करके बना हुआ खेल का सामान जो धागे को खींचने से इधर उधर घूमता रहता है 121. अच्छी बुद्धि 122. दुर्बुद्धि 123. प्रपंच 124. गूँजते हुए 125. घंटों की पंक्ति 126. झड़ना 127. मकरंद रूपी मद 128. हाथी 129. वायु 130. सम्मान 131. बुरे

NMDC-067

बड़े न हूजै गुननु बिनु बिरद बड़ाई[132] पाइ। कहत धतुरे सौ कनकु गहनौ[133] गढ़यौ[134] न जाइ।। 40।।	नाम गुण का पर्याय नहीं
घरू घरू डोलत दीन है, जनु जनु जाचतु[135] जाइ। दियैं लोभ चसमा चखनु लघु पुनि बड़ौ लखाइ।। 41।।	लोभ की निंदा
बैठि रही अति सघन बन, पैठि सदन-तन[136] माँह। देखि दुपहरी[137] जेठ[138] की छाँहौ[139] चाहति छाँह।। 42।।	ग्रीष्म ऋतु
नहिं परागु[140] नहिं मधुर मधु[141], नहिं बिकासु इहिं काल। अली, कली[142] ही सौं बँध्यौ, आगै कौन हवाल[143]।।43।।	मुग्धासक्त को शिक्षा
दृग उरझत[144], टूटत कुटुम[145] जुरत[146] चतुर चित प्रीति। परति गाँठि[147] दुरजन हियै[148] दई[149], नई, यह रीति[150]।।44।।	प्रेम चित्रण
दीरघ[151] साँस न लेहु दुख, सुख साईं[152] हिं न भूलि। दई दई क्यौं करतु, है, दई दई[153] सु कबूलि[154]।। 45।।	विपत्ति में धैर्य
सीतलताउरू[155] सुबास[156] कौ घटै न महिमा-मूरू[157] पीनस[158] बारैं जौं तज्यौ सोरा[159] जानि कपूरू।। 46।।	गुण की महत्ता
दियौ सु सीस चढ़ाइ लै आछी[160] भाँति अएरि[161]। जापैं[162] सुखु चाहतु लियौ ताके दुखहिं न फेरि।। 47।।	विपत्ति का सामना

---

132. प्रशंसा सूचक नाम का बड़प्पन पाकर 133. आभूषण 134. गढ़ना, बनाना 135. माँगते हुए, याचना करते हुए 136. तन रूपी घर 137. दोपहर 138. ज्येष्ठ माह 139. छाया, 140. पुष्प-रज या जवानी की रंगत 141. शहद या मकरंद 142. कली (अपरिपक्व) 143. हाल, स्थिति 144. आपस में गुथते हैं या मिलते हैं 145. कुटुंब, परिवार 146. जुड़ता है, 147. ईर्ष्या 148. दुर्जन के हृदय में 149. दैव 150. परिपाटी, परंपरा, 151. दीर्घ (लम्बी) 152. परमात्मा, ईश्वर 153. दिया है 154. स्वीकार करना 155. ठंडक 156. सुगंध 157. जड़ 158. एक प्रकार का नाक का रोग जिसमें रोगी को गंध का अनुभव नहीं होता है, 159. शोरा (एक खनिज) 160. अच्छी तरह 161. अंगीकार करके 162. जिससे

NMDC-067

कहति न देवर[163] की कुबत[164] कुल-तिय[165] कलह[166] डराति[167]।
पंजर-गत[168] मंजार-ढिग[169] सुक ज्यौं सूकति[170] जाति।। 48।।

स्त्री की दुविधा

संपति केस[171], सुदेस[172] नर नवत[173] दुहुने इक बानि[174]।
विभव[175] सतर कुच[176], नीच नर नरम बिभव की हानि।। 49।।

श्रेष्ठ और नीच पुरूष की तुलना

कोरि[177] जतन कोऊ करौ, परै न प्रकृतिहिं[178] बीचु।
नल-बल[179] जलु ऊँचै चढै, अंत नीच कौ नीचु।। 50।।

विरह से उत्तप्त नायिका

गुनी गुनी[180] सबकैं कहैं निगुनी[181] गुनी न होतु।
सुन्यौ कहूँ तरू अरक[182] तैं अरक[183] समानु उदोतु[184]।। 51।।

केवल कहने मात्र से कोई गुणी नहीं हो जाता

दुसह[185] दुराज[186] प्रजानु[187] कौं क्यौं न बढै दुख-दंदु[188]।
अधिक अँधेरौ जग करत मिलि मावस[189] रबि चंदु।। 52।।

प्रजा का दुख

दिन दस आदरू[190] पाइ कै करि लै आपु बखानु[191]।
जौ लगि काग[192] सराधपखु[193] तौ लगि तौ सनमानु।। 53।।

अगुणी व्यक्ति का सम्मान

मुड़[194] चढ़ाये ऊ रहै परयौ पीठि कच भारू[195]।
रहै, गरै[196] परि, राखिबौ तऊ हियै पर हारू[197]।। 54।।

अयोग्य पुरूष का सम्मान

इक भीजै[198] चहलैं[199] परै बूड़ैं[200] बहै हजार।
किते न औगुन[201] जग करै बै[202] नै[203] चढ़ती बार[204]।। 55।।

युवावस्था

---

163. पति का छोटा भाई 164. बुरी बात 165. कुलीन स्त्री 166. झगड़ा 167. डरती है 168. पिंजड़े में पड़े हुए 169. बिल्ले के समीप स्थित 170. सूखती है, 171. केश, बाल 172. उच्च पद वाले 173. झुकते हैं, 174 प्रकृति, ढंग 175. वैभव, ऐश्वर्य 176. स्तन 177. कोटि 178. मूल स्वरूप या स्वभाव 179. नल (फुहारे) के बल या जोर से 180. गुणवान 181. बिना गुणों वाला 182. मदार का पेड़, 183. सूर्य 184. प्रकाश 185. असहनीय 186. बुरा या खराब राज (शासन) 187. प्रजा का 188. दुखों का द्वन्द्व, दुखों की वृद्धि या उत्कर्ष 189. अमावस्या 190. आदर, सम्मान 191. आत्मश्लाघा, खुद की बड़ाई 192. कौवा 193. श्राद्धपक्ष, पितृपक्ष 194. सिर पर 195. बालों का समूह 196. गले में 197. हार (गले का आभूषण), 198. भीग जाते हैं 199. कीचड़ में फंस जाते हैं 200. डूब जाते हैं 201. अवगुण, अपराध 202. वय, अवस्था 203. नदी 204. समय कम,

NMDC-067

तंत्री[205] नाद, कबित्त रस[206], सरस राग[207], रति रंग[208]।
अनबड़े[209] बूड़े[210] तरे[211] जे बूड़े सब अंग।। 56।।

अधकचरे ज्ञान और पूर्ण ज्ञान का फर्क

गिरि[212] तैं ऊँ रसिक-मन मूड़े जहां हजारू।
बहै सदा पमु नरनु[213] कौ प्रेम पयोधि[214] पगारू[215]।। 57।।

प्रेम का स्वाद

जद्यपि सुंदर सुघर[216], पुनि सगुनौ दीपक देह।
तऊ प्रकासु करै तितौ, भरियै जितैं सनेह[217]।। 58।।

नायक से स्नेह

---

205. *वीणा आदि का मधुर स्वर* 206. *काव्य का स्वाद* 207. *मधुर गाना, रसीला गाना,* 208. *प्रीति का या स्त्री-संग का आनंद* 209. *अधबूड़े: आधा डूबे* 210. *डूबे हुए* 211. *बन गये, पार हो गए* 212. *पहाड़* 213. *नर या मनुष्य* 214. *प्रेम रूपी सागर* 215. *छिछली खाई, गड़हा* 216. *सुंदर गठन वाली, अच्छी शरीराकृति वाली* 217. *इसके दो अर्थ है क) प्रेम ख) तेल।*

NMDC-067

घनानंद

घनानंद रीतिकालीन स्वच्छंद काव्यधारा के ही नहीं बल्कि समूचे हिन्दी साहित्य के भी महत्वपूर्ण कवि हैं। उनकी अपनी विशिष्ट पहचान है। उन्होंने रीतिकालीन कविता की जड़ता को पहचाना और अपने साहित्य में उसका रचनात्मक प्रतिरोध किया। उनकी निम्नलिखित उक्ति इसी चिंता को स्वर देती है:

लोग हैं, लागि कवित्त बनावत
मोहि तौ मेरे कवित्त बनावत।

घनानंद का जन्म सन् 1683 ई० में और मृत्यु सन् 1760 ई० में अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण के कारण हुई। यह तथ्य आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र और डॉ० मनोहर लाल गौड़ द्वारा भी समर्थित है।[1] घनानंद का मुगल दरबार से घनिष्ठ संबंध था। वह मुगल शासक मुहमद शाह रंगीले के मीर मुंशी थे। मुगल दरबार की एक प्रसिद्ध नर्तकी सुजान से उनके प्रेम के किस्से चर्चित हैं। इसी नर्तकी की वजह से उन्हें दरबार से निकाला भी गया था। प्रेम की निराशा ने उन्हें विरक्त कर दिया और वह वृंदावन चले गए और निबार्क संप्रदाय में दीक्षित हो गये।

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने घनानंद ग्रंथावली की भूमिका में स्पष्ट रूप से इन्हें निंबार्क संप्रदाय में दीक्षित होना स्वीकार किया है। वह इनके गुरू के रूप में श्री वृंदावन देव का उल्लेख करते हैं और घनानंद की परवर्ती रचनाओं के हवाले से इनका सखी नाम 'बहुगुनी' होना भी बताते हैं।

इस प्रकार घनानंद ने प्रेम की निराशा को नितांत वैयक्तिकता की सीमा से बाहर निकाल कर उसका उदात्तीकरण कर दिया है। उनका समूचा साहित्य इसंका साक्षी है। इनकी रचनाओं की कुल संख्या 40 के आस-पास है।

घनानंद का संगीत से अच्छा परिचय सिद्ध है। किशनगढ़ से प्राप्त चित्र में उनकी प्रशस्ति में 'गान कला में अति कुशल' लिखा है। चित्र में इन्हें सितार लिए हुए वीरासन में बैठा दिखाया गया है। उनकी रचनाओं में भी संगीत का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है।

---

1. घनानंद ग्रंथावली की भूमिका तथा हिन्दी साहित्य का अतीत भाग-2. पृ० 372-373 (आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र) और घनानंद और स्वच्छंद काव्यधारा पृ० 312 (डॉ मनोहर लाल गौड़)।

घनानंद ने अपनी कविताओं द्वारा प्रेम को निश्चित रूप से दिव्य भूमि प्रदान की है। डॉ० सत्यप्रकाश मिश्र ने उचित ही लिखा है- प्रेम की पीर की रचनात्मक परिणति ही घनानंद की कविता है, क्योंकि उनकी कविता ने ही उन्हें निर्मित किया है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में घनानंद की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है- इनकी सी विशुद्ध, सरस और शक्ति-शलिनी ब्रजभाषा लिखने में और कोई कवि समर्थ नहीं हुआ, विशुद्धता के साथ प्रौढ़ता और माधुर्य भी अपूर्व है। विप्रलंभ शृंगार ही अधिकतर इन्होंने लिया है। ये वियोग शृंगार के प्रधान मुक्तक कवि हैं। प्रेम की पीर लेकर ही इनकी वाणी का प्रादुर्भाव हुआ। प्रेम मार्ग का ऐसा प्रवीण और धीर पथिक तथा जबादानी का ऐसा दावा रखने वाला ब्रजभाषा का दूसरा कवि नहीं हुआ।

घनानंद कवित्त के संकलनकर्ता श्री ब्रजनाथ ने निम्नलिखित सवैया में घनानंद की कविता समझने वाले (भावक) में कुछ गुणों की अपेक्षा की है। इससे घनानंद के कवि व्यक्तित्व का भी सम्यक् उद्घाटन होता है-

नेही महा ब्रजभाषा- प्रबीन और सुंदरतानि के भेद को जानै
जोग-बियोग की रीति मैं कोबिद भावना भेद स्वरूप को ठानै।
चाह के रंग में भीज्यौं हियो, बिछुरे मिलें प्रीतम सांति न मानै।
भाषा प्रवीन सुछंद सदा रहै सो घन जी के कबित्त बखानै।।

अत्यंत प्रेमी, ब्रजभाषा प्रवीण, सौंदर्य के भेदोपभेदों को जानकार, संयोग और वियोग की रीति में पारंगत, भावना के तिभेदों का हृदयगंम कर समझने वाला, चाह (प्रेम) रे रंग में जिसका हृदय भींग चुका हो, प्रियंतम के मिलने-बिछुड़ने पर उसे पाने की उतावली वाला भाषा-प्रवीण और जीवन व काव्य के रूढ़िगत बंधनों को स्वीकार न करने वाला ही कोई व्यक्ति घनानंद की कविताई की प्रशंसा में समर्थ हो सकता है।

संकलन में घनानंद के 25 पद दिए गये हैं। इनको पढ़कर आप कवि के रचना-सामर्थ्य से अच्छा परिचय प्राप्त कर सकेंगे। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से कुछ पदों के बारे में उपयोगी संकेत दिए जा रहे हैं-

---

2. मध्यकालीन काव्यधाराएं (भाग दो) पृ० 21

पद संख्या 1 में कवि ने प्रेमिका का सौंदर्य वर्णन किया है। सौंदर्य-वर्णन के क्रम में ही वह नेत्र, मुख, भाल, हँसी, दाँत, वाणी और गति की मुद्रा की चर्चा करता है।

पद संख्या 2 में भी सौंदर्य वर्णन है। इसमें मुख, नेत्र, वाणी के साथ-साथ लट, मुक्तामाला का भी वर्णन है। रूप का हृदय पर पड़ने वाला प्रभाव ही कवि के ध्यान में रहा है।

पद संख्या 3 में कवि ने विरह वर्णन किया है। इसमें स्मृति दशा के चित्र हैं। यह गोपी का विरह है, उसने सुजान श्रीकृष्ण को संयोग दशा में जिस रूप में देखा है वियोग में वह उसे ही याद करता है।

पद संख्या 4 में कवि ने प्रिय के रूप की खूबियों और प्रेमी के नेत्रों के स्वभाव की चर्चा की है। प्रिय का रूप ऐसा है कि ज्यों ज्यों उसे देखा जाता है हर बार नया-नया ही दिखाई पड़ता है। प्रेमी के नेत्रों का स्वभाव ऐसा है कि, वे अन्यत्र तृप्त ही नहीं होते हैं। प्रेमी उस रूप पर रीझ गया है, उसने उस पर अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया है। प्रेमी ने सब कुछ अपने प्रिय के भरोसे छोड़ दिया। उसका प्रिय जो चाहे करे।

पद संख्या 7 में कवि ने विरह की स्थिति का मार्मिक वर्णन किया है।

पद संख्यां 8 में कवि ने प्रिय की प्रेम में प्रतिकूलता का वर्णन किया है। प्रिय अपने प्रेमी की ओर से उदासीन है, जबकि प्रेमी लगातार अपना प्रेम जता रहा है। कवि ने अपनी बात का अंत चेतावनी भरे अंदाज में किया है। वह एक प्रसिद्ध कहावत 'किसी को दुखी करने वाला चैन से नहीं रहा पाता है' को उद्धृत कर अपना पक्ष रखता है।

पद संख्या 12 में कवि ने विषम प्रेम दशा का चित्र उपस्थित किया है। प्रिय और प्रेमिका के यहाँ विपरीत स्थितियाँ हैं। प्रिय के यहाँ सुखों की भरमार है, नए-नए प्रेमी उसके प्रेम में फंसते रहते हैं, जबकि प्रेमिका के यहाँ दुख का अंधकार है। प्रिय के यहाँ, आनंदोत्सव की स्थिति है, इसके उलट प्रेमिका के यहाँ उजाड़ की स्थिति है। इस तरह कवि ने विषम प्रेम की मार्मिक व्यंजना की है।

पद संख्या 14 में कवि ने वियोग दशा और प्रकृति के संबंध को स्पष्ट किया है। वियोग में सभी सुखदायी वस्तुएँ दुखद हो जाती हैं। घनानंद ने इसे प्रामाणिकता के साथ व्यक्त किया है। कोयल, चातक और बादल सभी विरहिणी का कष्ट बढ़ा रहे हैं। पद संख्या 15 में भी ऐसी ही अभिव्यक्ति हुई है। वियोग में चातक का बोलना और भी कष्ट देने वाला है। यह कष्ट तब और बढ़ जाता है, जबकि वह अचानक

आधी रात को **बोलने** लगता है। इस तरह **घनानंद वियोग दशा को उसके** समूचे मर्म के साथ उपस्थित करते हैं। पद संख्या 16 में कवि ने विषम प्रेम की चर्चा की है। प्रिय उदासीन है और प्रिय एकनिष्ठ है। घनानंद के प्रेम का अनुभव भी ऐसा ही था। उन्हें अपने प्रेम का प्रतिदान नहीं मिला था। पद संख्या 17 में कवि ने प्रेम के संयोग और वियोग, दोनों अवस्थाओं को एक साथ उपस्थित किया है। पद संख्या 19 में घनानंद ने प्रिय की अनुकूलता को दुर्लभ बताते हुए उदाहरणों द्वारा अपनी बात कही है। पद संख्या 22 में कवि ने प्रेम की दिव्य भूमि प्रस्तूत की है। प्रेमी ने अपने प्रिय को अगाध प्रेम दिया है। लेकिन बदले में उसे कुछ भी नहीं मिला हैं, फिर भी वह विचलित नही है। इसे वह अपनी नियति मानता है और अपने प्रिय के कुशल प्रेम की कामना करता है। यह प्रेम की उदात्त भूमि है। प्रेम का सच्चा आदर्श है।

पद संख्या 24 में भी कवि ने प्रेम के आदर्श रूप को ही अभिव्यक्ति दी है। विरही केवल प्रिय के लिए जी रहा है, फिर भी प्रिय उसकी ओर उन्मुख नहीं होता है। पद संख्या 25 में घनानंद ने 'प्रेम मार्ग' की विशेषताओं का वर्णन किया है। उनके अनुसार अत्यंत सीधा है, इसमें जरा भी टेढ़ापन नहीं है। इस मार्ग पर सच्चे ही अपनापना छोड़कर चल सकते हैं; जो संशकित हैं उनके लिए यह मार्ग नहीं है। इस प्रकार कवि 'प्रेम मार्ग' को उत्सर्ग का मार्ग घोषित करता है।

घनानंद कवित्त

लाजनि लपेटि चितवनि भेद भाय[1] भरी
        लसति[2] ललित[3] लोल[4] चख[5] तिरछानि मैं।
छबि को सदन गोरो भाल बदन[6], रूचिर[7]
        रस निचुरत मीठी मृदु मुसक्यानी मैं।
दसन[8] दमक फैलि हमें मोती माल होति,
        पिय[9] सों लड़कि[10] पेम पगी[11] बतरानि[12] मैं।
आनंद की निधि जगमगति छबीली बाल,
        अगनि अनंग रंग[13] ढुरि मुरि[14] जानि मैं।। 1।।

प्रेमिका का सौंदर्य वर्णन

झलकै[15] अति सुन्दर आनन[16] गौर[17], छके दृग[18] राजत काननि[19] छ्वै[20] ।
हँसि बोलन मैं छबि फूलन की बरषा[21], उर[22] ऊपर जाति है है।
लट[23] लोल कपोल[24] कलोल[25] करै, कल-कंठ[26] बनी जलजावलि[27] द्वै।
अंग अंग तरंग उठै दुति[28] की, परिहे मनौ रूप अबै धर[29] च्वै[30] ।। 2।।

सौंदर्य वर्णन

वहै मुसक्यानि[31], वहै मृदु बतरानि[32], वहै
        लड़कीली[33] बानि[34] आनि उर मैं आरति[35] है।
वहै गति[36] लैन औ बजावनि ललित बैन[37],
        वहै हँसि दैन, हियरा तें न टरति[38] है।
वहै चतुराई सों चिताई[39] चाहिबे[40] की छबि,
        वहै छैलताई[41] न छिनक[42] बिसरति[43] है।
आनंदनिधान[44] प्रानप्रीतम सुजानजू की
        सुधि[45] सब भाँतिन सों बेसुधि[46] करती है।। 3।।

स्मृति दशा

---

1. रहस्यमय भाव, गूढ़ भाव, 2. दिखना 3. सुंदर 4. चंचल 5. आँख 6. मुख 7. सुंदर 8. दाँत 9. प्रिय, प्रेमी 10. ललककर, उत्साहित होकर 11. प्रेम मे मग्न हुई 12. बातें करती है 13. कामजन्य रंग 14. मुड़ जाने या घूम जाने में 15. दिखाई पड़ता है, झलकता है, 16. मुख 17. गौर वर्ण 18. नेत्र 19. कानों को 20. छूकर 21. वर्षा (बरसात) 22. हृदय 23. बाल के किनारे या माथे से नीचे की ओर आने वाले बाल 24. गाल (कपोल) 25. हिलती हैं या खेलती हैं 26. सुंदर ग्रीवा (गला) 27. मोतियों की माला, 28. आभा, प्रकाश, चमक 29. धरा, पृथ्वी 30. चू पड़ेगा या गिर पड़ेगा, 31. मुस्कान 32. बातें करना, 33. ललकवाली (उत्साह वाली) 34. मुद्रा स्वरूप 35. अड़ती है 36. वेग, 37. बांसुरी 38 टलना, दूर होना 39. चैतन्य की हुई, जगी हुई 40. देखने की 41. रंगीलापन,42. क्षण मात्र 43. भूलना 44. आनंदकोष 45. स्मृति 46 बेहोशी, विस्मृति,

NMDC-067

रांवरे रूप की रीति अनूप[47] नयो[48] नयो लागत ज्यौं ज्यौं निहारियै[49]।
त्यौं इन आँखिन बानि अनोखी, अघानि[50] कहूं नहिं[51] आनि[52] तिहारियै।
एक ही जीव हुतौ सु तौ वार्‌यो[53] सुजान संकोच औ सोच[54] सहारियै[55]।
रोकी रहै न, दहै[56] घनआनंद बावरी[57] रीझि[58] के हाथन[59] हारियै।। 4।।

प्रिय का सौंदर्य

जान[60] के रूप लुभाय[61] कै नैननि[62] बेंचि करी अधबीच[63] ही लौंडी[64]।
फैलि[65] गई घर बाहिर बात सु नीकैं[66] भई इन काज[67] कनौंडी[68]।
क्यौं करि थाह[69] लहै घनआनंद चाह[70] नदी तट ही अति औंडी[71]।
हाय दई![72] न बिसासी[73] सुनै कछु है जग बाजति[74] नेह की डौंडी[75]।। 5।।

प्रेम वर्णन

अधिक बधिक[76] तें सुजान, रीति रावरी है,
कपट चुगौ[77] दे फिरि निपट[78] करौ बुरी[79]।
गुननि[80] पकरि[81] लै, निपाँख[82] करि छारि[83] देहु,
मरहि[84] न जियै, महा विषम दया-छुरी[85]।
हौं न जानौं, कौन धौं ही यामैं[86] सिद्धि स्वारथ की,
लखी क्यौं परति प्यारे अंतरकथा[87] दुरी।
कैसें आसा-द्रुम[88] पै बसेरो[89] लहै प्रान- खग[90],
बनक-निकाई[91] घनआनंद नई जुरी[92]।। 6।।

प्रिय का कपट

---

47. अनुपम, अतुलनीय, 48. नया 49. देखना(दिखिए) 50. तृप्ति, संतुष्टि 51. कहूँ नहिं से अभिप्राय कभी नहीं से है 52. शपथ 53. निछावर करना 54. चिंता 55. सहारा दीजिए, संभालिए 56. जलाती है 57. बावली, पगली 58. खुश होकर, प्रसन्न होकर, 59. हाथों 60. सुजान प्रिय 61. लुब्ध होना, 62. नेत्रों ने 63. बीच में ही 64. दासी 65. खुलना (रहस्य या गुप्त बात का खुलना) 66. भली प्रकार 67. इन नेत्रों के पीछे 68. बदनाम 69. गहराई 70. इच्छा 71. गहरी 72. हे देव 73. विश्वासघाती, धोखेबाज, 74. बजती है 75. डुग्गी, 76. बहेलिया, 77. कपट रूपी चारा 78. अत्यंत 79. गलत करना या बुरा करना 80. रस्सी से, जाल से, गुणों से 81. पकड़कर 82. बिना पंख का 83. छोड़ना 84. मरता है, 85. दया रूपी चाकू 86. इसमें 87 रहस्य कथा 88. आशा रूपी वृक्ष 89. आश्रय लेना 90. प्राण रूपी पक्षी 91. रूप की सजावट, वन की वस्तु (चारा) 92. जुटाकर या जोड़कर,

भोर[93] तें साँझ[94] लौं कानन[95] ओर निहारति[96] बावरी नेकु[97] न हारति।
साँझ तें भोर लौं तारनि[98] ताकिबो[99] तारनि सों[100] इकतार[101] न टारति[102]।
जौ कहूँ भावतो[103] दीठि[104] परै घनआनंद आँसुनि[105] औसर[106] गारति[107]। विरह
मोहन सोहन जोहन[108] की लगियै रहै आँखिन कें उर आरति[109]।। 7।।

भए अति निठुर[110], मिटाय पहचानि[111] डारी,
याही दुख हमैं जक[112] लागी हाय हाय है। प्रिय की प्रतिकूलता
तुम तौ निपट निरदई,[113] गई भूलि सुधि
हमैं सूल[114] सेलति[115] सो क्योंहूं न भूलाय[116] है।

मीठें मीठे बोल[117] बोलि ठगी[118] पहिलें तौ तब
अब जिय[119] जारत[120] कहौ धौं कौन न्याय है।
सुनी है कै नाहीं यह प्रगट[121] कहावति[122] जू
काहू कलपाय[123] है सु कैसे कल[124] पाय[125] है।। 8।।

हीन[126] भएँ जल मीन अधीन[127] कहा कछु मो अकुलानि[128] समानै।
नीर[129] सनेही[130] कों लाय कलंक[131] निरास[132] है कायर[133] त्यागत प्रानै। वियोग
प्रीति की रीति सु क्यो समझै जड़[134] मीत के पानि[135] परै को प्रमानै।
या मन की जु दसा घनआनंद जीव की जीवनि[136] जान[137] ही जानै।। 9।।

---

93. सबेरा 94. *शाम* 95. *वन, कान* 96. *देखती हुई* 97. *जरा भी* 98. *तारों को* 99. *देखती हुई* 100. *तारनि सों का अर्थ यहां आँखों से पुतलियों से है* 101. *एक टक, लगातार* 102. *छोड़ना, टालना* 103. *प्रिय अच्छा लगने वाला,* 104. *दिखाई पड़ना* 105. *आँसुओं से* 106. *अवसर, मौका* 107. *गिर जाता है* 108. देखने की 109. *लालसा* 110. *निष्ठुर* 111. *पहचान (जान-पहचान)* 112. *रट,* 113. *निर्दय(दयाहीन)* 114. पीड़ा 115. *अनुभूति* 116. *विस्मृत होना,* 117. वचन 118. *धोखा दिया* 119. *हृदय, प्राण* 120. *जलाता है* 121. *स्पष्ट, साफ-साफ* 122. कहावत 123. *कष्ट देना* 124. चैन 125. *प्राप्त करना, पाना* 126. *कमजोर* 127. *विवश* 128. *आकुलता* 129. *पानी* 130. *स्नेह करने वाला* 131. *कलंक* 132. *निराश आशारहित* 133. *कायर, डरपोक* 134. *अचेतन,* 135. *हाथों में,* 136. *जिलाने वाली, जीवन देने वाली,* 137. *सुजान प्रेयसी*

जहाँ तें पधारे मेरें नैननि ही पाँव धारे

वारे ये बिचारे प्रान पैंड[138] पैंड पै मनौ।

आतुर न होहु हा हा नेकु फेंट छोरि बैठो

मोहिं वा बिसासौ[139] का है ब्यौरौ[140] बुझिबो[141] घनौ[142]।

हाय निरदई को हमारौ सुधि कैसें आई — वियोग

कौन बिधि दीनी पाती[143] दीन जानि कै भनौ[144]।

झूठ की सचाई छाक्यौ[145] त्यौं हित-कचाई[146] पाक्यौ[147]

ताके गुनगन[148] घनआनंद कहा गनौ।। 10।।

कंत[149] रमै[150] उर अंतर में सु लहै नहीं क्यौं सुखरासि[151] निरंतर।

दंत[152] रहैं गहैं[153] आँगुरी[154] ते जु[155] बियोग के तेह[156] तचे[157] परतंतर[158]। — विरह

जो दुख देखति हौं घनआनंद रैन दिना[159] बिना जान सुतंतर[160]।

जानैं वेई[161] दिन-राति बखाने[162] तें जाय परै[163] दिन-राति को अंतर।। 11।।

सुखनि समाज साज सजे तित[164] सेवैं सदा

जित नित नए हित-फंदनि[165] गसत[166] हौं।

दुख तम पंजनि[167] पठात[168] दै चकोरनि[169] पै — विषम प्रेम

सुधाधर[170] जान प्यारे भलें ही लसत[171] हौ।

जीव सोच सूखै गति सुमिरें अनंदघन

कितहूँ उघरि[172] कहूँ घुरि[173] कै रसत[174] हौ।

उजरनि[175] बसी है हमारी अँखियानि देखौ

सुबस[176] सुदेस जहां भावते[177] बसत हौ।। 12।।

---

138. कदम, डग 139. विश्वासघाती 140. विवरण, हालचाल, समाचार 141. जानना, समझना 142. घना, ढेर सारा 143. पत्र, चिट्ठी 144. ऐसा लगता है, ऐसी संभावना है, 145. छका तृप्त, भरापूरा 146. कच्चापन 147. पका हुआ 148. गुण-समूह, बहुत सारे गुण, 149. प्रिय 150. बसा हुआ 151. सुखों का समूह, सुखों का भण्डार 152. दाँत 153. दबाए हुए या पकड़े हुए 154. अंगुली 155. जो लोग 156. आँच 157. पके 158. परतंत्र 159. रात-दिन 160. स्वच्छंद 161. वे 162. कहने से वर्णन करने से 163. पड़ता है 164. वहाँ (प्रिय जहाँ है) 165. प्रेम का फंदा (जाल) 166. डालते हो 167. दुख रूपी अंधकार का समूह 168. भेजते हो 169. चकोर का बहुवचन (चकोरों) 170. चंद्रमा (के समान) 171. शोभित होना 172. ,हटकर, उचटकर, उद्घाटित होकर 173. घुलकर 174. रस बरसाते हो, 175. उजाड़ 176. अच्छी तरह बसा हुआ 177. भाने वाले (प्रिय)

सुधा[178] तें स्रवत[179] विष फूल मैं जमत[180] सूल[181],
तम[182] उगिलत[183] चंद, भई नई रीति है।
जल जारै अंग, और राग[184] करै सुरभंग[185],
संपति बिपति पारै[186], बड़ी बिपरीति है।
महागुन गहै दोषै औषद[187] हू रोग पोषै[188],
ऐसें जान, रस माहिं, बिरस[189] अनीति[190] है।
दिनन के फेर मोहिं तुम मन फेरि डार्‌यौ,
अहो घनआनंद न जानौ कैसी बीति[191] है।। 13।।

विरह

कारी[192] कूर कोकिला कहाँ को बैर[193] काढ़ति[194] री,
कूकि-कूकि अब ही करेजो किन कोरि लै।
पैडें[195] परे पापी ये कलापी[196] निस[197] द्यौस[198] ज्यौं ही,
चातक घातक त्यौं ही तू हू कान फोरि[199] लै।
आनंद के घन प्रान-जीवन सुजान बिना,
जानि कै अकेली सब घेरौ दल[200] जोरि[201] लै।
जौ लौं करैं आवन[202] बिनोद बरसावन[203] वे,
तौ लौं रे डरारे[204] बजमारे[205] घन घोरि[206] लै।। 14।।

वियोग दशा और प्रकृति

बैरी[207] बियोग की हूकनि[208] जारत[209] कूकि उठै अचकाँ[201] अधरातक[211]।
बेधत[212] प्रान बिना ही कमान सु बान से बोल सों कानहै घातक।
सोचनि ही पचियै[213] बचियै[214] किल डोलत मो तन लाएं महा तक।
वे घनआनंद जाय छए उत पैंडें परयौ इत पातकी चातक।। 15।।

वियोग का बढ़ना

---

178. *अमृत* 179. *टपकता है* 180. *निकलता हैं,* 181. *काँटा* 182. *अंधकार* 183. *उगलता है* 184. *राग* 185. *स्वर भंग* 186. *डालती है,* 187. *दवा,* औषधि 188. *पुष्ट करती है, बढ़ाती है,* 189. *अप्रेम उदासीनता* 190. *अन्याय अनैतिक* 191. *बीतता है (समय कैसे गुजरता है)* 192. *काली* 193. *शत्रुता, बदला* 194. *निकालती है* 195. *पीछे पड़े हैं* 196. *मयूर (मोर)* 197. *रात* 198. *दिवस दिन* 199. *फोड़ डालना* 200. *सेना* 201. *जोड़कर, जुटाकर* 202. *आने में* 203. *सुख देने वाले, आनंद की वर्षा करने वाले* 204. *भयंकर, डरावने* 205. *वज्र मारने वाला, वज्र का मारा हुआ, जो वज्र के मारने पर भी न मरे, परम दुष्ट* 206. *गर्जन कर ले,* 207. *शत्रु (चातक के लिए प्रयुक्त है)* 208. *पीड़ा से* 209. *जलाता है,* 210. *अचानक* 211. *आधी रात को* 212. *बीधंते हैं* 213. *परेशान होती हूँ* 214. *बचाव (कैसे किया जायें)*

NMDC-067

जासों प्रीति ताहि निठुराइ सी निपट नह
कैसे करि जिय की जरनि[215] सो जताइयै[216]।
महा निरदई दई कैसें कै जिवाऊँ जीव,
बेदन[217] की बढ़बारि[218] यहां लौं दुराइयै[219]।
दुख को बखान[220] करिबै कौं रसना[221] कै होति,
ऐपै[222] कहूँ वाको मुख देखन न पाइयै।
रैन दिन चैन को न लेस कहूँ पैये भाग,
आपने ही ऐसे दोष काहि धौं लगाइयै।। 16।।

प्रेमी की निष्ठुरता

तब तौ छबि पीवत[223] जीवत हे, अब सोचन लोचन[224] जात जरे।
हित[225] पोष[226] के तोष[227] सु प्रान पले, बिललात[228] महा दुख दोष भरे।
घन आनंद मीत[229] सुजान बिना सब ही सुख-साज-समाज टरे।
तब हार[230] पहार[231] से लागत हे अब आनि कै बीच पहार परे।। 17।।

संयोग वियोग का एकसाथ चित्रण

आसा गुन[232] बाँधि कै भरोसो सिल[233] धरि छाती[234]
पूरे पन-सिंधु[235] मैं ने बूड़त सकायहौं[236]।
दुख-दव[237] हिय जारि अंतर[238] उदेग आंच[239]
रोम रोम त्रासनि[240] निरन्तर तचायहौं[241]
लाख-लाख भांतिन की दुसह[242] दसानि[243] जानि
साहस सहारि[244] सिर आरै[245] लौं चलायहौं।
ऐसें घनआनंद गही है टेक[246] मन माहिं
ऐरे निरदई तोहि दया उपजायहौं[247]।। 18।।

वियोग

---

215. जलन 216. जताऊँ, बताऊँ 217. पीड़ा, वेदना 218. अधिकता 219. छिपाऊँ, 220. कथन, वर्णन 221. जीभ 222. इतने पर भी 223. पीते हुए, पान करते हुए, 224. नेत्र 225. प्रेम 226. पोषण 227. संतुष्टि, तृप्ति 228. व्याकुल हो रहे हैं 229. मित्र, प्रिय 230. माला (मोतियों की) 231. पहाड़, 232. रस्सी 233. भरोसा रूपी पत्थर 234. छाती 235. प्रेम की प्रतिज्ञा के समुद्र में 236. शंकित नहीं होऊंगी डरुँगी नहीं, 237. दुख की दावाग्नि से 238. भीतर होने वाले 239. उद्वेग या व्याकुलता की आँच (गर्मी) 240. त्रासों से या पीड़ाओं से 241. तपाऊँगी, 242. असहनीय 243. दशाओं, अवस्थाओं 244. संभालकर 245. आरा (लकड़ी चीरने के काम आने वाला एक तेज धार वाला उपकरण) 246. प्रतिज्ञा 247. उत्पन्न करूंगी

NMDC-067

चंद चकोर की चाह करै घनआनंद स्वाति[248] पपीहा[249] कौं धावै।
त्यौं त्रसरैनि[250] के ऐन बसै रबि मीन पै दीन है सागर आवै।
मोसों तुम्हैं सूंनौ ान कृपानिधि नेह निबाहिबो[251] यौं छबि पावै।
ज्यौं अपनी रुचि[252] रा।चि[253] कुबेर सु रंकहि[254] लै निज अंक[255] बसावै।। 19।।

प्रिय की प्रतिकूलता

ज्यौं बुद्धि सो सुघ ई[256] रचै कोऊ सारदा[257] कों कबिताई[258] सिखाव।
मूरतिबंत[259] महालछमी-उर[260] पोत हरा[261] रचि लै पहिरावै।
रागबधू[262]-चित चोरन के हित सोधि सुधारि कै तानहि गावै।
त्यौं ही सुजान तियै घनआनंद मो जिय-बौरई रीति[263] रिझावै[264]।। 20।।

प्रेम दशा

तेरे देखिबे कों सबही त्यों अनदेखी करी,
तू हू जौ न देखे तौ दिखाऊँ काहि गति रे
सुनि निरमोही एक तोही सों लगाव[265] मोही,
सोही कहि कैसें ऐसी निठुराई अति रे।
बिष सी कथानि मानि सुधा पान करौं जान
जीवन निधान है बिसासी मारि[266] मति[267] रे।
जाहि जो भजै सो ताहि तजै घनआनंद क्यों,
हति[268] कै हितूनि[269] कहौ काहू पाई पति[270] रे?।। 21।।

प्रिय की प्रतिकूलता

इत बाँट[271] परी सुधि, रावरे भूलनि कैसें उराहनो[272] दीजियै जू।
अब तौ सब सीस चढ़ाय लई जु कछू मन भाई[273] सु कीजियै जू।
घनआनंद जीवन प्रान सुजान तिहारियै बातनि जीतियै[274] जू।
नित नीके[275] रहौ तुम्हैं चाड़[276] कहा पै असीस[277] हमारियौ लीजियै जू।। 22।।

प्रेम की दिव्य भूमि

---

248. *स्वाति नक्षत्र* 249. *पपीहा (पक्षी)* 250. *त्रसरेणु-छेद में से होकर आती धूप में चमकने वाला विशेष कण (पुराणों में सूर्य की एक पत्नी त्रसरेणु भी है)* 251. *निर्वाह करना*, 252. *इच्छा से पसंद से* 253. *अनुरक्त होकर* 254. *निर्धन को, दरिद्र को* 255. *गोद* 256. *चतुराई* 257. *शारदा, सरस्वती (विद्या की अधिष्ठात्री देवी)* 258. *काव्य करना* 259. *मूर्तिमती* 260. *महालक्ष्मी (संपत्ति की अधिष्ठात्री देवी) के गले के* 261. *काँच के दानों (गुटियों) की माला*, 262. *रागिनी राग रागिनियों की अधिष्ठात्री देवी* 263. *मन के पागलपन का रीति* 264. *वश में करना* 265. *अनुराग, प्रेम संबंध* 266. *मारना, प्राण लेना* 267. *नहीं* 268. *मारकर* 269. *शुभेच्छुओं या हित चाहने वालों को* 270. *प्रतिष्ठा, सम्मान*, 271. *हिस्से में* 272. *उलाहना* 273. *भाए या अच्छा लगे*, 274. *जीना है* 275. *कुशल से अच्छे से* 276. *प्रबल-इच्छा, उत्कंठा* 277. *मंगलकामना*

ए रे वीर पौन[278], तेरो सबै ओर गौन[279], बीरी[280]।
तो सो और कौन मनैं ढरकौंही[281] बानि दै।
जगत के प्रान ओछे[282] बड़े सों समान घन
आनंद निधान सुखदान[283] दुखियानि दै।
जान उजियारे गुन भारे[284] अंत मोही प्यारे
अब है अमोही[285] बैठे पीठि पहिचानि दै। विरह व्यथा
बिरह बिथाहि[286] मूरि आँखिन मैं राखौं पूरि
धूरि तिन पायन की हाहा! नेकु आनि दै।। 23।।

एकै आस[287] एकै बिसवास प्रान गहैं बास,
और पहिचानि इन्हैं रही काहू सौंन है।
चातिक लौं चाहै घनआनंद तिहारी ओर
आठौ जामं[288] नाम लैं बिसारि दीनी मौन है। प्रेम का आदर्श रूप
जीवन अधार जान सुनियै पुकार नेकु
अनाकानी[289] दैबो दैया घाय[290] कैसो लौन है।
नेह-निधि[291] प्यारे गुन-भारे है न रुखे[292] हूजै।
ऐसो तुम करौ तौ बिचारन[293] कें कौन है।। 24।।

अति सूधो[294] सनेह को मारग[295] है जहाँ नेकु[296] सय नप[297] बाँक[298] नहीं।
तहाँ साँचे चलें तजि आपनपौ[299] झझकैं[300] कपटी[301] जे निसाँक[302] नहीं।
घनआंनद प्यारे सुजान सुनौ यहाँ एक तें दूसरी आँक[303] नहीं। प्रेम की सरलता
तुम कौन धौं पाटी[304] पढ़े हौ कहौ मन[305] लेहु पै देहु छटाँक[306] नहीं।। 25।।

---

278. पवन वायु, 279. गमन, पहुँच 280. वीणा उठाने वाला 281. ढलने वाला 282. छोटे 283. सुख से सुखी कर (दुखियों को) 284. गुणों की वजह से महत्वशाली, 285. निर्मोही 286. विरह व्यथा (विरह से उपजा कष्ट) 287. आशा, उम्मीद 288. प्रहर (तीन घंटे का एक प्रहर होता है) 289. आनाकानी करना, पुकार न सुनना 290. घाव, चोट 291. स्नेह, समुद्र 292. उदास, चिकनाहट से रहित 293. बेचारों, असहायों 294. सीधा, सरल 295. मार्ग, रास्ता 296. जरा भी, कही भी 297. सयानापन, चतुरता 298. टेढ़ा, बंक 299. अपनापा, अपनत्व 300. हिचकते हैं 301. छली, बुरे आचरण वाले, 302. निशंक, शंकामुक्त 303. एक ही रेखा, एक ही अंक, एक ही निश्चय 304. पट्टी, शिक्षा, 305. हृदय, एक मन (40 सेर) 306. थोड़ा, सेर का सोलहवां भाग, शोभा की एक झलक।

NMDC-067

पद्माकर

पद्माकर रीतिबद्ध कवियों में अंतिम ख्यातिप्राप्त कवि हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक 'जगद्विनोद' में अपने बारे में महत्वपूर्ण जानकारी दी है-

भट्ट तिंलगाने को बुंदेलखण्डवासी नृप, सुजस-प्रकासी पदुमाकर सुनाभा हौं।
जोरत कवित्त छंद छप्पय अनेक भांति, संस्कृत प्राकृत पढ़ो जुगुनग्रमा हौं।
हम रथ पालकी गयंद गृह ग्राम चारू, आखर लगाय लेत लाखन की सामा हौं।
मेरे जान मेरे तुम कान्ह हौ जगतसिंह तेरे जात्र तेरो वह विप्र मैं सुदामा हौं।।

उपर्युक्त विवरण से पद्माकर के समय में कवियों की समाज में स्थिति पर भी स्पष्ट प्रकाश पड़ता है। साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि कवि व्यक्तित्व के निर्माण में किन कारकों की भूमिका थी।

पद्माकर का जन्म सन् 1753 ई० में सागर में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री मोहन लाल भट्ट था। प्रबोध पचासा के अंत में स्वंय पद्माकर ने इस संबंध में निम्नलिखित सूचना दी है-

"इति श्रीबांदावासी मोहनभट्टात्मजकविपद्याकरविरचित प्रबोध पचासा समाप्त:।"

इनका वंश प्रसिद्ध कवीश्वर वंश था। मूलत: इनके पूर्वज तेलंगाना के थे। मथुरा की वैष्णव शाखा से संबद्धता की वजह से मथुरा को पद्माकर का अस्थायी निवास कहा जा सकता है। कविता करना आजीविका थी। कविता ने उन्हें यश, वैभव सब कुछ दिया था। इसे उन्होंने घोषित तौर पर स्वीकार किया है। पद्माकर कविता के शास्त्र से भली-भांति परिचित थे। संस्कृत, प्राकृत, ब्रज, अवधी, फारसी आदि भाषाओं पर उनकी पकड़ थी।

राजकीय-संरक्षण के मामले में पद्माकर समृद्ध कहे जा सकते हैं। उन्हें कई राजाओं व सामंतों का संरक्षण प्राप्त था। नागपुर के महाराजा अप्पा साहब, रघुनाथ राव, जयपुर नरेश महाराजा प्रताप सिंह, सुगरा के अर्जुनसिंह गोसाईं, अनूप गिरि उर्फ हिम्मत बहादुर, ग्वालियर नरेश दौलत राव सिंधिया, दतिया नरेश महाराज परीक्षित का पद्माकर को पर्याप्त प्रोत्साहन मिला था। पद्माकर की रचनाओं में निम्नलिखित कृतियों का उल्लेख किया जाता है-

NMDC-067

हिम्मत बहादुर विरूदावली, पद्माभरण, जगद्विनोद, प्रबोध पचासा, गंगा लहरी, प्रतापसिंह विरूदावली कलि पचीसी, प्रकीर्णक[1] इनमें हिम्मत बहादुर विरूदावली और प्रतापसिंह विरूदावली पद्माकर के आश्रय दाताओं महाराजा हिम्मतबहादुर व महाराज प्रताप सिंह की प्रशास्तियां हैं।, गंगालहरी, गंगा की स्तुति है।, कलि पचीसी, और, प्रबोध पचासा, भक्ति वैराग्य की रचनाएं हैं।, जगद्विनोद, और, पद्माकर, कमशः नायिका भेद, रस और अलंकार के ग्रंथ है। प्रकीर्णक में फुटकल रचनाएं हैं। इस प्रकार पद्माकर ने अपने रचना रस की शुरुआत शृंगार वर्णन से की। बीच में वीर रस के काव्यों का भी प्रणयन किया और अंत भक्ति और वैराग्य की कृतियों से किया। उनकी सभी रचनाओं को आचार्य विश्वनाथ मिश्र ने पद्माकर ग्रंथावली शीर्षक से नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के लिए संपादित किया है।

पद्माकर की मृत्यु सन् 1833 ई० में कानपुर में गंगा के किनारे हुई थी। उनकी मृत्यु कुष्ठ रोग से हुई थी ऐसी संभावना व्यक्त की जाती है।

पद्माकर अपनी परंपरा के अंतिम बड़े कवि हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है। प्रवाहपूर्णभाषा, सवाक् भाव चित्रों के संयोजन के लिए पद्माकर की विशेष ख्याति है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इनकी भाषा की तुलना गोस्वामी तुलसीदास से की है। उन्होंने कवि का सम्यक् मूल्यांकन करते हुए यह भी कहा है कि

> इनकी मधुर कल्पना ऐसी स्वाभाविक और हावभावपूर्ण मूर्ति विधान करती है कि पाठक मानों प्रत्यक्ष अनुभूति में मग्न हो जाता है। ऐसी सजीव मूर्तिविधान करने वाली कल्पना बिहारी को छोड़कर और किसी कवि में नहीं पाई जाती।

प्रस्तुत संकलन में पद्माकर के 25 पद दिए गये हैं। इन पदों को कमशः शृंगार वीर और भक्ति के आधार पर नियोजित किया गया है। इन पदों को पढ़कर आप पद्माकर के कवि के प्रतिनिधिक स्वरूप से परिचित हो सकेंगे। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से कुछ पदों के संबंध में उपयोगी संकेत दिए जा रहे हैं।

पद संख्या 1 व 2 में कवि ने नायिका भेद का उदाहरण दिया है। दोनों ही पद 'जगद्विनोद' शीर्षक प्रसिद्ध काव्य ग्रंथ से लिए गये हैं। यह लक्षण ग्रंथ है। पद संख्या 1 में पद्माकर ने ब्रजबाला (नायिका) के ताल में तैरने की स्थिति की कल्पना 'त्रिवेणी' अर्थात गंगा यमुना और सरस्वती के एक साथ होने की स्थिति के रूप में की है। पारंपरिक रूप से यमुना, गंगा और सरस्वती का रंग कमशः श्याम, श्वेत और लाल माना गया है। पद संख्या 2 में पद्माकर ने नायिका, ऐसी कोमलांगी है कि उसके पांवों में मखमली

---

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 170

बिछौना भी चूमता है। पद संख्या 3 में कवि ने नायिका के नेत्रों की सुंदरता का वर्णन किया है। इसमें पद्‌माकर का कवि-कौशल नायिका के नेत्रों में कृपाण, सैन्य दल, तीर, धनुष, वजीर, सिंहासन आदि की कल्पना करता है।

पद संख्या 4 में कवि ने नायिका के 'तिल' का वर्णन किया है। तिल का सौंदर्य बताते हुए या उसके प्रभाव की चर्चा करते हुए पद्‌माकर ने विभिन्न सादृश्य-विधानों की योजना की है। अंत में कवि तिल के व्यापक प्रभाव की रेखांकित करता है। पद संख्या 6 में कवि ने नायिका के अंगों की आभा को चित्रित किया है। नायिका से लावण्य की लहरें उठती हैं। पद संख्या 7 में कवि ने नायिका के सौंदर्य के उद्‌दीपन प्रभाव को उपस्थित किया है।

पद संख्या 8 में भी कवि ने नायिका की सुंदरता का प्रभाव ही व्यंजित किया है। पद संख्या 9 में पद्‌माकर ने होली खेलते हुए गोपियों का गत्यात्मक चित्र खींचा है। पद्‌माकर की गोपियाँ श्याम रंग (कृष्ण के रंग में) में पूरी तरह डूबी हुई है। पद संख्या 10 में कवि ने वसंत ऋतु के व्यापक प्रभाव का वर्णन किया है। वसंत ऋतुओं का राजा है और शृंगार कवियों का विशेष प्रिय है। कवि ने वसंत को जीवन के प्रत्येक हिस्से में अनुभव किया है। वसंत फूलों में, कलियों में, कछारों में, कुंजों में, क्यारियों में, परागों में, वायु में, पत्तों में, द्वारों में, दिशाओं, देश देशांतर में, गलियों में, ब्रज में, नवेलियों में, वन वेलियों में, वनों में, और बागों में फैला हुआ है। इस तरह कवि ने जीवन पर वसंत ऋतु के व्यापक प्रभाव को उसकी समग्रता में उपस्थित किया है। पद संख्या 12 में कवि ने गोपियों के कृष्ण से फाग खेलने का हृदयग्राही वर्णन किया है। पद्‌माकर की गोपियाँ कृष्ण से फाग के बहाने से छेड़छाड़ करती हैं और उन्हें हंसते हुए फिर से होली खेलने के लिए आमंत्रित भी करती है।

पद्‌माकर की शृंगारिक कविताएं जीवनोत्सव की कविताएं हैं। इन कविताओं में जीवन की उमंग, तरंग और उल्लास के जीवंत चित्र उपलब्ध हैं। विशेषता यह है कि, ये सभी चित्र ताजे और नए हैं।

पद संख्या 17 पद्‌माकर के 'हिम्मत बहादुर बिरूदावली' से उद्‌धृत है। जैसाकि शीर्षक से ही स्पष्ट है इसमें कवि ने अपने संरक्षक महाराजा हिम्मत बहादुर की वीरता का वर्णन किया है। यह वीर रस का काव्य है। इस पद में कवि ने महाराजा हिम्मत बहादुर के युद्ध प्रयाण के समय का वर्णन किया है। इस तरह कवि ने शृंगार के अतिरिक्त वीर काव्य की रचना के सामर्थ्य का स्पष्ट परिचय दिया है। पद पढ़ते ही पता चल जाता है कि वीरता का वर्णन किया जा रहा है।

पहले भी बताया जा चुका है, पद्माकर ने शृंगार और वीर काव्य लिखने के साथ ही अपने जीवन के अंतिम कुछ वर्षों में भक्ति और वैराग्य की रचनाएं भी की थीं। पद संख्या 19, 20, 21 और 22 को प्रमाण के रूप में देखा जा सकता है। पद संख्या 19 'प्रबोध पचासा' से उद्धृत है। इसमें कवि ने भगवान शंकर की स्तुति करते हुए उनके आशुतोष रूप की प्रशंसा की है। इस पद को पढ़ते हुए आपको विद्यापति की शिवस्तुति का भी स्मरण होगा। पद संख्या 20, भी प्रबोध पचासा का ही एक छोटा सा अंश है। इसमें कवि ने भगवान राम का स्मरण किया है। पद संख्या 21 रलि पचीसी से उद्धृत है। पद में कवि ने सांसारिक वस्तुओं (भौतिक वस्तुओं) की नश्वरता की चर्चा करते हुए भक्ति की महत्तर को प्रतिपादित किया है। पद संख्या 23 'गंगालहरी' से लिया गया है। इसमें कवि ने 'गंगा' के माहात्म्य का वर्णन करते हुए उनकी स्तुति की है। इस पद में कवि ने गंगा की स्थिति का संदर्भ उपस्थित किया है। गंगा, शिव के जटाजूट पर चंद्रमा के साथ विराजमान हैं। कवि ने इसी स्थिति वर्णन किया है।

पद्माकर का काव्य

नायिका भेद

जाहिरै[1] जागत सी जमुना जब बूड़े बह उमहै[2] वह बैनी[3]।
त्यों पद्माकर हीर के हारन गंग तरंगन को सुखदैनी[4]।
पाइन के रंगसों रंगि जात सी भांति ही भांति सरस्वति सैनी[5]।
पैरै जहांई जहाँ ब्रजबाल तहां तहां ताल में होत त्रिबैनी[6]।। ।।1।।

नायिका का अनुपम सौंदर्य

सुंदर सुरंग नैन शोभित अनंगरंग[7]
अंग अंग फैलत तरंग परिमल[8] के।
वारन के भार सुकुमार को लचरा लंक[9]
राजै परजंक[10] पर भीतर महल के।
कहै पद्माकर बिलोकि जन रीझैं जाहि
अंबर अमल[11] के सकल जल थल के।
कोमल कमल के गुलाबन[12] के दल[13] के
सु जात गढ़ि पाहन बिछौना[14] मखमल[15] के।। 2।।

नेत्रों की सुंदरता

सिपर-सुपूतरी[16] कृपान कल-कज्जल[17] त्यों
दल बरूनीन[18] के छबीले छैल छाजे हैं।
कहै पदमाकर न जानी जाति कौन पै धौं।
भौंहन के धनुष चितौन सर[19] साजे हैं।
घेरदार[20] घूँघट घटा के छौंहगीर[21] तरें
मदन वजीर[22] के लिये ही मंजु मांजे हैं।
बखत बुलंद मुखचंद के तखत पर
चारू[23] चख[24] चंचल चकता है बिराजे हैं।। 3।।

---

1. स्पष्ट 2. उफान 3. चोटी 4. सुख देने वाली (सुखी करने वाली) 5. समान 6. त्रिवेणी (गंगा, यमुना और सरस्वती का एक साथ होना 7. कामरंग 8. सुगंधि 9. कमर, 10. पलंग (दीवान) 11. निर्मल 12. गुलाबों 13. पत्ते 14. बिस्तरा 15. वस्त्र की एक विशेष कोटि (अत्यंत मुलायम वस्त्र) 16. सुंदर पुतली 17. काजल से काली 18. पलकें 19. चितवन रूपी बाण 20. घेरायुक्त 21. छायादार 22. कामदेव रूपी वजीर 23. सुंदर 24. नेत्र

कैधौं रूप रासि मैं सिंगाररस[25] अंकुरित
संकुरित कैधौं तम तड़ित[26] जुन्हाई[27] मैं।
कहै पदमाकर त्यों किधौं काम[28] कारीगर
नुकता[29] दियो है हेम फरद[30] सुहाई में।
कैधों अरबिंद में मलिंद सुत[31] सोयो आनि
ऐसो तिल सोहत कपोल की लुनाई में।
कैधों परचो इंदु में कलिंदि-जल-बिंदु[32] आइ
गरक गुबिंद किधौं गोरी की गोराई में।। 4।।

तिल का वर्णन

कोऊ कहूँ काहू बैन[33] बूझत[34] कछू धौं यह
आई धौं कहाँ तें जाई कौन से अहीर की।
कहै पदमाकर त्यों उरज[35] उतगन[36] पै
तंग अँगिया है तनी ताफताई[37] चीर[38] की।
बैजनी[39] दुकूल[40] पग पैंजनी[41] परी है तहाँ
द्वै जनी निबारैं घटा भौरेन की भीर[42] की।
दौरै क्यों न देखन दुनी लौं नंदनंद दति
देखिये ही माफक[43] है माफक[44] सरीर की।। 5।।

सौंदर्य वर्णन

नायिका के अंगो की आभा

को है यह कामिनी[45]कलिंदी कूल[46]कुंजन में
आई है बिलोकन बहार फुलवाई की।
कहै पदमाकर त्यों छुवत छवान बैनी
लाँबी[46] लीक ऐसी लसै ललित लुनाई[47] की।
आसपास आनन[48] के फबन[49] फबी है कैसी
कुंचित कुसुंभी[50] कोरदार इकलाई की।
मंजु[51] महँदी[52] की छबि छज्जत छटा तें छूटि
छहर छहर उठै लहर लुनाई की।। 6।।

---

25. शृंगार रस 25. बिजली 27. चाँदनी 28. कामदेव 29. बिंदी (छोटी सी) 30. बर्फीली चादर 31. छोटा भंवरा 32. यमुना के जल की बूंद (यमुना काली मानी जाती हैं। उनका जल भी काला होगा। इसीलिए सुंदरी के तिल के लिए यह सादृश्य दिया गया है।), 33. वचन, वाणी 34. समझता है, 35. उरोज, स्तन 36. ऊँचे, उत्तुंग 37. ताफता (कपड़ों की एक विशेष किस्म जो बहुत कीमती और सुंदर मानी जाती रही है) 38. वस्त्र 39. बैंगनी 40. वस्त्र 41. पायल (पाँवों का आभूषण) 42. भीड़ 43. माफिक, उचित, उपयोगी 44. सुंदरता (यहां माफक को दो अर्थों में प्रयुक्त किया गया है) 45. सुंदर स्त्री 46. किनारे, 46. लंबी 47. लावण्य 48. मुख 49. शोभा 50. लाल, गाढ़ा केसरिया 51. सुंदर 52. मेहंदी

घूँघट घटान छिन छबि की छटा सी छिति
ऊपर बिलोकिबे कौं मुकर[53] मँजाइ लै।
कहै पदमाकर सुधाकरमुखी[54] है गुन-
गात गरबीलिन[55] के गरब[56] गँजाइ लै।
साँझ ही तौ सखिन समेटि करि बैठी कहा
भेट करि पी[57] सों परि पैंठ सी भँजाइ लै।
अंजनबरन[58] मनरंजन[59] गुपाल कों तूँ
खंजन[60] सी आँखिन में अंजन[61] लगाइ लै।। 7।।

नायिका का सौंदर्य

चैत की चांदनी में चहुंचा चलि चाइन चंद सी वै रही वे रही।
त्यों पद्माकर बिज्जुछटा[62] छबि कैसी छटा छित छवै रही छ्वै रही।
वा मनिमंदिर[63] के अंगना में ब्रजंगना[64] यों कछु है रही है रही।
चातुरई[65] चतुरानन[66] की मनो चांदनीचौक में च्वै रही च्वै रही।। ।। 8।।

नायिका की सुंदरता

गोकुल के कुल के गली के गोप गाउन[67] के,
जौ लगि कछू को कछू भारत भनैं नहीं।
कहै पद्माकर परोस[68] पिछवारन[69] के,
द्वारन[70] के दौरि गुन औगुन गनैं नहीं।
तौ लौं चलि चातुर सहेली याहि कोऊ कहूं,
नी के कै निचोरै[71] ताहि करत मनै नहीं[72]।
हौं तौ स्याम रंग में चुराई[73] चित चोराबोर,
बोरत[74] तौ बोर्‌यो पै निचोरत[75] बनै नहीं।। 9।।

होली का दृश्य

---

53. दर्पण 54. चंद्रमुखी 55. गर्वीलियों के (गर्व करने वाली स्त्रियां) 56. गर्व 57. प्रिय 58. काजल के रंग सी 59. मन को रंजित करने वाली 60. खंजन (पक्षी) 61. अंजन (आँखों में लगाया जाने वाली एक प्रसाधन सामग्री) 62. बिजली की छटा, 63. मणिमंदिर 64. ब्रजनारियां, ब्रज सुंदरियों 65. चतुराई 66 चार मुख वाले अर्थात ब्रहमा की सी, 67. गाँव के 68. पड़ोस 69. पिछवाड़े के 70. द्वार के 71. निचोड़ती है, 72. मना नहीं करती 73. चुरा लिया है 74. डुबाया 75. निचोड़ते

NMDC-067

वसंत ऋतु

कूलन में केलि[76] में कछारन[77] में कुंजन में,
क्यारिन में कलित[78] कलीन[79] किलकंत[80] है।
कहै पद्माकर परागन में पौनहू[81] में,
पातन[82] में पिक में पलासन[83] पगंत[84] है।
द्वारे में दिसान[85] में दुनी में देस देसन में,
देखौ दीपदी पन में दीपत दिगंत है।
बीथिन[86] में ब्रज में नवेलिन[87] में बेलिन में,
बनन[88] में बागन में बगर्‌यो[89] बसंत है। ।। 10 ।।

पात बिन कीन्हे ऐसी भांति गन बेलिन के,
परत न चीन्हे जेये लरजत लुंज हैं।
कहै पद्माकर बिसासी[90] या बसंत के,
सु ऐसे उतपात गात[91] गोपिन के भुंज हैं।
ऊधो यह सूधो[92] सो संदेसो कहि दीजो भले,
हरि सों हमारो ह्यां न फूले बनकुंज[93] हैं।
किंसुक[94] गुलाब कचनार[95] और अनारन की,
डारन पै डोलत अंगारन[96] के पुंज हैं। ।। 11 ।।

होली वर्णन

फागु के भीरे[97] अभीरन[98] तें गहि[99] गोबिंद लै गई भीतर गोरी।
भाई[100] करी मन की पद्माकर ऊपर नाई अबीर की झोरी[101] ।
छीन पितंबर कंमर[102] तें सु बिदा दई मीड़ि[103] कपोलन रोरी[104] ।
नैन नचाइ कह्यो मुसकाइ भला फिरि आइयौ खेलन होरी। ।। 12 ।।

---

76. काम क्रीडा 77. किनारे 78. जड़े हुए, 79. कलियां 80. किलकारी मारता है 81. पवन अर्थात् वायु में भी (वायु में भी) 82. पत्तों में, 83. पलाश के फूल 84. पगा हुआ है 85. दिशाओं में 86. गलियों में छोटी छोटी वीथियों अर्थात् गलियों से, 87. नई-नई 88. वनों में, 89. फैला हुआ है, 90. विश्वासघाती 91. शरीर, 92. सीधा, सरल, 93. वन की कुंज गलियों में, 94. किंशुक (फूल) 95. कचनार के पेड़ और फूल 96. अंगारों के (जलती हुई लकड़ी के टुकड़े) 97. भीड़भाड़ 98. अभीर जाति की 99. पकड़कर 100. जा अच्छा लगा या मन में आया (मनचाही) 101. झोली, 102. कमर, 103. मसलकर (मलकर), 104. रोली,

NMDC-067

आई खेलि होरी घरैं नवलकिशोरी कहू,
बोरि गई रंग में सुगंधन झकोरै है।
कहै पद्माकर इकंत चलि चौकी चढ़ी
हारन के बारन के फंद बंद छोरै है।
घांघरे[105] की घूमन सु ऊरून[106] दुबीचै[107] पारि,
आंगीहू उतारि सुकुमारि मुख मोरै हैं।
दंतनि अधर दाबि दूनर भई सी चापि,
चौअर पचौअर[108] कै चूनर निचौरै है। ।। 13।।

होली वर्णन

गैल[109] मैं गाइकै गारी दई फिरि तारी दई औ दई पिचकारी।
त्यौं पदमाकर मेलि मुठी इत पाइ अकेली करी अधिकारी।
सौं हूं बबा की करे हौं कहां यहि फाग को लेहुँगी[110] दाँव बिहारी।
का कबहूं मझि आइहो ना तुम नंदकिसोर या खोर[111] हमारी। ।। 14।।

होली वर्णन

फहर गई धौं कबै रंग के फुहारन[112] में
कैधौं तराबोर[113] भई अतर-अपीच में।
कहै पदमाकर चुभी सी चौर चोवन में
उलचि गई धौं कहूँ अगर-उलीच में।
हाय इन नैनन तें निकरि हमारी लाज
कित धौं हेरानी[114] हुरिहारन[115] के बीच में।
उरझि[116] गई धौं कहूँ उड़त अबीर रंग
कचरि गई धौं कहूँ केसरि की कींच[117] में। ।। 15।।

होली वर्णन

---

105. घाघरा 106. जंघा 107. दोनों के बीच 108. चार परत, पांच परत 109. साथ 110. लूंगी 111. गली, 112. फुहारों (में) 113. सराबोर (आकंठ डूबे हुए के अर्थ में) 114. ढूंढू 115. सुंदर हारों के 116. उलझ 117. कीचड़

NMDC-067

रंगभरी कंचुकी उरोजन पै ताँगी[118] कसी
लागी भली भाई सी सुजान कखियन मैं।
कहै पदमाकर जवाहिर से अंगअंग
ईंगुर से रंग की तरंग नखियन मैं।
फाग की उमंग अनुराग की तरंग बैसी
तैसी छबि प्यारी की बिलोकी सखियन मैं।
केसरि कपोलन मैं मुख मैं तमोल[119] भरि
भाल[120] मैं गुलाल नंदलाल अँखियन मैं। ।। 16 ।।

होली वर्णन

तीखे तेगबाही[121] औ सिलाही[122] चढ़े घोड़न पै
स्याही चढ़ै अमित अरिंदन[123] की ऐल[124] पै।
कहै पद्माकर निसान चढ़ै हाथिन पै
धूरिधार चढ़ै पाकसासन[125] के सैल[126] पै।
साजि चतुरंग[127] चमू[128] जंग जीतिबे[129] के लिये,
हिम्मतबहादुर चढ़ो जो फर फैल पै।
लाली चढ़ै मुख मै बहाली चढ़ै बाहन[130] पै
काली चढ़ै सिंह पै कपाली चढ़ै बैल पै। ।। 17 ।।

वीर रस

प्रबल प्रताप[131] नरिंद[132] सेन[133] सज्जत[134] मलगज्जत[135]।
भज्जत[136] अरिबर[137] वृंद[138] वृंद मंदिर निज तज्जत[139]
धुंध्र[140] उठत दस दिसन[141] हगन लखि[142] परत न जलथल[143]।
महिमंडल हलहलत परत परपुरन[144] सु खलभल।
तहँ पदमाकर कबि बरनि इमि हय गय धन लख्खन लहत।
नित[145] निरभय[146] हुव[147] परजा[148] सकल[149] जयति[150] जयति जगजन[151] कहत। ।। 18 ।।

सेना का वर्णन

---

118. धुस्त, तंग 119. पान, तांबूल, 120. माथा 121. तलवार धारी 122. सिपाही 123. अरि दल, शत्रु दल 124. सेना 125. इन्द्र 126. पहाड़, पर्वत, 127. चार प्रकार की सेना पैदल, हाथी, घोड़े रथ 128. सेना 129. जीतने (के लिए), 130. वाहन, सवारी, 131. पराक्रम 132. राजा 133. सेना 134. साजकर 135. युद्ध की गर्जना 136. भागते हैं 137. शत्रुओं (के) 138. समूह 139. त्यागकर 140. धुँआ 141. दिशाओं (में) 142. दिखाई 143. जल और स्थल 144. शत्रु के नगर में 145. नित्य, हमेशा 146. निर्भय 147. होकर 148. प्रजा 149. संपूर्ण 150. जय हो 151. सब लोग

NMDC-067

देव नर किन्नर कितेक[152] गुन गावत पै,
पावत न पार[153] जा अनंत[154] गुनपूरे[155] को।
कहै पद्माकर सु गाल के बजावत ही,
काज[156] करि देत जन जाचक[157] जरूरे[158] को।
चंद की छटान[159] जुत पन्नग[160] फटान जुत,
मुकुट बिराजै जटाजूटन[161] के जूरे[162] को।
देखौं त्रिपरारि[163] की उदारता अपार जहां,
पैये फल[164] चारि[165] फूल एक दै धतूरे को।।। 19।।

राजा का गुणमान

या जग जानकीजीवन[166] को जस[167] क्यौं इक आनन गाइ अघैये[168]।
त्यौं पदमाकर मारग[169] हैं बहु द्वै पद पाइ किते किते जैये[170]।
नाम अनंत अनंत कहैं ते कहे न परै कहि काहि जतैये।
सम की रूरी[171] कथा सुनिबे कौं करोरन[172] कान कहौ कहाँ पैये।।। 20।।

भगवान राम का स्मरण

कफ वात पित मल मूत हाड़ नस मास रूधिर जहँ छाया है।
ये ऐसो निद्य[173] रूप नारिन को तिन सों प्रेम पगाया[174] है।
सुभ सुंदर स्याम सरोरूह[175] लोचन राम न मन मैं आया है।
अब बचत बिचार कहै पदमाकर यह ईश्वर की माया है।।। 21।।

सांसारिक वस्तुओं की नश्वरता

---

152. *कितने ही* 153. *छोर (सीमा)* 154. *जिसका अंत नहीं है* 155. *पूरे गुणों वाले, सर्वगुणी के* 156. *काम (मनोरथ)* 157. *याचक* 158. *जरूरतमंद* 159. *छटाओं* 160. *फन वाले नाग* 161. *जटाजूट* 162. *जूड़ा* 163. *त्रिपुर नामक असुर को मारने वाले शिव* 164. *पुरुषार्थ (कर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)* 165. *चार,* 166. *श्रीराम* 167. *यश, ख्याति* 168. *तृप्त होना,* 169. *मार्ग, रास्ता* 170. *जाएं* 171. *पुरा, पुरानी* 172. *करोड़ों* 173. *निंदनीय,* 174. *किया हुआ है* 175. *कमल,*

बई ती बिरंचि[176] भई बामनपगन[177] पर — गंगा वर्णन
फैलि फैलि फिरि ईससीस[178] पै सुगथ[179] की।
आइकै जहान[180] जन्हुजंघा[181] लपटाइ[182] फिरि
दीनन[183] के दीन्हे दौरि कीन्हे तीनि पथ कीं। — गंगा स्तुति
कहै पदमाकर सु महिमा कहाँ लौं कहौं
गंगा नाम पायो सही सबके अरथ[184] की।
चारचो फल फली फूली गहगही बहबही
लहलही कीरतिलता[185] हैं भगीरथ[186] की। ।। 22।।

कूरम[187] पै कोल[188] कोलहू पै सेष[189] कुंडली है
कुंडली पै फबी[190] फैल सुफन हजार की। — गंगा वर्णन
कहै पदमाकर त्यौं फन पै फबी है भूमि
भूमि पै फबी है स्थिति[191] रजतपहार[192] की।
रजतपहार पर संभु[193] सुरनायक हैं
संभु पर जोति[194] जटाजूट सु अपार की।
संभु जटाजुट पर चंद की छुटी है छटा
चंद की छटान पै छटा है गंगाधार की। ।। 23।।

---

176. ब्रह्मा 177. वामन अवतार वाले विष्णु के पगों को धोकर निकली 178. शंकर के सिर (पर) 179. सुन्दर गाथा 180. संसार, धरती, 181. जन्हु नाम के ऋषि की जाँघ (गंगा जन्हु की जाँघ से निकली हैं इसी से उनका एक नाम जान्हवी भी है) 182. लिपटकर, 183. दीनों, गरीबों 184. अर्थ (काम, उपयोग, लाभ) 185. कीर्तिलता 186. राजा भागीरथ (गंगा को स्वर्ण से धरती पर लाने का श्रेय इन्हीं को है गंगा का एक नाम भागीरथी भी है), 187. कच्छप, कूर्म 188. वराह (सूअर) 189. शेषनाग 190. सुशोभित है, 191. स्थित है, 192. चांदी का पहाड़ अर्थात बर्फ से ढका कैलाश पर्वत 193. शिव, 194. ज्योति

जोगहू में भोग में बियोग में सँजोगहू में

रोगहू में रस में न नेकौ बिसराइये।

कहै पदमाकर पुरी में पुन्यसैलन[195] में

फैलन में फैल फैल गैलन[196] में गाइये।

बैरिन में बंधु में बिथा[197] में बेसबालन[198] में

बन में बिषै में रन्हू[199] में जहाँ जाइये।

सोचहू में सुख में सुरी में साहिबा[200] में कहूँ

गंगा गंगा गंगा कहि जनम बिताइये। ।।24।।

गंगा वर्णन

कहै पदमाकर न हंस में न हासहू[201] में

हिम में न हेरि हारो हीरन के बृंद में।

जेती छबि गंग की तरंगन में ताक्रियक

तेती छबि छीर में न छीरधि[202] के छंद

चैत में न चैतचाँदनीहूँ में चमेली में न

चंदन में है न चंदमूड़ में न चंद में। ।।25।।

गंगा वर्णन

195. पुण्य पर्वतों में 196. मैदानी गलियों में, गलियारों में 197. व्यथा, कष्ट, 198. वेश्याओं के मध्य रहकर भी 1990. युद्ध में भी 200. सुख और ऐश्वर्य में भी 201. हँसी में भी 202. क्षीर सागर ।

NMDC-067

NOTE

NMDC-067